मङ्गलायतन विश्वविद्यालय

MANGALAYATAN
UNIVERSITY

Learn Today to Lead Tomorrow

Knowledge Organisation Classification (Theory)

BLO-1102

Edited By

Dr. Deepmala

DIRECTORATE OF DISTANCE AND ONLINE EDUCATION

MANGALAYATAN UNIVERSITY

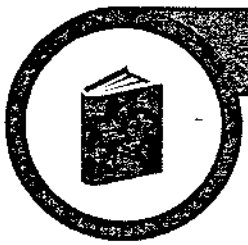

(BLIS—104)

Knowledge Organization : Classification (Theory)

Syllabus

Unit 1 : Universe of Knowledge

- Universe of Knowledge: Nature, Attributes
- Subject: Meaning, Types (Basic, Compound, Complex)
- Modes of Subject Formation
- Universe of Knowledge as Mapped in Different Classification Schemes (DDC, UDC, CC, LCC)

Unit 2 : Library Classification

- Concept, Purpose, Functions
- Canons and Postulates
- Knowledge Classification and Book Classification
- Notation: Meaning, Need, Functions, Types, Qualities, Call number

Unit 3 : Classification Schemes

- Species of Library Classification Schemes
- Dewey Decimal Classification (DDC)
- Colon Classification (CC); Universal Decimal Classification (UDC)
- Library of Congress Classification (LCC)

Unit 4 : Current Trends

- Simple Knowledge Organization Systems (SKOS)
- Automatic Classification, Web Dewey
- Taxonomies
- Folksonomies

CONTENT

1. ज्ञान जगत
   (Universe of Knowledge) ...05
2. पुस्तकालय वर्गीकरण
   (Library Classification) ...43
3. वर्गीकरण पद्धति
   (Classification Schemes) ...81
4. पुस्तकालय वर्गीकरण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ
   (Current Trends in Library Classification) ...97

UNIT 1

ज्ञान जगत
Universe of Knowledge

1.1 प्रस्तावना Introduction

वास्तव में पृथ्वी पर मनुष्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ही ज्ञान का इतिहास है। ज्ञान व मनुष्य एक-दूसरे के पूरक हैं। मनुष्य के बिना ज्ञान का मूल्य नहीं है। मनुष्य ज्ञानार्जन करता है अर्थात् ज्ञान प्राप्त करता है इसलिए वह जीवों में सर्वश्रेष्ठ है। मनुष्य द्वारा प्राप्त किए गए समस्त मूलभसत्य, तथ्य, सिद्धान्त व विश्वास एकत्रित रूप में ज्ञान कहलाते हैं। मनुष्य स्वभाव से ही जिज्ञासु है। वह सदैव नवीन विचारों एवं तथ्यों से अवगत होकर उन पर विवेकपूर्ण चिन्तन करता है। यह मानव विवेक का ही प्रतिफल है कि आज सम्पूर्ण एकत्रित सूचना, ज्ञान के रूप में ज्ञात है। मानव की चिन्तनशील जिज्ञासा, सीखने की प्रवृत्ति, ज्ञान का संग्रह एवं संगठन तथा प्रचार आदि गुण मनुष्य को अन्य जीवों से पृथक् करते हैं। अनुभूति, बोध, अनुभव, तर्क आदि के द्वारा ही मनुष्य में ज्ञान की उत्पत्ति होती है। जब मनुष्य अर्थात् जिज्ञासु, वस्तु एवं विचारों अर्थात् ज्ञातव्य से परिचित हो जाता है तो ज्ञान की उत्पत्ति होती है। जिज्ञासु के बिना ज्ञान की कल्पना निरर्थक है। अत: ज्ञान के व्यापक क्षेत्र में सभी ज्ञात तथ्यों, जिज्ञासाओं और जानने की सभी प्रक्रियाओं को रखा जाता है। जब मनुष्य किसी वस्तु अथवा विचार को स्वीकार कर लेता है तब यह कहा जाता है कि ज्ञान का सृजन हुआ है।

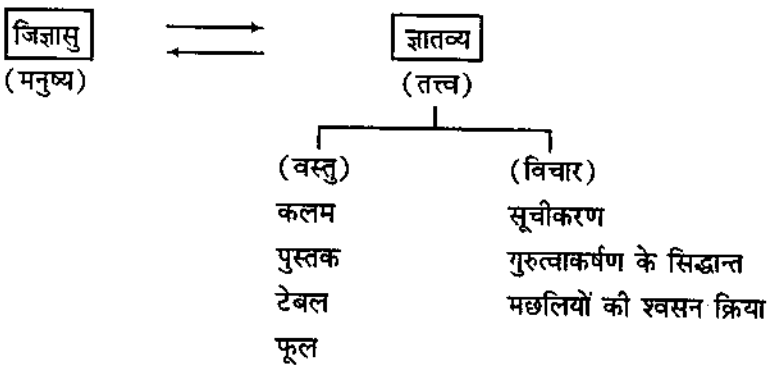

"प्राथमिक अनुभूति" जानने की सबसे सरल प्रक्रिया है अर्थात् ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ज्ञातव्य का परिचय कराना। प्रतिदिन नवीन तथ्यों से परिचित होने पर मनुष्य के ज्ञान में वृद्धि होती जाती है।

मनुष्य संवेदनात्मक अनुभवों के द्वारा ज्ञान प्राप्त करता है। ये संवेदनात्मक अनुभव मनुष्य को ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त होते हैं। मनुष्य के पास पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं जिनकी सहायता से वह बाहरी दुनिया की जानकारी प्राप्त कर सकता है। मानव में देखने की शक्ति, सुनने की शक्ति, सूँघने की शक्ति, स्पर्श करने की शक्ति व स्वाद की क्षमता होती है। इन शक्तियों से सम्बन्धित अंग क्रमश: आँख, कान, नाक, त्वचा व जिव्हा

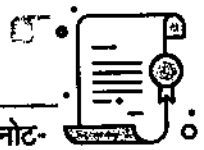

नोट-

होते हैं। इन अंगों के माध्यम से मनुष्य संवेदनात्मक अनुभव प्राप्त करता है, जो मस्तिष्क में संग्रहीत होते चले जाते हैं, जबकि प्राथमिक अनुभूति में तर्क का समावेश हो जाता है अर्थात् जब मनुष्य प्रयोगों एवं विश्लेषण के आधार पर किसी विचार का अध्ययन कर निष्कर्ष पर पहुँचता है तब इसे सुव्यवस्थित ज्ञान कहते हैं।

भविष्य के लिए एकत्रित एवं सुरक्षित सम्पूर्ण सूचना ही ज्ञान है। मनुष्य एक बुद्धिमान प्राणी है। मनुष्य में सोचने, समझने एवं तर्क करने की क्षमता होती है इसलिए ज्ञान मनुष्य की बौद्धिक प्राप्ति है। ज्ञान मानव मस्तिष्क की ही देन है। मस्तिष्क ज्ञान को सृजित करने का प्रमुख अंग है। ज्ञान संवेदनशील एवं प्रेरक दोनों प्रकार का होता है। मस्तिष्क मानव जीवन के समस्त अनुभवों को अंकित करता है तथा आवश्यकतानुसार उनका स्मरण भी करता है। मस्तिष्क जीवन के विभिन्न प्रभावों को निद्रित रूप से ग्रहण करने के साथ ही साथ उन नवीन तथ्यों को भी जन्म देता है जो पूर्व में कहीं भी विद्यमान नहीं हैं। मानव मस्तिष्क में कम्प्यूटर की भाँति असंख्य सूचनाएँ संग्रहीत रहती हैं। दैनिक जीवन के अनुभव भी मस्तिष्क में सुरक्षित हो जाते हैं। इन समस्त सूचनाओं का स्वत: ही वर्गीकरण और अनुक्रमणीकरण हो जाता है। इस सूचना संग्रह से वांछित व आवश्यक सूचना की पुनर्प्राप्ति भी सम्भव है। मानव मस्तिष्क संदेशों का प्राप्तकर्त्ता और भण्डारगृह है।

मनुष्य सदैव विचारशील रहकर नवीन विचारों को जन्म देता है जिससे ज्ञान भी द्रुतगति से वृद्धि करता जाता है। इस प्रकार बौद्धिक शक्ति पर आधारित ज्ञान की प्रतिक्षण वृद्धि के साथ-साथ विश्व भी प्रत्येक क्षण अत्यधिक आधुनिक एवं सुविधापूर्ण होता जा रहा है। क्योंकि मनुष्य ज्ञान का सृजन, संग्रह एवं संरक्षण कर ज्ञान का अनुप्रयोग करता है ताकि आधुनिक सामाजिक जीवन को अधिक उन्नत व सुविधापूर्ण बनाया जा सके।

1.2 ज्ञान जगत Universe of Knowledge

जगत अथवा संसार में ज्ञात व अज्ञात दोनों का ही समावेश होता है। जगत का वह भाग जो मनुष्य को ज्ञात है, "ज्ञान जगत" कहलाता है।

एक निश्चित समय तक संग्रहीत समस्त विचारों का समग्र रूप ही जगत है। ज्ञान जगत मानवीय विचारों, मानवीय आवश्यकताओं और मानव उपलब्धियों का ही प्रतिफल है।

मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं के समाधान की खोज अनुसंधान द्वारा की जाती है तथा ज्ञान जगत के द्वारा अनुसंधान कार्य हेतु आधारभूत सामग्री उपलब्ध हो जाती है। पूर्व ज्ञान अथवा भूतकाल के आधार पर मनुष्य वर्तमान परिस्थितियों का अध्ययन करता है एवं भविष्य में निर्मित होने वाली परिस्थितियों का अनुमान करता है।

1.3 ज्ञान जगत के उद्देश्य Objectives of Universe of Knowledge

ज्ञान जगत का उद्देश्य ज्ञान के सृजन में सहायक होना तथा ज्ञान के अनुप्रयोग से आधुनिक सामाजिक जीवन को अधिक उत्तम बनाने के बेहतर विकल्पों की खोज में सहायता करना है। इस प्रकार ज्ञान राष्ट्रीय विकास का एक अनिवार्य स्रोत है। राष्ट्र की सामाजिक व आर्थिक प्रगति का प्राण बिन्दु भी ज्ञान ही है। अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति के फलस्वरूप मानव अज्ञात तथ्यों को जानकर अपने ज्ञान भण्डार की वृद्धि करता है जिससे उसके मानसिक स्तर में भी वृद्धि होती है। समूचा ज्ञान मानव की अनुभूति, बुद्धि व अन्तर ज्ञान की देन है जिसके आधार पर मनुष्य द्वारा फलदायी निर्णय लिए जा सकते हैं एवं उचित समाधानों की खोज की जा सकती है।

नोट-

पद्धति का निर्माण तथा पूर्व से ही विद्यमान वर्गीकरण पद्धति का सुधार किया जा सकता है। इसी प्रकार, वर्गाकार भी ज्ञान जगत की विशेषताओं से परिचित होने पर एक उत्तम वर्गीकरण पद्धति का चयन कर सकता है तथा आवश्यकतानुसार वर्तमान पद्धति में भी रूपान्तरण करने में सक्षमता प्राप्त कर सकता है। हम इन विशेषताओं का विस्तारपूर्वक अध्ययन निम्नानुसार करेंगे।

1.4.1 गतिशील (Dynamic)

मनुष्य के चिन्तनशील से विचार जन्म लेते हैं। चिन्तन एक असीमित व निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो निरन्तर विचारों को जन्म देती है। इन विचारों का विकसित स्वरूप विषय है और समस्त विषयों को समग्र रूप में ज्ञान कहते हैं अर्थात् ज्ञान को 'विचार जगत' भी कहा जा सकता है। ज्ञान विचारों का गुणनफल है। विषय, ज्ञान का ही एक भाग है जिसमें समान सुव्यवस्थित विचार रखे जाते हैं जिनकी सीमा, क्षेत्र, विस्तार व गहनता भी सुनिश्चित होती है। विषय जगत के निरन्तर विकास व गतिशीलता के फलस्वरूप सूक्ष्म एवं नवीन विचार उत्पन्न होते रहते हैं। ये सूक्ष्म विचार बाद में वृहद् विचारों का रूप ले लेते हैं। अत: सूक्ष्म व वृहद् विचारों से मिलकर विषय जगत तथा प्रायोगिक और सैद्धान्तिक विषयों से मिलकर ज्ञान जगत की रचना होती है।

प्रत्येक मौलिक विचार एक नए विचार को जन्म देता है। मानव जीवन की समस्याओं के समाधान की खोज हेतु किए जाने वाले अनुसंधान कार्यों का परिणाम भी नवीन विचारों में वृद्धि करता है। नवीन विचारों के विकास की गति अत्यन्त तीव्र होने के कारण ज्ञान का विकास भी तीव्र गति से हो रहा है। जनसंख्या दबाव के फलस्वरूप प्राकृतिक स्त्रोतों का विकल्प शोध कार्य से खोजा जा रहा है। नित नई सामाजिक समस्याएँ शोध कार्य को गति प्रदान कर रही हैं। इस प्रकार, सम्पूर्ण ज्ञान जगत अत्यन्त गतिशील होकर निरन्तर वृद्धि कर रहा है। मानव जीवन को आरामदायक बनाने के उद्देश्य से नवीन आविष्कारों में भी तीव्र गति से वृद्धि हो रही है।

शोधकार्य में वृद्धि के साथ-साथ शोधकर्त्ताओं की भी बाढ़ सी आ गई है। आज विश्व के अधिकांश देशों में लाखों व्यक्ति शोधकार्य में व्यस्त हैं। तीव्र गति से चल रहे अनुसंधानों के परिणाम प्रकाशित होने के साथ-साथ प्रकाशित साहित्य में भी तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। साहित्य का विस्फोट हो गया है। साहित्य विभिन्न भाषाओं, विभिन्न विषयों और विभिन्न स्वरूपों में तीव्र गति से प्रकाशित हो रहा है। आज किसी भी उपयोगकर्त्ता के लिए यह असम्भव है कि वह अपने विषय क्षेत्र में प्रकाशित साहित्य का ही पूर्ण अध्ययन कर ले। ऐसे में उसके पास इस ज्ञान के अनुप्रयोग के लिए तो समय ही नहीं होगा।

इन सभी तथ्यों से यह स्पष्ट है कि ज्ञान अत्यन्त गतिशील है, शक्तिमान है, विलुप्तकारी है और ज्ञान के नवीन तथ्यों का तेजी से उत्पादन करने में सक्षम है। विचारों की तीव्र गति के कारण आज ज्ञान का विस्फोट हो गया है। ज्ञान की निरन्तर वृद्धि के कारण प्रकाशित साहित्य की भी बाढ़ सी आ गई है। सामाजिक दबाव व जनसंख्या दबाव के कारण शोधकार्य भी आत्मनिष्ठ व व्यक्ति सापेक्ष नहीं रह गया है। आज मौलिक शोध की अपेक्षा व्यावहारिक शोध अधिक हो रही है एवं शीघ्र परिणामों की प्राप्ति हेतु तीन-चार शोधकर्त्ता मिलकर दलीय शोध (Team Research) कर रहे हैं। समस्याओं के त्वरित समाधान हेतु आविष्कारों में भी वृद्धि हुई है। आज की शोध बुद्धिमान, प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा की जाने वाली मौलिक शोध न होकर विकासात्मक शोध का रूप ले चुकी है। आज साहित्य विभिन्न विषयों, विभिन्न भाषाओं और विभिन्न स्वरूपों में प्रकाशित हो रहा है। आज किसी शोधकर्त्ता द्वारा मात्र अपने ही विषय में प्रकाशित सामग्री का अवलोकन कर पाना भी कठिन हो गया है अर्थात् जगत की गतिशीलता के फलस्वरूप ज्ञान जगत अत्यन्त शक्तिमान हो गया है।

नोट-

1.4.2 अनन्त (Infinite)

ज्ञान वास्तव में ज्ञात और अज्ञात का एकात्मक स्वरूप है। मनुष्य सदैव ही नवीन विचारों के सम्पर्क में रहता है। इन नवीन विचारों के विकास के साथ-साथ ज्ञान भी विकसित होता चला जाता है। मनुष्य की चिन्तन क्षमता, विचारशीलता, कल्पनाशीलता अनन्त है जो सृष्टि में छिपे अनन्त तथ्यों की खोज करती रहती है। विचारों का कोई अन्त नहीं है इसलिए इतने का भी कोई अन्त नहीं है अर्थात् ज्ञान अनन्त है। जो कुछ आज अज्ञान है, वह धीरे-धीरे भविष्य में ज्ञात हो जाएगा। आज ज्ञान एक सूक्ष्म विचार भविष्य में एक वृहद् विषय के रूप में स्थापित हो सकता है। विशेषताओं के आधार पर कोई भी शृंखला अनन्त तक पहुँच सकती है।

उदाहरणार्थ—

ज्ञान जगत
↓
भौतिकी
↓
विद्युत
↓
धारा विद्युत

उपरोक्त शृंखला के समान प्रत्येक शृंखला अंतहीन है। शृंखला के प्रत्येक अगले चरण में विषय का विस्तार कम होकर उसकी गहनता बढ़ जाती है। विषय सूक्ष्म, विशिष्ट और गहन होता चला जाता है। इस प्रकार मनुष्य की आवश्यकता, चिन्तन क्षमता, जिज्ञासु प्रवृत्ति, शोध आदि के द्वारा नवीन विचार हमेशा उदित होते रहेंगे और ज्ञान जगत विस्तारित होता रहेगा।

यह भी निश्चित नहीं है कि मनुष्य किस दिशा में विचार करेगा। मनुष्य प्रतिक्षण विचारशील रहकर किसी भी विचार पर जिज्ञासा वश चिंतन मनन करने लगता है अर्थात् किसी भी क्षण कोई नवीन विचार या विषय जन्म ले सकते हैं अथवा पूर्व स्थापित विचार, सिद्धान्त, नियम में कोई परिवर्तन हो सकता है। ज्ञान की किसी भी शाखा के किसी भी सूक्ष्म विचार को स्वतन्त्र अस्तित्व व पृथक् विषय के रूप में मान्यता प्राप्त हो सकती है अथवा वो विषय अपना मूल अस्तित्व खोकर एकात्मक स्वरूप में नवीन विषय की रचना कर सकते हैं अर्थात् ज्ञान जगत के किसी भी क्षेत्र की वृद्धि अनन्त तक जा सकती है। इसके लिए अनन्त व अनगिनत वर्गों वाली वर्गीकरण पद्धति की आवश्यकता अनुभव की जाती है जिसमें आवश्यकतानुसार कितने ही नवीन वर्गों का सृजन किया जा सके तथा उनका समावेश करने पर पूर्व क्रम भी यथावत रहे तथा सहायक क्रम के उपसूत्र की भी सन्तुष्टि हो सके।

सामाजिक दबाव व जनसंख्या दबाव के कारण कृत्रिम स्रोतों के द्वारा मनुष्य अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के विकल्प शोध के माध्यम से खोजता है। पूर्व में की जाने वाली शोध, मौलिक, आकस्मिक व व्यक्ति सापेक्ष होती थी किन्तु आज की शोध त्वरित परिणाम प्राप्ति के उद्देश्य से की जाने वाली विकासात्मक शोध है जिसके द्वारा उच्च स्तरीय व आरामदायक जीवनयापन के लिए बेहतर विकल्प खोजे जाते हैं। आज भोजन, वस्त्र और आवास की मूलभूत समस्याओं के समाधान हेतु अनेक शोधकार्य किए जा रहे हैं। आविष्कार और अनुप्रयोग का अन्तर कम करने हेतु विभिन्न विशेषज्ञ दलीय शोध कर रहे हैं। समस्याएँ अन्तहीन हैं, इसलिए शोध भी अन्तहीन हैं। इस अन्तहीन चक्र के फलस्वरूप ज्ञान जगत भी अन्तहीन है। ब्रह्माण्ड की कोख में छुपे असंख्य तथ्य, जिज्ञासु मनुष्य द्वारा खोजे जाते रहेंगे और ज्ञान जगत का वर्धन होता रहेगा।

नोट-

1.4.3 निरन्तर (Continuum)

ज्ञान जगत में कुछ क्षेत्र अशोधित रह जाते हैं। इन क्षेत्रों अथवा रिक्तियों को शोध के द्वारा भरा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि विषय की सृष्टि अविरामपूर्ण है। भविष्य में विषयों के मध्य पारस्परिक अन्त:क्रिया से अखोजित नवीन विषयों का निर्माण होता रहता है।

नीचे दिए गए उदाहरण में दो विषयों के मध्य हुई अन्त:क्रिया से अनेक नवीन विषयों का निर्माण हो रहा है। उदाहरणार्थ—

जैविकी + रसायन शास्त्र = जीव रसायन

शिक्षा + मनोविज्ञान = शिक्षा मनोविज्ञान

आज इस प्रकार के अन्तर्विषयी अनुसंधान का प्रचलन बढ़ने से ज्ञान जगत की निरन्तरता बढ़ती जा रही है। सामाजिक समस्याएँ निरन्तर उदित हो रही हैं तथा उनके समाधान की खोज हेतु अनुसंधान कार्य भी सतत् प्रगतिशील है। अनुसंधानों के परिणामों की प्राप्ति से ज्ञान जगत की निरन्तरता, गतिशीलता और विकास भी सतत् है। एक विषय को आधार मानकर दूसरे विषय का अध्ययन किया जा रहा है और नवीन सूक्ष्म विषयों के निरन्तर विकास से ज्ञान जगत भी निरन्तर बन गया है।

जब कोई नवीन उत्पादन होता है तो समाज द्वारा उसका उपयोग किया जाता है। उपयोग के पश्चात् किसी समस्या के ज्ञात होने पर उसका समाधान खोजने हेतु मौलिक शोध, प्रायोगिक शोध तथा विकासात्मक शोध आदि किए जाते हैं एवं उस उत्पादन को और अधिक उन्नत बनाया जाता है। इस प्रकार, समस्याओं का कोई अन्त नहीं है। समस्या के निरन्तर उत्पन्न होने पर शोधकार्य भी निरन्तर चलता जाता है और नवीन सूक्ष्म विषयों का निर्माण भी निरन्तर होता जाता है। एक विषय दूसरे विषय के लिए प्रेरक रूप में कार्य करता है। अन्तर्विषयी अनुसंधान से तथा दो विषयों की अन्तर्क्रिया से ज्ञान जगत एक निरन्तर संरचना के रूप में स्थापित होता चला जा रहा है।

1.4.4 बहुआयामी (Multidimensional)

ज्ञान जगत का एक और गुण यह है कि वह बहुआयामी, अनेक रूप व आकार का होता है अर्थात् इसकी वृद्धि विभिन्न व अनेक दिशाओं में होती है। ज्ञान जगत की वर्धनशीलता, निरन्तरता और गतिशीलता के कारण लगातार उदित हो रहे नवीन विषय एक आयामी, दो आयामी, तीन आयामी, चार आयामी अर्थात् बहुआयामी हो सकते हैं। पुस्तकालयाध्यक्ष को इन बहुआयामी विषयों को एक आयाम देना पड़ता है ताकि सम्बन्धित विषय एक रेखीय क्रम में सामीप्य सम्बन्धों के अनुसार व्यवस्थित हो सकें। इस हेतु सही वर्गांक प्रदान करना आवश्यक है। एक पक्षीय अथवा एक आयामी विषय सरल होते हैं एवं इनके व्यवस्थापन में कठिनाई नही आती किन्तु द्विआयामी, त्रिआयामी, चार आयामी अर्थात् बहुआयामी विषयों को एक आयामी विषयों में रूपान्तरित करना होता है। रंगनाथन महोदय ने बहुआयामी विषयों के लिए पक्ष सूत्र (P) (M) (E) (S) (T) का प्रयोग किया है। इन पाँच मूलभूत श्रेणियों का क्रम अपनाने से किसी भी वर्गांक में पक्षों का क्रम ज्ञात करने में आसानी होती है।

1.4.5 सम्बद्धता अथवा सुसंगतता (Coherence)

नीलमेघन के अनुसार सम्पूर्ण ज्ञान जगत को एक तन्त्र के समान माना गया है। यह तन्त्र अनेक भागों में विभाजित है तथा इन सभी भागों में अन्तर-सम्बन्ध है। इस कारण, यदि ज्ञान जगत के किसी एक भाग में कोई परिवर्तन होता है तो उसका प्रभाव अन्य भागों पर तथा सम्पूर्ण ज्ञान जगत पर पड़ता है, अर्थात् सम्पूर्ण ज्ञान जगत परिवर्तित हो जाता है। ज्ञान जगत के पृथक् भाग होते हुए भी यह संयुक्त है, इसलिए

नोट-

मूल विषय परिवर्तित होने पर सम्पूर्ण विषय में भी परिवर्तन आ जाता है।

उदाहरणार्थ—बाल शिक्षा

इस संयुक्त विषय में यदि मूल विषय 'शिक्षा' का परिवर्तन औषधि अथवा मनोविज्ञान से कर दिया जाए तो विषय पूर्णतया निम्न प्रकार परिवर्तित हो जाता है—

बाल औषधि

1.4.6 स्वाधीनता (Independence)

जब ज्ञान जगत के किसी एक भाग में परिवर्तन होने पर केवल वही भाग प्रभावित हो, अर्थात् एक अवयव में परिवर्तन का प्रभाव अन्य भागों पर न पड़े तो इसे ज्ञान जगत की स्वाधीनता कहा जाता है। उदाहरणार्थ—'समुद्र विज्ञान' विषय के अध्ययन हेतु कई विषयों के सामूहिक अध्ययन द्वारा जानकारी एकत्रित की जाती है, किन्तु 'समुद्र विज्ञान' विषय में हुए परिवर्तनों का प्रभाव सामूहिक अध्ययन में सहायक अन्य विषयों पर नहीं पड़ता है।

1.4.7 प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार एक (Progressive Segregation-Kind I)

जब ज्ञान जगत के सम्बन्धित भाग इस प्रकार पृथक् होते हैं कि पृथक् भाग में हुए परिवर्तन का प्रभाव अन्य भागों पर नहीं पड़ता है, तो इसे प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार एक कहते हैं; अर्थात् जब ज्ञान जगत के भागों में होने वाला परिवर्तन, सम्बन्ध से स्वाधीनता की ओर हो तो इसे प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार एक कहते हैं। उदाहरणस्वरूप 'दर्शन शास्त्र' से पृथक् होकर 'मनोविज्ञान विषय' निर्मित होना सम्बन्ध से स्वाधीनता की विशेषता को दर्शाता है। अतः इसे प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार एक कहेंगे।

1.4.8 प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार दो (Progressive Segregation-Kind II)

यदि ज्ञान जगत का एक भाग विभाजित हो और फिर इस विभाजन के भी पुनः विभाजन हो तो इसे प्रगतिशील पृथक्करण-प्रकार दो कहते हैं। उदाहरण के लिए—भौतिकी (C) का पहले परम्परागत (C) विभाजन (Canonical Division) किया गया है।

Fundamental	C1
Properties of Matter	C2
Sound	C3
Heat	C4
Light, Radiation	C5
Electricity	C6
Magnetism	C7
Cosmic Hypothes	C8

1.4.9 प्रगतिशील व्यवस्थापन (Progressive Systematization)

जब ज्ञान जगत में होने वाला परिवर्तन, स्वाधीनता से सम्बद्धता अथवा सुसंगतता की ओर हो, तो इसे प्रगतिशील व्यवस्थापन कहते हैं। इस विशेषता के फलस्वरूप नवीन विषयों की रचना होती है।

उदाहरणस्वरूप, शिक्षा व मनोविज्ञान दो पृथक् अर्थात् स्वाधीन विषय हैं। इनमें सम्बद्धता स्थापित होने पर 'शिक्षा मनोविज्ञान' विषय निर्मित होता है। स्वाधीनता से सम्बद्धता की ओर परिवर्तन होने के कारण

ज्ञान जगत से मानव के इतिहास की जानकारी प्राप्त हो जाती है। मानव सभ्यता का विकास ही ज्ञान जगत का विकास है। ज्ञान जगत से ही विषय जगत की उत्पत्ति होती है जिसमें विचारों को संगठित और सुव्यवस्थित रूप से संचित किया जाता है ताकि विचारधाराओं और अवधारणाओं को सुव्यवस्थित और क्रमबद्ध स्वरूप प्रदान किया जा सके।

ज्ञान जगत को पुस्तकालयों में संग्रहीत एवं संगठित कर उपयोगकर्त्ताओं को उपलब्ध करवाते हैं, ताकि ज्ञान प्राप्त करने वाला ज्ञान से वंचित न रह जाए। पुस्तकालय सेवाओं की सफलता हेतु पुस्तकालय व्यावसायियों को ज्ञान जगत की संरचना, स्वरूप, विशेषताओं आदि का बेहतर ज्ञान होना अति आवश्यक है।

1.4 ज्ञान जगत की विशेषताएँ Attributes of Universe Knowledge

मनुष्य कुछ निश्चित दिशाओं में विचार कर ज्ञान की प्राप्ति करता है। मनुष्य प्रकृति, स्वयं व समाज का अध्ययन व परीक्षण करता है। मनुष्य द्वारा प्रकृति के अध्ययन से 'प्राकृतिक विज्ञान', स्वयं के अध्ययन से 'मानविकी' तथा समाज के अध्ययन से 'सामाजिक विज्ञान' विषय क्षेत्र विकसित हुए। सभी सुनिश्चित विचारों की सुव्यवस्थित इकाइयाँ अर्थात् विषय मिलकर ही विषय जगत का निर्माण करते हैं।

मनुष्य + प्रकृति = प्राकृतिक विज्ञान, मनुष्य + मनुष्य = मानविकी, मनुष्य + समाज = सामाजिक विज्ञान

जैसे-जैसे विचार जगत में वृद्धि होती है, विषय जगत में भी वृद्धि होती है। अर्थात् ज्ञान जगत एवं विषय जगत एक ही हैं। जब ज्ञान जगत को समान विचारों वाले अवयवों में विभाजित करते हैं तो इसे विषय जगत कहते हैं। सम्पूर्ण विषय जगत अपने समग्र स्वरूप में ज्ञान जगत कहलाता है। ज्ञान अर्थात् समस्त विचार और विषय अर्थात् सुनिश्चित विचारों की एक इकाई है। सुनिश्चित विचारों की विभिन्न इकाइयाँ अर्थात् विषय जगत और विभिन्न इकाइयों का एकात्मक स्वरूप अर्थात् ज्ञान। मनुष्य द्वारा प्राप्त किए गए समस्त मूलभूत सत्य, तथ्य, सिद्धान्त व विश्वास एकत्रित रूप में ज्ञान कहलाते हैं। मनुष्य अपने अनुभवों से सीख लेने वाला बौद्धिक प्राणी है। आज मनुष्य ज्ञानार्जन कर अपनी तर्कशक्ति से सर्वश्रेष्ठ बन गया है। आज मनुष्य ज्ञान को प्राप्त करता है, ज्ञान का संचार करता है एवं ज्ञान का प्रयोग करता है। मनुष्य द्वारा प्रतिपादित विचारों का योग ही ज्ञान है। मनुष्य में निम्नलिखित तीन प्रमुख विशेषताएँ होती हैं जिनके कारण मनुष्य सदैव अपने ज्ञान के क्षेत्र को विकसित करता रहता है।

(i) दीर्घायु जीवन,

(ii) समाज में एक परिवार में तीन पीढ़ियों तक निवास करना तथा

(iii) तर्क एवं विश्लेषण की क्षमता।

मानव मस्तिष्क, ज्ञान का प्रमुख यंत्र है, जहाँ निरन्तर चिंतन से विचार जन्म लेते हैं। ये विचार जगत ही ज्ञान है। ज्ञान जगत अर्थात् जगत का वह भाग जो मनुष्य को ज्ञात है जबकि, जगत में ज्ञात व अज्ञात दोनों का ही समावेश होता है। भविष्य में मानव की विचारशीलता, कल्पनाशीलता और तर्क क्षमता के आधार पर अज्ञात जगत के विभिन्न तथ्य ज्ञात होकर ज्ञान जगत के क्षेत्र में वृद्धि करते रहेंगे। इस प्रकार ज्ञान जगत में ज्ञात व भविष्य में ज्ञात होने वाले समस्त विचारों को सम्मिलित माना जाता है। मानव मस्तिष्क में जन्म लेने वाले सूक्ष्म विचार पर चिन्तन-मनन, तर्क, प्रयोग के द्वारा विश्लेषण कर निष्कर्षों की प्राप्ति की जाती है। इस प्रकार सूक्ष्म विचार का परिवर्तन वृहद विचार में हो जाता है। समान विचारों के आधार पर विभिन्न विषयों का निर्माण होता है और ये सभी विषय मिलकर विषय जगत का निर्माण करते हैं। सम्पूर्ण विषय जगत का एकात्मक स्वरूप ही ज्ञान जगत है।

नोट-

सुनिश्चित विचारों की सुव्यवस्थित इकाइयों के आधार पर ज्ञान जगत इन प्रमुख विषय वर्गों अर्थात् विज्ञान, मानविकी और समाज विज्ञान में विभाजित है। समान विशेषताओं के आधार पर तीनों श्रेणियाँ पुन: अन्य विषयों में विभाजित हैं। इस प्रकार, विचार जगत से विषय जगत अर्थात् ज्ञान जगत की वृद्धि होती है। एक शिक्षक का सम्बन्ध मात्र अपने विशिष्ट क्षेत्र से ही होता है जबकि, एक पुस्तकालयाध्यक्ष का सम्बन्ध सम्पूर्ण ज्ञान जगत से होता है। पुस्तकालयाध्यक्ष को ज्ञान जगत का ज्ञाता कहा जाता है। ज्ञान जगत की विशेषताओं से परिचित होकर पुस्तकालयाध्यक्ष ज्ञान जगत को समुचित व्यवस्थापन प्रदान करने में सक्षम हो पाते हैं तथा ज्ञान की अपार वृद्धि के बावजूद भी इसे एक रेखीयक्रम में व्यवस्थित कर पाते हैं। ज्ञान जगत कभी भी स्थिर नहीं होता है। इसके विकास की गति एवं रूप हमेशा परिवर्तनशील होते हैं। पुस्तकालयाध्यक्ष का कार्य ज्ञान जगत को अधिकाधिक उपयोगी बनाना है। इस प्रकार, यह पुस्तकालयाध्यक्ष का शैक्षणिक दायित्व भी हो जाता है कि वह ज्ञान जगत की विशेषताओं को जाने व समझे। ज्ञान जगत की अनेक विशेषताएँ हैं। इन विशेषताओं को भली-भाँति समझ लेने पर अज्ञान ज्ञान के सहायक क्रम में उचित व्यवस्थापन को लेकर आने वाली समस्याओं को दूर किया जा सकता है। अत: ज्ञान जगत की विशेषताओं का अध्ययन पुस्तकालयाध्यक्ष के लिए अत्यन्त उपयोगी है। ज्ञान जगत के सुव्यवस्थित व्यवस्थापन से पुस्तकालय विज्ञान के पाँच सूत्रों की सन्तुष्टि होती है, ग्रंथालय के उपयोगकर्त्ताओं में निरन्तर वृद्धि होती है तथा पुस्तकालय को समाज का बौद्धिक उन्नयन करने वाली जीवन्त संस्था का दर्जा प्राप्त होता है। ज्ञान जगत की अनेक विशेषताएँ हैं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं—

1. ज्ञान जगत गतिशील है।
2. ज्ञान जगत अनन्त है।
3. ज्ञान जगत निरन्तर है।
4. ज्ञान जगत बहुआयामी है।
5. ज्ञान जगत अन्तर्सम्बन्धित है।
6. ज्ञान जगत स्वाधीन है।
7. ज्ञान जगत प्रगतिशील पृथक्करण-1 होता है।
8. ज्ञान जगत प्रगतिशील पृथक्करण-2 होता है।
9. ज्ञान जगत में प्रगतिशील व्यवस्थापन होता है।
10. ज्ञान जगत में समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन होता है।

उपरोक्त विशेषताओं के गहन अध्ययन से अपार ज्ञान का उचित व्यवस्थापन कर उपयोगकर्त्ताओं को समुचित ज्ञान सेवाएँ यथासमय प्रदान की जा सकती हैं। विषय-जगत में निरन्तर परिवर्तनों के कारण अज्ञात तथ्यों का समावेश भी निरन्तर होता रहता है। पुस्तकालयाध्यक्ष ज्ञात, ज्ञान का व्यवस्थापन तो करता ही है, साथ ही भविष्य में ज्ञात होने वाले ज्ञान के कारण उत्पन्न होने वाली समस्याओं का भी सामना करता है। बहुपक्षीय और जटिल ज्ञान जगत के लिए एक उत्तम वर्गीकरण पद्धति की अनिवार्यता सतत् बनी रहती है जिसकी सहायता से ज्ञान जगत का समुचित व सहायक क्रम में व्यवस्थापन कर अधिकांश पाठकों को सन्तुष्टि प्रदान की जा सके। ज्ञान जगत की विशेषताओं से परिचित होना पुस्तकालयाध्यक्ष और वर्गाकार के लिए सामान्य रूप से और वर्गाकार्य के लिए विशेष रूप से आवश्यक है। ज्ञान जगत की विशेषताओं के आधार पर वर्गाकार द्वारा एक सही व परिशुद्ध वर्गीकरण

नोट-

यह विशेषता प्रगतिशील व्यवस्थापन कहलाएगी। धीरे-धीरे यह विषय एक स्वतन्त्र विषय के रूप में स्थापित हो जाते हैं। जैसे—'जीवन विज्ञान' और 'रसायन शास्त्र' में अन्त:सम्बन्ध स्थापित होने पर नवीन विषय 'जीवन रसायन' की रचना हुई। पहले इस विषय को पार्श्व सम्बद्धता के द्वारा दर्शाया जाता था, फिर इसे एकल के रूप में रखा गया। कोलन क्लासीफिकेशन के छठवें संस्करण में इसे विशिष्ट के रूप में रखा गया। सातवें संस्करण में 'जीवन रसायन' एक पृथक् मुख्य वर्ग के रूप में स्थापित हो गया है।

1.4.10 समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन
(Concurrent Segregation and Systematization)

जब ज्ञान जगत के किसी अवयव में पहले पृथक्करण हो फिर व्यवस्थापन द्वारा सम्बद्धता स्थापित हो तो इसे समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन कहते हैं।

उदाहरणस्वरूप 'शोध प्रविधि', 'प्रबंधन विज्ञान' जैसे विषयों को पृथक् कर एक स्थान पर व्यवस्थित कर दिया गया। सभी विषयों की शोध प्रविधि पृथक् कर एक स्थान पर एकत्रित कर दी गई और इस प्रकार एक नया विषय 'शोध प्रविधि' बन गया, अर्थात् जब विषयों में सम्बद्धता स्थापित होने की प्रवृत्ति के साथ-साथ पृथक्करण भी हो, तो इस विशेषता को समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन कहते हैं। इस विशेषता के फलस्वरूप अनेक नवीन विषयों की रचना हो रही है। पत्रकारिता, मूल्यांकन तकनीक, सम्मेलन तकनीक जैसे विषयों में पृथक्करण और व्यवस्थापन दोनों ही देखने को मिलते हैं।

विषय (Subjects)—अनुशासन विषयों से मिलकर बनता है। विषय, एक सामान्य व्यक्ति की समझ में आने वाले विचारों की सुसंगत संरचना को कहा जाता है। रंगनाथन के अनुसार "विषय विचारों का एक संगठित व सुव्यवस्थत समूह है" (प्रोलेगोमेना, एस०आर० 3)। किसी विषय की संरचना उसकी धारणा एवं समझ में सहायता प्रदान करती है। यही ज्ञान जगत में उसकी स्थिति तथा स्तर का निर्धारण करती है। किसी विषय का निरूपण एक पत्रिका (Journal) के छोटे से लेख या सम्पूर्ण पुस्तक के रूप में अथवा बहुखण्डीय विश्वकोश तक में किया जा सकता है। उदाहरणार्थ—हिन्दू धर्म विषय पर एक छोटे लेख से लेकर बहुखण्डीय पुस्तक तक मिल जाएगी। विषयों को कुछ विशिष्ट विचार या अवधारणाओं के आधार पर या किसी केन्द्रीय प्रश्न को लेकर अथवा किसी वस्तु या प्रसंगानुसार अभिकल्पित किया जा सकता है।

रंगनाथन की विचारधारा के अनुसार तीन प्रकार के विषय होते हैं। यद्यपि यह शब्दावली इस विचारधारा के प्रभाव क्षेत्र के बाहर स्वीकार्य नहीं है—

1. मूल विषय (Basic Subjects)
2. यौगिक विषय (Compound Subjects)
3. जटिल विषय (Complex Subjects)

यह शब्दावली मूलत: रसायन-विज्ञान विषय से ली गई है।

एक मूल विषय, यद्यपि एकलों से मिलकर बना होता है, तो भी एक इकाई की भाँति अविभाज्य होता है। एकल ज्ञान की सूक्ष्मतम इकाई होती है।

1.5 कोलन क्लसीफिकेशन में ज्ञान का विभाजन
Division of Knowledge in Colon Classification

कोलन क्लासीफिकेशन इस विचारधारा पर आधारित है कि सम्पूर्ण ज्ञान आपस में एक प्रणाली के रूप

नोट-

में जुड़ा है। दूसरे शब्दों में इसमें एकात्मकता का भाव होता है। सम्पूर्ण ज्ञान एक है, यह तथ्य रंगनाथन ने वेदों (1500 ई०पू०) से लिया है। कोलन क्लासीफिकेशन के अन्तर्गत विचार जगत के चित्रण में ज्ञान की जो रूपरेखा अन्त में उभरकर आती हैं, वह पारम्परिक होने के साथ-साथ आधुनिक भी है। (सी०सी०-7, अध्याय डी०बी०, पृ० 51-52) यह तथ्य, कि रंगनाथन ने परम्परागत मुख्य तथा प्रमाणिक वर्गों के अस्तित्व को पहचानकर उन्हें मान्यता दी, जो उनकी अत्यन्त परिवर्तनवादी वर्गीकरण पद्धति को परम्परागत मूल की पद्धति का स्वरूप प्रदान करता है। यह परम्परा की जड़ों से प्रस्फुटित आधुनिकता थी। इसमें ज्ञान जगत का विभाजन सर्वप्रथम अनुशासनानुसार तदुपरान्त मूल विषयों में किया गया है। इस प्रकार विभाजन करते हुए प्रत्येक विषय के केन्द्र तक पहुँचा जा सकता है और कोई भी विषय इस प्रक्रिया से बाहर नहीं होगा। (सी०सी०-7, 1987, खण्ड-सी०सी० 2, पृ० 39)

1.5.1 मूल विषय (Basic Subjects)

एक-मूल विषय जिसको मुख्य वर्ग भी कहते हैं, अपने सामाजिक परिवेश में परिभाषित होता है तथा इसकी सीमाएँ व संख्या, स्थान व समय के अनुसार बदलती जाती हैं। सन् 1876 में मेलविल ड्यूई ने सम्पूर्ण ज्ञान जगत को दस वर्गों में विभाजित किया था। यह मुख्य वर्ग मूलत: तत्कालीन अमेरिकी विश्वविद्यालय परिसरों में पढ़ाए जा रहे अनुशासन ही थे। कोलन के छठवें संस्करण में मुख्य वर्गों की संख्या 60 थी, जो सातवें संस्करण में बढ़कर 750 से भी अधिक हो गई। इस प्रकार, मूल विषयों का नाम तथा उनकी संख्या सदैव अभिगृहीत (Postulated) की जाती है जो कि एक पद्धति से दूसरी पद्धति में तथा समान्तर पर बदलती रहती है। मूल विषय, समकालीन ज्ञान के बारे में इतिहासकारों, दार्शनिकों, शिक्षाशास्त्रियों तथा वैज्ञानिकों की सर्वसम्मति पर निर्भर करते हैं। अत: विषय निरन्तर परिवर्तनशील होते हैं।

1.5.2 मूल विषयों के प्रकार (Kinds of Basic Subjects)

सी०सी०-7 (सी०सी०-7, नियम-डी०ई०ओ०, पृ० 66) में दो प्रकार के मूल विषय प्रदर्शित किए गए हैं—

1. मुख्य मूल विषय (Main Basic Subjects)
2. गैर मुख्य मूल विषय (Non-Main Basic Subjects)

1.5.2.1 मुख्य मूल विषय (Main Basic Subjects)—मुख्य विषयों को पुन: निम्नलिखित प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है—

1. **परम्परागत** (Traditional)—मुख्य विषय जैसे—गणित, भौतिक विज्ञान, चकित्सा शास्त्र, शिक्षा शास्त्र, विधि शास्त्र।
2. **अपरम्परागत** (Non-Traditional)—मुख्य विषय जो नव उत्पन्न विषय हैं जैसे—पुस्तकालय विज्ञान, पशु चिकित्सा शास्त्र, गृह विज्ञान एवं पुस्तक विज्ञान।

   विलयित (Fused) मुख्य विषय, ऐसे मुख्य विषय सामान्यत: दो परम्परागत विषयों के अनुत्क्रमणीय मेल से उत्पन्न होते हैं। जैसे—जैव भौतिकी, भू-रसायन विज्ञान, भू-राजनीति विज्ञान, जैव भूगोल, जैव अभियांत्रिकी।
3. **आसवित** (Distilled)—मुख्य विषय, यह अनुप्रयुक्त विषय है तथा सामान्यत: प्रणालीकरण (Methodologies) से सम्बन्धित है। जैसे—प्रबन्ध विज्ञान, शोध विधि विज्ञान, सम्मेलन तकनीक।

4. **आंशिक समावेशन** (Partial Comprehension)—यह विषय क्रमिक मुख्य वर्गों के एक ही नाम वाले संचयन है। यह व्यापक (Generic) स्वभाव के होते हैं। पादप विज्ञान, भौतिकीय विज्ञान (Physical Sciences), गणितीय विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि आंशिक समावेशित मुख्य वर्गों के उदाहरण हैं। मूल विषयों की सूची में आंशिक समावेशित मुख्य वर्गों को पहले मूल वर्ग के साथ *Z लगाकर प्रदर्शित किया जाता है। जैसे—N*Z-ललित कला एवं साहित्य, O*Z-भाषा एवं साहित्य, Q*Z-धर्मशास्त्र एवं दर्शन शास्त्र, T*Z-सामाजिक विज्ञान।
5. **विषय समूह** (Subjects Bundles)—यह ऐसे विषय हैं जिन्होंने अपनी विषय-वस्तु विभिन्न विशेषज्ञों के समूहों द्वारा एक ही समय में विकसित अलग-अलग अनुशासनों से ली है। यह आपस में शिथिल बंधनों से जुड़े रहते हैं। यह सामान्यत: अनुपयुक्त स्वभाव वाले मिशन अभिमुख अध्ययन होते हैं जो प्रचलित शब्दों में वृहद् विज्ञान (Big Science) की श्रेणी में आते हैं। रंगनाथन (सी०सी०-7, अध्याय-डी०एफ०, पृ० 68) ने कुछ विषय समूहों की परिकल्पना की थी जो अपने अंकन के साथ-साथ नीचे दिए गए हैं—

AD	मृदा विज्ञान	(Soil Science)
AE	द्रव्य विज्ञान	(Material Science)
AM	भू-विज्ञान	(Earth Science)
AP	समुद्र विज्ञान	(Ocean Science)
AR	वायुमण्डलीय विज्ञान	(Atmospheric Science)
AS	अंतरिक्ष विज्ञान	(Space Science)
AV	रक्षा विज्ञान	(Defence Science)

वर्तमान में इनमें से किसी भी विषय की अनुसूची नहीं है। भविष्य में इनके एकलों की अनुसूचियाँ भी हो सकती हैं।

1.5.2.2 गैर मुख्य मूल विषय (Non-Main Basic Subjects)—यह निम्नलिखित चार प्रकार के होते हैं—

1. **प्रमाणिक वर्ग** (Canonical Classes)—यह परम्परागत किन्तु मुख्य विषय के सीधे विभाजन के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। जैसे—गणित मुख्य वर्ग में अंक गणित, बीज गणित; रसायन विज्ञान में कार्बनिक तथा अकार्बनिक रसायन; भौतिक विज्ञान में ध्वनि, ऊष्मा, विद्युत आदि।
2. **विशिष्ट घटक** (Special Constituents)—सीमित विस्तार अथवा विशिष्टीकृत अनुप्रयोग वाला मुख्य विषय विशिष्ट गैर मुख्य मूल विषय कहलाता है। जैसे—निर्जल कृषि बाल-चिकित्सा शास्त्र, स्त्री रोग-विज्ञान, लघु स्तर-अर्थ व्यवस्था।
3. **प्रणाली घटक** (System Constituents)—जब एक विषय का किसी विचार धारा या प्रणाली से अध्ययन किया जाता है, तब उसे प्रणाली गैर मुख्य मूल विषय कहते हैं। जैसे—होम्योपेथिक चिकित्सा विज्ञान, मनोविश्लेषण, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, मार्क्सवादी अर्थव्यवस्था, सापेक्षता का सिद्धान्त आदि।
4. **पर्यावरणिक मूल विषय** (Environmental Basic Subjects)—किसी विषय का सामान्येतर (Extra Normal) पर्यावरण में अध्ययन जैसे कि सी०सी०-7 के अध्याय डी०ओ० में पृ० 54-56 तक दर्शाया गया है। यह एक नवीन अवधारणा है। कुछ पर्यावरणिक मूल विषय इस प्रकार

नोट-

हैं—रेगिस्तानी वनस्पति विज्ञान, समुद्री वनस्पति विज्ञान, ऊष्णकटिबन्धीय चिकित्सा शास्त्र, भू-मध्यवर्ती जीव विज्ञान, उच्च स्थानिक अभियांत्रिकी आदि।

1.6 सामाजिक ज्ञान शास्त्र Social Epistemology

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि ज्ञान मूलत: सामाजिक स्वभाव का होता है। तथ्यत: ज्ञान वही है जो समाज के लिए उपलब्ध हो या सार्वजनिक ज्ञान हो। ज्ञान की उत्पत्ति के कारक व साधन अनेक व भिन्न प्रकार के होते हैं। प्रकृति ज्ञान की उत्पत्ति का प्रमुख स्रोत तथा मानव उसका एकमात्र एजेन्ट होता है जो उसके पास उपलब्ध प्रयोगात्मक, अनुभवसिद्ध तथा ऐतिहासिक विधियों द्वारा शोध करके ज्ञान के भण्डार में वृद्धि करता है। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ज्ञान के स्वभाव का अध्ययन एक नई विधा को जन्म देता है जिसे जे०एच० शेरा (1903-82) के शब्दों में सामाजिक ज्ञान शास्त्र कहते हैं।

हाल के वर्षों में दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, तत्त्वमीमांसा (Metaphysics), समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, आनुवांशिकी, भाषा विज्ञान, शोध विधि विज्ञान, साइबरनेटिक्स (Cybernetics), कृत्रिम प्रबुद्धता (Artificial Intelligence) तथा पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विषयों में ज्ञानशास्त्रीय अध्ययनों का बढ़ता हुआ महत्त्व स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है। यद्यपि विषय वृद्धि की विधियों पर बहुत कम अध्ययन किए गए हैं। इनसे ज्ञान में संरचनात्मक (Anatomical) तथा क्रियात्मक (Physiological) वृद्धि का पता चला सकता है। इनसे ज्ञान के संवर्धन व प्रवर्धन के लिए उत्तरदायी कारकों का भी पता चल सकता है।

ज्ञान ही पुस्तकालयाध्यक्षों का मुख्य साजोसामान (Stock in Trade) होता है। अत: इसका अध्ययन हमारे लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि एक सर्जन के लिए शरीर रचना विज्ञान का अध्ययन है। इसके अध्ययन के निहितार्थ पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के सन्दर्भ में अनेक व व्यापक स्तर पर प्रभावी हैं। डॉ० एस०आर० रंगनाथन (1892-1972) ज्ञान वृद्धि की विधियों के अध्ययन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पथ प्रदर्शक थे। उन्होंने 1948 में दिल्ली विश्वविद्यालय के एम०लिब०एस०सी० के पाठ्यक्रम में 'विषय जगत की संरचना तथा विकास' नाम से एक पेपर आरम्भ किया। उन्होंने इस विषय पर एक पुस्तक की भी घोषणा की थी। यद्यपि वह पुस्तक कभी प्रकाशित नहीं हो सकी। तब भी इस विषय में उनकी रुचि हमेशा बनी रही और उनके प्रयासों के कारण नए-नए परिणाम मिलते रहे। यह कार्य उनकी विचारधारा से प्रभावित व्यक्तियों द्वारा डॉक्यूमेन्टेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग सेन्टर, बंगलुरु तथा अन्य स्थानों पर जारी रखा गया है। जे०एच० शेरा (1903-82) ने इसकी "पुस्तकालय विज्ञान के मूल दर्शन में" (रंगनाथन के चिरस्थायी) बौद्धिक योगदान के रूप में प्रशंसा की है।

विषय निर्माण की विधियाँ (Modes of Subjects Formation)—ज्ञान के किसी अंश का समान व असमान श्रेणियों में क्रमबद्ध एवं तर्कसंगत व्यवस्थापन विषय कहलाता है। ज्ञान के विभक्तिकरण से प्राप्त समस्त विषयों को एकात्मक स्वरूप में विषय जगत की संज्ञा दी जाती है। मानवीय चिन्तन से विचार, विचार से विषय और विषयों से ज्ञान वृद्धि करता है। विषय जगत की निरन्तर और बहुआयामी वृद्धि के बावजूद भी पुस्तकालयाध्यक्ष, द्वारा सर्वाधिक उपयोगी वर्गीकरण पद्धति की सहायता से विषयों का क्रमबद्ध विश्लेषण कर उचित व्यवस्थापन क्रम प्रदान किया जाता है। नवोदित विषयों को उनके सम्बन्धित विषयों के साथ इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है जिससे पूर्व क्रम भी यथावत् बना रहे। विषय साधारण, यौगिक अथवा जटिल हो सकते हैं। इनके बारे में संक्षिप्त में जानकारी निम्नानुसार है—

1. **साधारण विषय**—जिन विषयों में केवल मूलभूत विषय ही रहता है, उन्हें साधारण विषय कहते हैं। मूलभूत विषय अर्थात् वह विषय जिसके अवयव के रूप में कोई भी एकल विचार न हो, जैसे—समाजशास्त्र, शिक्षा, मनोविज्ञान आदि मूलभूत विषय हैं।

नोट-

2. **यौगिक विषय**—जिन विषयों में मूलभूत विषय के साथ-साथ एक या एक से अधिक एकल विचार भी होते हैं, उन्हें यौगिक विषय कहते हैं। उदाहरण दृष्टव्य हैं—

मूलभूत	+	एकल विचार	=	यौगिक विषय
शिक्षा	+	प्रौढ़	=	प्रौढ़ शिक्षा
साहित्य	+	अंग्रेजी	=	अंग्रेजी साहित्य
मनोविज्ञान	+	बाल	=	बाल मनोविज्ञान

3. **जटिल विषय**—जो विषय दो या दो से अधिक विषयों के अन्तर्सम्बन्ध से निर्मित हो अथवा उनके मध्य किसी सम्बन्ध पर आधारित हो, उसे जटिल विषय कहते हैं। उदाहरणार्थ—

(i) पुस्तकालय विज्ञान पर सूचना प्रौद्योगिकी का प्रभाव

(ii) समाज शास्त्र व धर्म में अन्तर्सम्बन्ध

(iii) शिक्षा और मनोविज्ञान में अन्तर

विषयों का निर्माण निरन्तर है तथा इनका निर्माण विभिन्न विषय निर्माण विधियों के द्वारा होता है। विभिन्न विषय निर्माण विधियों के द्वारा सरल, यौगिक अथवा जटिल विषयों का निर्माण होता है। अन्तर्विषयीन शोध के परिणामस्वरूप भी नवीन विषयों की रचना होती है। रंगनाथन ने ज्ञान जगत का गहन अध्ययन कर वर्गीकरण के सिद्धान्तों और तकनीकों का प्रतिपादन किया। वर्गीकरण प्रणाली के सामान्य सिद्धान्त, नियामक सिद्धान्त, अवधारणाएँ, उपसूत्र आदि का प्रतिपादन किया। इन्होंने भूत और वर्तमान विषय क्षेत्रों के साथ-साथ भविष्य में निर्मित होने वाले विषयों की संरचना को भी ध्यान में रखा तथा किसी भी विषय के अन्तर्गत एकल पक्षों को व्यवस्थित करने के दृष्टिकोण से निम्नलिखित पाँच मूलभूत श्रेणियों का प्रतिपादन किया—

1. व्यक्तित्व (Personality)
2. पदार्थ (Matter)
3. ऊर्जा (Energy)
4. स्थान (Space)
5. काल (Time)

ये पाँच मूलभूत श्रेणियाँ, अन्य विषय वर्गीकरण प्रणालियों के लिए आदर्श बन गईं।

रंगनाथन ने गहन अध्ययन और अनुसंधान के द्वारा 1950 में अपने एक आलेख में चार प्रकार की विषय निर्माण विधियों का प्रतिपादन किया जिनका उल्लेख उनकी पुस्तक 'प्रोलेगोमेना टू लाइब्रेरी क्लासिफिकेशन' (Prolegomena to Library Classification) में मिलता है। ये चार विधियाँ निम्नलिखित हैं—

1. शिथिल संग्रहण (Loose Assemblage)
2. पटलीकरण (Lamination)
3. विच्छेदन (Dissection)
4. अनाच्छादन (Denudation)

नोट-

उन्होंने 1960 में दो अन्य विधियों का प्रतिपादन किया—

1. आसवन (Distillation)
2. विलयन (Fusion)

1973 में डॉक्यूमेन्टेशन रिसर्च एवं ट्रेनिंग सेन्टर (Documentation Research and Training Center) DRTC, बंगलुरु में कार्यरत् ए० नीलमेघन ने इन विषय निर्माण विधियों में संशोधन कर इन्हें समयानुकूल अद्यतन बनाया तथा इन्हें वैज्ञानिक आधार पर परिवर्तित कर इनका पुनर्गठन किया। वर्तमान में विषय निर्माण की बारह विधियाँ मानी जाती हैं। नवीन विषय चाहे किसी भी विधि के फलस्वरूप निर्मित हो, उसका समायोजन वर्गीकरण पद्धति में सहायक क्रम में होना चाहिए। ज्ञान जगत के विकास का सर्वाधिक प्रभाव वर्गीकरण पर पड़ता है। अत: वर्गीकरण पद्धति इस प्रकार की होनी चाहिए जिसमें निम्न विशेषताएँ हों—

1. अनन्त व असंख्य वर्गों का समावेश किया जा सके।
2. आवश्यकतानुसार कितने ही नए वर्गों का सृजन किया जा सके।
3. सहायक क्रम के उपसूत्र को ध्यान में रखते हुए वर्गीकरण पद्धति में नवीन वर्गों का इस प्रकार समावेश हो जिसमें पूर्वक्रम भी यथावत् रहें।

वर्तमान में निम्नलिखित बारह विधियों से विषयों का निर्माण होता है—

1. विखण्डन
2. विच्छेदन
3. अनाच्छादन

} सरल विषय

4. पटलीकरण –1
5. पटलीकरण –2

} यौगिक विषय

6. शिथिल संग्रहण –1
7. शिथिल संग्रहण –2
8. शिथिल संग्रहण –3

} जटिल विषय

9. विलयीकरण
10. आसवन
11. संचय
12. समूह

} जटिल विषय

इस प्रकार उपरोक्त विधियों में से शिथिल संग्रहण–1, 2, 3 के द्वारा जटिल विषय लेमीनेशन–1, 2 के द्वारा यौगिक सरल विषय तथा शेष विधियों द्वारा सरल विषयों का निर्माण होता है।

1.6.1 विखण्डन (Fission)

इस प्रक्रिया में पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धति में ज्ञान जगत का प्राथमिक एवं गौण मुख्य विषयों में विभाजन होता है। प्रथम चरण पर हुए विखण्डन से प्राथमिक मुख्य विषयों तथा द्वितीय चरण पर गौण मुख्य विषयों की संरचना होती है।

विखण्डन का तात्पर्य है—खण्डों में विभाजन अर्थात् विषय का विभिन्न अंशों में विभाजन। रंगनाथन के अनुसार, जब कोई एकल अथवा मूलभूत विषय, जब वह उपविभागों में विखण्डित हो जाता है तो इसे

विखण्डन कहते हैं। विखण्डन के द्वारा विषयों की गहनता बढ़ जाती है और विस्तार कम हो जाता है। यह विभाजन की एक आन्तरिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा नए-नए विशिष्टीकरण जन्म लेते हैं। उदाहरणार्थ—मुख्य विषय दर्शनशास्त्र का विखण्डन, तर्कशास्त्र, ज्ञान मीमांसा, तत्त्व मीमांसा, नीतिशास्त्र एवं सौन्दर्य शास्त्र में हो सकता है। मूल रूप से विखण्डन की प्रक्रिया तीन प्रकार की होती है—

विखण्डन-1 : परम्परागत विखण्डन—विखण्डन एक के द्वारा परम्परागत प्रमुख विषय निर्मित होते हैं, जिन्हें मुख्य विषयों का संचय कहते हैं। प्रामाणिक मूलभूत विषय जो मुख्य विषय के साथ ही गमन करते हैं, की रचना भी विखण्डन-1 द्वारा ही हुई है।

परम्परागत विखण्डन, मुख्य मूलभूत विषय; जैसे—गणित व भौतिकी।

प्रामाणिक मूलभूत विषय; जैसे—गणित में अंकगणित व बीजगणित।

विखण्डन-2 : निकाय विखण्डन—कुछ मुख्य विषय; जैसे—चिकित्साशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान आदि का विकास विभिन्न विचाराधाराओं के अनुसार हुआ है, ऐसे विषय विखण्डन-2 अथवा निकाय विखण्डन के परिणाम हैं।

निकाय विखण्डन के द्वारा मुख्य विषयों के निकाय मूलभूत विषय उत्पन्न होते हैं। निकाय मूलभूत विषय अर्थात् वह मुख्य विषय जो एक सुनिश्चित विचारधारा के अनुसार विकसित हुआ हो; जैसे—व्यावहारिक मनोविज्ञान।

विखण्डन-3 : विशिष्ट विखण्डन—समान मुख्य विषय; जैसे—चिकित्साशास्त्र के प्रतिपादन को मानव शरीर की कुछ विशेषताओं तक सीमित किया जा सकता है; जैसे—बाल्यावस्था और वृद्धावस्था। इन्हें 'विशेष' के नाम से पुकारा जाता है तथा ये विखण्डन-3 या विशिष्ट विखण्डन के परिणाम हैं। इनकी परिभाषा प्रत्येक पक्ष में या तो तदर्थ रूप से होती है या इनकी रचना विशिष्ट वातावरण के आधार पर होती है जिसमें अध्ययन के विषयों को निर्मित करने वाले तथ्य नियोजित किए जाते हैं।

विशिष्ट विखण्डन से मुख्य विषयों के मूलभूत विषय उत्पन्न होते हैं, जैसे—बाल चिकित्सा, स्त्री चिकित्सा, उष्णकटिबन्धी चिकित्सा आदि।

विखण्डन प्रक्रिया द्वारा एक विषय दो या दो-से-अधिक विषयों में विभाजित होकर नवीन विषयों को जन्म देता है। विभाजन द्वारा समविभाग या उपविभाग प्राप्त होते हैं जिसके आधार पर विखण्डन की प्रक्रिया दो प्रकार की हो सकती है—(i) विच्छेदन तथा (ii) अनाच्छादन।

1.6.1.1 विच्छेदन (Dissection)

रंगनाथन महोदय ने प्रोलेगोमेना में विच्छेदन को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, "समकक्ष प्रतिष्ठा वाले भागों में तत्त्व जगत का कर्तन; अर्थात् जब किसी मूलभूत विषय अथवा एकल के विखण्डन से पंक्तिगत् भाग प्राप्त हों तो इसे विच्छेदन कहते हैं।" इसके द्वारा निर्मित समस्त भागों को समान श्रेणी में रखा जाता है। जिस प्रकार एक डबल रोटी को समान भागों में बाँटा जाता है, उसी प्रकार विषय के विभाजन से समकक्ष वर्गों का निर्माण विच्छेदन कहलाता है। यह ज्ञान जगत के निर्माण की आरम्भिक व सरलतम विधि है जिसके द्वारा एकल अथवा मूलभूत विषय चाहे वह मुख्य हो अथवा इतर मुख्य, समकक्ष प्रतिष्ठा वाले भागों में विखण्डित हो जाता है।

ज्ञान जगत के विच्छेदन से विभिन्न विषय; जैसे—रसायन शास्त्र, समाज विज्ञान, राजनीति विज्ञान, इतिहास आदि प्राप्त हुए हैं। ये सभी समकक्ष भाग हैं तथा इन सभी वर्गों को समान श्रेणी में रखा जाता है।

नोट-

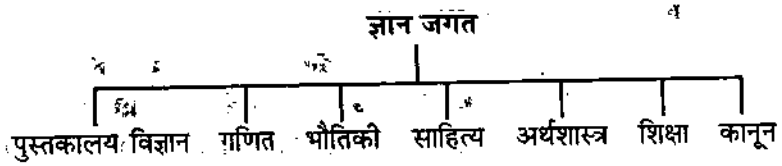

ये सभी पंक्तिबद्ध भाग हैं और इनका अस्तित्व स्वतन्त्र है। यह प्रत्येक खण्ड पुन: विशेषताओं के आधार पर विच्छेदित हो सकते हैं। विच्छेदन की प्रक्रिया बारम्बार होती रहती है और ज्ञान जगत भी पंक्तिबद्ध भागों में बंटता चला जाता है।

वैदिक काल में ज्ञान जगत चार वर्गों में अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में विच्छेदित था। ड्यूई की दशमलव वर्गीकरण पद्धति में ज्ञान जगत को दस वर्गों में विभाजित किया गया है जो तर्क आधारित नहीं हैं। रंगनाथन महोदय की द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में ज्ञान जगत को 26 वर्गों में विभाजित किया गया है जिनकी संख्या सातवें संस्करण में 105 हो गई है। पुस्तकालयाध्यक्ष द्वारा ये नवोदित विषय उचित और सहायक क्रम में व्यवस्थित किए जाते हैं ताकि उनका अधिकाधिक उपयोग सम्भव हो सके।

विच्छेदन के द्वारा विशेषताओं के आधार पर ज्ञान जगत का कोई भी विषय अथवा एकल अनेक विषयों या सूक्ष्म विस्तारण के एकलों में विच्छेदित हो जाता है। विच्छेदन की प्रक्रिया को निम्न रेखाचित्र के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है—

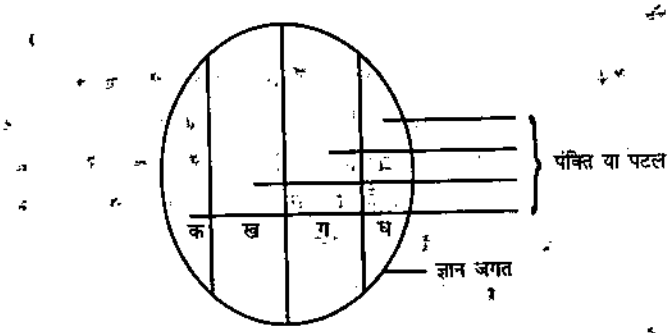

रेखाचित्र

विच्छेदन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक विषय दो या दो-से-अधिक भागों में विभाजित हो जाता है। ये भाग अपने जनक विषय से सम्बद्ध भी हो सकते हैं और स्वतन्त्र भी, अर्थात् विच्छेदन से निर्मित प्रत्येक भाग अपने आप में एक जगत है। इस विच्छेदित भाग को पटल अथवा पंक्ति कहते हैं। उपरोक्त रेखाचित्र से ज्ञान जगत के विच्छेदन से निर्मित क, ख, ग, घ भाग पंक्ति अथवा पटल कहलाएँगे। इनमें से कोई भी पंक्ति अथवा पटल पुन: विच्छेदित हो सकती है।

यदि भौगोलिक जगत को विच्छेदित करें तो एशिया, यूरोप, अमेरिका आदि पटल प्राप्त होते हैं। एशिया जगत पर पुन: प्रक्रिया को दोहराने पर रूस, चीन, भारत आदि पटल प्राप्त होते हैं। भारत जगत को पुन: विच्छेदित करने पर मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात आदि पटल प्राप्त होते हैं। इसे अग्र रेखाचित्र में दर्शाया गया है।

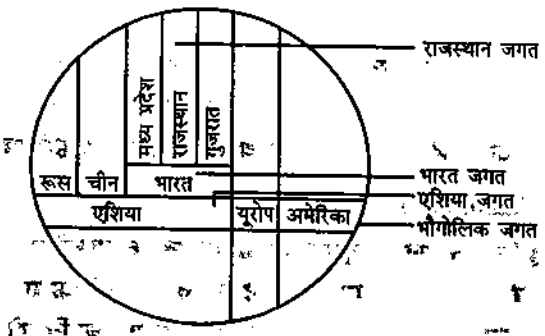

रेखाचित्र

1.6.1.2 अनाच्छादन (Denudation)

विषय संरचना एवं निर्माण के परिप्रेक्ष्य में अनाच्छादन किसी मुख्य विषय के एक वर्ग अथवा एकल को विभाजित करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में विशिष्ट विशेषताओं के आधार पर व्यापकता की दृष्टि से विषय का विस्तार कम और गहनता की क्रमशः वृद्धि की जाती है। इस प्रक्रिया द्वारा नवीन एकल विचारों की एक शृंखला का सृजन होता है। जे०एच० शेरा महोदय ने इसे ज्ञान के नवीन विषयों की खोज प्रक्रिया कहा है।

जब किसी मूलभूत विषय अथवा एकल के विखण्डन से उपविभाग प्राप्त हों, अर्थात् जब एक विषय, शृंखला वर्गों में विखण्डित हो, तो इस विषय निर्माण विधि को अनाच्छादन कहते हैं। इस विधि का उपविभाजन होता है, विषयों की सूक्ष्मता और गहनता बढ़ जाती है तथा विस्तार कम हो जाता है। प्रत्येक वर्ग अपने पहले वर्ग का उपविभाग होता है। उदाहरणार्थ—

पुस्तकालय

↓

शैक्षणिक पुस्तकालय

↓

विद्यालय पुस्तकालय

↓

प्राथमिक विद्यालय पुस्तकालय

अनाच्छादन की प्रक्रिया को निम्न रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है—

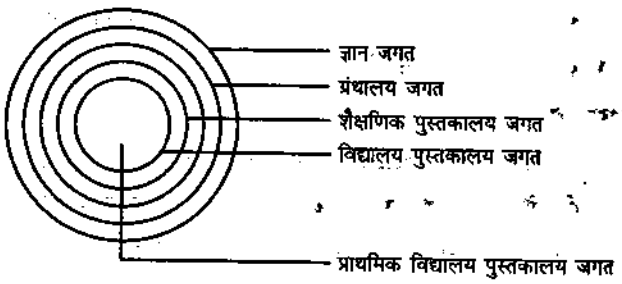

रेखाचित्र

अनाच्छादन की प्रक्रिया से अधीनस्थ या पंक्तिबद्ध वर्गों की रचना होती है। विषयों के विभाजन से नवीन

नोट-

विषयों की रचना होती चली जाती है और ज्ञान जगत के क्षेत्र में ज्ञात तथ्य एकत्रित होते चले जाते हैं। निरन्तर चिन्तन से सतत् उदित हो रहे नवीन विचारों के कारण विषय जगत में द्रुतगति से वृद्धि होती जाती है, अर्थात् विखण्डन प्रक्रिया से ज्ञान जगत का विभाजन हो रहा है। जब विभाजन से समकक्ष वर्ग प्राप्त हों तो इसे विच्छेदन कहते हैं तथा जब अधीनस्थ वर्ग प्राप्त हों तो इसे अनाच्छादन कहते हैं।

1.6.2 पटलीकरण-1 (Lamination-I)

पटलीकरण का तात्पर्य है कि एक पर्त पर दूसरी पर्त अर्थात् एक विषय की एक से अधिक दिशाएँ या पक्ष हों। ये पक्ष एक-दूसरे पर पटलित होते हैं जब दो या दो-से-अधिक एकल पक्ष, मूल पक्ष पर पटलित होते हैं तो इसे पटलीकरण-1 कहते हैं। इस विधि द्वारा यौगिक विषयों का निर्माण होता है।

उदाहरणार्थ—हृदय के रोगों का उपचार।

पटलीकरण-1 की प्रक्रिया को निम्न रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है—

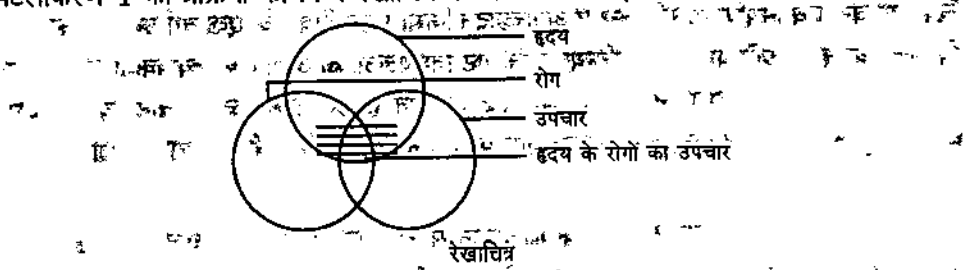

रेखाचित्र

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में पक्ष विश्लेषण तथा आवर्तन और स्तर के द्वारा इस विधि से निर्मित विषयों को दर्शाया जाता है। सार्वभौम वर्गीकरण पद्धति में कोलन का उपयोग किया जाता है। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में इसका कोई प्रावधान नहीं है।

1.6.3 पटलीकरण-2 (Lamination-II)

जब किसी एक पक्ष के दो या दो-से-अधिक एकल एक-दूसरे पर पटलित रहते हैं तो इस विधि को पटलीकरण-2 कहते हैं। इसे कल्प पटलीकरण भी कहते हैं क्योंकि अधिकांशत: ऐसे विषय सम्पूर्ण विचार का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में इस विधि से निर्मित विषयों को अध्यारोपण विधि के द्वारा दर्शाया जाता है। इसके लिए हाइफन (Hyphen) "-" चिह्न का प्रयोग किया जाता है। दो एकलों में से प्रमुख एकल को पहले तथा गौण एकल को बाद में लिखा जाता है

उदाहरण, अभियांत्रिकी महाविद्यालय पुस्तकालय-

234-4(D)

पटलीकरण-1 में एक पक्ष पर दूसरा पक्ष पटलित रहता है जबकि पटलीकरण-2 में एक ही पक्ष का एकल विचार दूसरे पक्ष पर पटलित रहता है।

1.6.4 शिथिल संग्रहण-1 (Loose Assemblage-I)

जब एक विषय का दूसरे विषय अथवा उसके उपविभागों से सम्बन्ध दर्शाया जाता है तो इसे शिथिल संग्रह कहते हैं। इस विधि में दो या दो-से-अधिक विषयों का उनके पारस्परिक सम्बन्ध के रूप में अध्ययन किया जाता है। शिथिल संग्रहण पटलीकरण से भिन्न है। पटलीकरण में मूल विषय पर दो या दो-से-अधिक पक्ष पटलित रहते हैं, जबकि शिथिल संग्रहण में दो या दो-से-अधिक विषयों का उनके पारस्परिक सम्बन्ध के रूप में अध्ययन किया जाता है।

नोट-

जब दो या दो-से-अधिक विषयों का अध्ययन उनके परस्पर सम्बन्धों के रूप में किया जाता तो इसे शिथिल संग्रहण-1 कहते हैं। इस विधि में दो पृथक् विषय अस्थाई रूप से एक-दूसरे संयोजन में आते हैं तथा एक विषय के उपयोग द्वारा दूसरे विषय का अध्ययन किया जाता है। अन्तर्विषयी शोध का परिणाम है।

इस विधि से दो या दो-से-अधिक साधारण अथवा जटिल विषयों के पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन के आधार पर विषयों की संरचना होती है। वर्गीकरण शब्दावली में इन पारस्परिक सम्बन्धों को अन्तर्विषयी दशा सम्बन्ध (Inter Subject Phase Relation) कहते हैं। इसके द्वारा जटिल विषय का निर्माण होता है।

इस विषय निर्माण विधि में निम्न प्रकार के दशा सम्बन्ध हो सकते हैं—

(i) सामान्य सम्बन्ध (General Relation)
(ii) उन्मुखी सम्बन्ध (Bias Relation)
(iii) तुलनात्मक सम्बन्ध (Comparison Relation)
(iv) भिन्नात्मक सम्बन्ध (Difference Relation)
(v) प्रभावात्मक सम्बन्ध (Influence Relation)
(vi) उपकरण सूचक सम्बन्ध (Tool Relation) (द्विबिन्दु वर्गीकरण के 7वें संस्करण के अनुसार)

उदाहरण

(i) कृषि और अर्थशास्त्र
(ii) बैंक अधिकारियों के लिए गणित
(iii) धर्म और राजनीति : तुलनात्मक अध्ययन
(iv) समाजशास्त्र व मानवशास्त्र में विभेद
(v) राजनीति पर अर्थशास्त्र का प्रभाव

1.6.5 शिथिल संग्रहण-2 (Loose Assemblage-II)

जब किसी मुख्य वर्ग के एक ही पक्ष के दो एकलों के बीच परस्पर सम्बन्ध दर्शाया जाता है तो इसे शिथिल संग्रहण-2 कहते हैं। इस प्रकार के विषयों का निर्माण एक ही मुख्य विषय के दो या अधिक समवर्गी/एकलों के पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर होता है। वर्गीकरण शब्दावली में इसे अन्त: पक्ष दशा सम्बन्ध (Intra Facet Phase Relation) कहते हैं।

इस विधि में निम्न प्रकार के दशा सम्बन्ध हो सकते हैं—

(i) सामान्य सम्बन्ध
(ii) उन्मुखी सम्बन्धी
(iii) तुलनात्मक सम्बन्ध
(iv) प्रभावात्मक सम्बन्ध
(v) उपकरण सूचक सम्बन्ध (द्विबिन्दु वर्गीकरण के 7वें संस्करण के अनुसार)

उदाहरणार्थ—

(i) सन्दर्भ सेवा और सूचीकरण

नोट-

(ii) निराला और सुमन तुलनात्मक अध्ययन

(iii) जैन धर्म और बौद्ध धर्म का प्रभाव

1.6.6 शिथिल संग्रहण-3 (Loose Assemblage-III)

इस विधि के अन्तर्गत एक पक्ष के पंक्तिबद्ध एकलों के परस्पर सम्बन्ध को दर्शाया जाता है, तो इसे शिथिल संग्रहण-3 कहते हैं। उदाहरणार्थ—

(i) वर्गीकरण व सूचीकरण

(ii) ग्रामीण तथा नागरिक जनता की संस्कृति

(iii) ग्रामीण जीवन पर शहरी जीवन का प्रभाव

(iv) ग्रामीण एवं शहरी जीवन में अन्तर

यह सम्बन्ध एक पंक्ति के दो उप एकलों के मध्य दिखाया जाता है। वर्गीकरण शब्दावली में इसे अन्त: पंक्ति विषय सम्बन्ध (Intra Array Phase Relation) कहते हैं। यह सम्बन्ध भी सामान्य, उन्मुखी, तुलनात्मक, भिन्नात्मक, प्रभावात्मक, उपकरण सूचक प्रकार का हो सकता है।

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में प्रत्येक सम्बन्ध हेतु अलग-अलग योजक चिह्नों का प्रयोग किया जाता है।

शिथिल संग्रहण की प्रक्रिया को निम्न रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है।

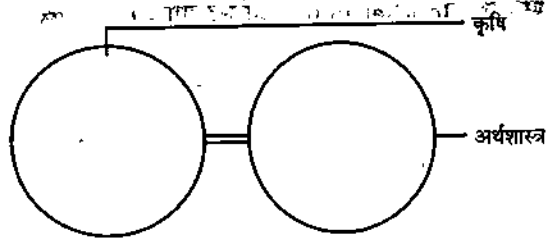

रेखाचित्र

1.6.7 विलयीकरण (Fusion)

जब दो या दो-से-अधिक मुख्य विषयों का विलयीकरण एकसाथ इस प्रकार से हो जाए कि प्रत्येक अपनी पृथकता खो दें, तो इस विधि को विलयीकरण कहते हैं। इस प्रकार के विषय अन्त:विषयी शोध का परिणाम हैं।

उदाहरणार्थ— बायोलॉजी + कैमिस्ट्री = बायोकैमिस्ट्री

खगोल + भौतिक शास्त्र = खगोल भौतिकी

इस विधि के द्वारा नवीन विचार जन्म लेते हैं एवं इससे नवीन विषयों का निर्माण होता है। इन विषयों का निर्माण शिथिल संग्रहण से होता है अर्थात् पहले दो विषयों के बीच शिथिल संग्रहण होता है एवं उनका अध्ययन उनके परस्पर सम्बन्धों के रूप में किया जाता है। फिर इनमें विलयीकरण हो जाता है। इस प्रकार के विषय मानविकी, समाज विज्ञान एवं विज्ञान में निर्मित हो रहे हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विभिन्न शोध कार्यों के परिणामस्वरूप प्राथमिक विषयों के विलयीकरण से कई नए प्राथमिक विषयों का निर्माण हो रहा है। उदाहरणस्वरूप Biophysics, Geophysics, Astrochemistry, Econometrics आदि विषयों का निर्माण विलयन की प्रक्रिया से ही हुआ है।

इस विधि के द्वारा निर्मित नवीन विषयों का व्यवस्थापन सम्बन्धित विषयों के मध्य सहायक क्रम में किया जाना चाहिए।

विलयीकरण की प्रक्रिया को रेखाचित्र के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है—

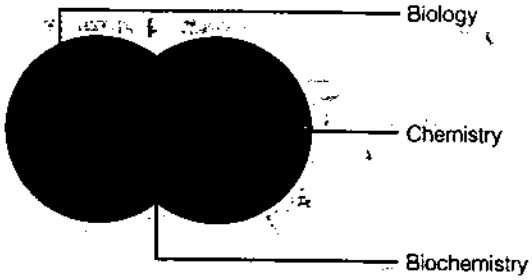

रेखाचित्र

1.6.8 आसवन (Distillation)

आसवन अर्थात् किसी मिश्रण का शुद्धिकरण। इस प्रक्रिया से एक शुद्ध पदार्थ/विषय को प्राप्त किया जाता है। ज्ञान जगत भी विभिन्न विचारों; तथ्यों और विषयों का सम्मिश्रण है। जब ज्ञान जगत का आसवन किया जाए और इस मिश्रण से कुछ अवशेष प्राप्त हो तो इसे आसवित मुख्य विषय कहते हैं।

उदाहरण—प्रबन्धन विज्ञान, शोध प्रविधि, सांख्यिकी विश्लेषण आदि।

यह विषय निर्माण विधि अन्तर्विषयी शोध का परिणाम है। सम्पूर्ण ज्ञान जगत के आसवन से अवशेष स्वरूप जो नवीन विचार प्राप्त होता है, उसका अपना अस्तित्व होता है। यह विचार पूर्व में भी विद्यमान था किन्तु इसका स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं था। विषय जगत के आसवन से यह एक पृथक् विषय बन गया। आज इस विषय निर्माण पद्धति के फलस्वरूप नए-नए विशिष्टीकरण निर्मित हो रहे हैं।

आसवन की प्रक्रिया को रेखाचित्र के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है—

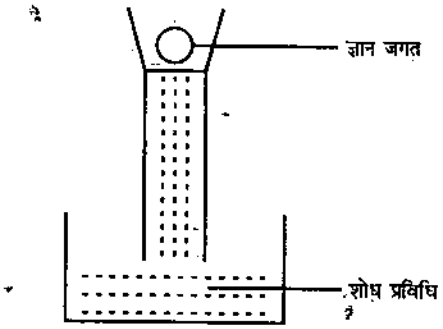

रेखाचित्र

1.6.9 संचयन (Agglomeration)

पूर्व में भी इस विधि को आंशिक समावेश (Partial Comprehension) के नाम से जाना जाता था। इस प्रकार के विषय के निर्माण की प्रकृति नई नहीं है। ये कई वर्गों का सम्मिलित स्वरूप है। जब किसी वर्ग में कई वर्गों का समावेश हो तथा कुछ अनिवार्य विशेषताएँ सामान्य रूप से हों तो इसे संचय कहते हैं। इस विधि में दो अथवा दो से अधिक मुख्य वर्ग मिलकर एक सामान्य मुख्य वर्ग का निर्माण करते हैं।

उदाहरण प्राकृतिक विज्ञान, समाज विज्ञान आदि को संचायित वर्ग कहा जाता है। इनमें अनेक विषय सम्मिलित हैं। पूर्व में ये मुख्य विषय थे जो विखण्डन द्वारा अनेक विषयों में विभाजित हो गए। संचय विधि द्वारा इनका सम्मिलित स्वरूप भी दिखाई पड़ता है।

द्विबिन्दु वर्गीकरण प्रणाली में संचायित वर्ग 'A' सभी विज्ञानों का प्रतिनिधित्व करता है। इसी प्रकार MZZ

नोट-

मानविकी और SZ सामाजिक विज्ञान का संचयित वर्ग है।

संचयन की प्रक्रिया को रेखाचित्र के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है—

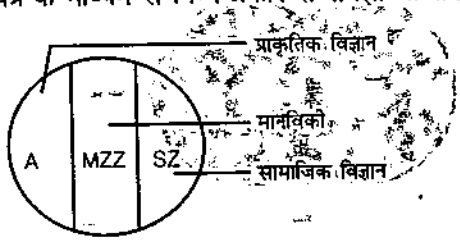

रेखाचित्र

1.6.10 समूह (Cluster)

पूर्व में भी इस विधि को 'विषयों का पुलिंदा' (Subject Bundle) के नाम से जाना जाता था। जब किसी एक प्रक्रिया अथवा तत्त्व के अध्ययन हेतु विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ एकसाथ मिल-जुलकर कार्य करते हैं तो इस विधि को समूह कहते हैं। समूह में विभिन्न विषयों का स्वतन्त्र अस्तित्व है। उनका सम्बन्ध मात्र एक विशिष्ट क्रिया के अध्ययन हेतु ही होता है।

उदाहरणार्थ—समुद्र विज्ञान, भू-विज्ञान, जापानी विद्या, चीनी विद्या, भारतीय संगीत आदि।

जब विभिन्न विषय एक व समान श्रेणी के होते हैं तो यह विधि संचयन कहलाती है तथा जब विभिन्न विषय एक ही श्रेणी के नहीं होते, तो इसे समूह कहते हैं। विषय निर्माण की यह विधि दल शोध का परिणाम है। समूह के विभिन्न विषयों का स्वतन्त्र अस्तित्व होता है किन्तु एक विशिष्ट क्रिया के अध्ययन में वे सम्बन्धित रहते हैं। इस विषय में इस विशिष्ट क्रिया के विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया जाता है।

उदाहरण के लिए यदि एक शोध दल, भूमि का उर्वरा शक्ति का अध्ययन करने के लिए गठित किया जाए तो इस दल में रसायन विज्ञान, कृषि विज्ञान और वनस्पति विज्ञान से एक-एक शोध वैज्ञानिक नियुक्त किया जाएगा तथा ये मिलकर जल विज्ञान (Hydro Science) का अध्ययन करेंगे।

समूह की प्रक्रिया को रेखाचित्र के माध्यम से निम्न प्रकार से समझा जा सकता है—

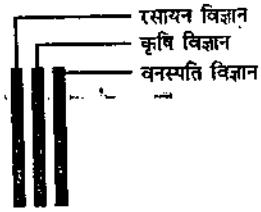

रेखाचित्र

द्विबिन्दु वर्गीकरण प्रणाली में समूह के प्रतिनिधित्व हेतु 'अन्तर्वेशन विधि' का प्रयोग करते हैं। सार्वभौम दशमलव पद्धति में इस हेतु कोई प्रावधान नहीं है।

संचयन और समूह में मुख्य अन्तर यह है कि संचयन एक व समान श्रेणीबद्ध पदों के विभिन्न विषयों का समूह है, जबकि समूह के विभिन्न विषय एक ही श्रेणी के नहीं होते। दूसरा अन्तर यह है कि संचयन का अस्तित्व पहले से ही विद्यमान रहता है तथा इसका विखण्डन होने पर विभिन्न विषय निर्मित हो जाते हैं। समूह विषय निर्माण पद्धति नई है और दलशोध के फलस्वरूप निर्मित हुई है।

नोट-

1.7 ज्ञान निर्माण की तीन विधियाँ

Three Modes of Formation of Knowledge

आप इकाई द्वितीय में सरल, यौगिक एवं जटिल विषयों के निर्माण की विधियों से परिचित हो चुके हैं। यहाँ पर रंगनाथन तथा उनके सहयोगियों द्वारा कोलन क्लासीफिकेशन के सातवें संस्करण में ज्ञान वृद्धि की समस्त विधियों को निम्नलिखित तीन सामान्य विधियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है—

(अ) विशिष्टीकरण द्वारा वृद्धि

(ब) अन्तर-अनुशासनात्मक; तथा

(स) बहु-अनुशासनात्मक वृद्धि

1.7.1 विशिष्टीकरण प्रवृत्तियाँ (Specialization Trends)

जब अत्यधिक वृद्धि व विस्तार के कारण किसी विषय का आकार बेडोल हो जाता है तो उसके अध्ययन के अस्तित्व को बचाने के लिए विखण्डन या संघर्षण की प्रक्रिया का एकमात्र रास्ता बच जाता है। समाज के कार्य विभाजन इस प्रकार के विस्तार का सीधा परिणाम माने जा सकते हैं। जब एक समुदाय काफी बड़ा हो जाता है तो उसमें अलग-अलग कार्यों के लिए विशेषज्ञ स्वत: ही उत्पन्न हो जाते हैं। उसी प्रकार शैक्षणिक क्षेत्र में किसी सूक्ष्म विषय को अधिक बेहतर समझने के लिए उसका तीक्ष्ण एवं गहन अध्ययन किया जाता है। विशेषज्ञता किसी विषय को गुणवत्ता तथा विकास के पथ पर ले जाती है। आजकल वैज्ञानिक केवल सामान्य वैज्ञानिक नहीं होते हैं, वे भौतिकवाद, रसायनज्ञ, जीव विज्ञानी आदि होते हैं। यह प्रवृत्ति यहीं समाप्त नहीं होती। सूक्ष्मतर क्षेत्रों में विशेषज्ञता, जिसे अति विशिष्टीकरण कहा जा सकता है, आज की मुख्य प्रवृत्ति बन गई है। अब तो शायद ही कोई सामान्य भौतिकवाद होता है। भौतिकी में नाभिकीय भौतिकवादी, सैद्धान्तिक भौतिकवादी, निम्नताप भौतिकवादी, या प्लाज्मा भौतिकविद् जैसे विशेषज्ञ ही मिलते हैं। प्रत्येक अनुशासन में परिलक्षित यह विखण्डन प्रवृत्तियाँ एक विकृत स्वरूप धारण कर चुकी हैं। ऐसी अति विशेषज्ञता यद्यपि सन्तुलित विकास के दृष्टिकोण से उपयुक्त नहीं है, किन्तु इससे अत्यधिक मात्रा में नवीन ज्ञान उत्पन्न हो रहा है। इस जटिल समाज में विशेषज्ञता का ही बोलबाला है हमें इसकी आवश्यकता है और यह हमें मिल भी रही है। विशेषज्ञता विखण्डन तथा पटलीकरण की निम्नलिखित विधियों द्वारा ही सम्भव होती है—

1.7.1.1 विखण्डन (Fission)—जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, इसमें नाभिकीय शृंखला प्रतिक्रिया की भाँति एक विषय क्रमानुसार छोटे-छोटे हिस्सों में विखण्डित होता जाता है। विखण्डन की क्रमिक प्रक्रिया में हम ज्ञान के विस्तृत क्षेत्र से सूक्ष्म क्षेत्रों की ओर बढ़ते जाते हैं। इस प्रक्रिया में लगे समय तथा खण्डों के आकार के आधार पर इसे निम्नलिखित दो स्वरूपों में विभाजित किया जा सकता है—

1.7.1.1.1 विच्छेदन (Dissection)—यह शब्द शरीर रचना विज्ञान से लिया गया है। किसी विषय को समान स्तर के अधीनस्थ हिस्सों की एक पंक्ति में बाँटना ही विच्छेदन कहलाता है। एक पूरी बड़े को (कमोबेश समान मोटाई की) फांकों में काटना विच्छेदन है। भौतिक विज्ञान का उसकी परम्परागत शाखाओं जैसे दृव्य गुणधर्म (Properties of Matter), ऊष्मा, प्रकाश, ध्वनि तथा विद्युत में विभाजन विच्छेदन का एक अच्छा उदाहरण है। पृथ्वी का सात घटक महाद्वीपों में विभाजन भी विच्छेदन का ही उदाहरण है। इस प्रकार उत्पन्न हुए प्रभाग समान जाति (genus) के, पारस्परिक अनन्य तथा समान स्तर के होते हैं। सरल शब्दों में, इस प्रकार उत्पन्न सभी भाग वर्गों/तत्त्वों की एक पंक्ति बनाते हैं। इसी तरह भारत का उसके घटक राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों में विभाजन विच्छेदन का ही उदाहरण है।

विच्छेदन की प्रक्रिया क्रियात्मक रूप में तत्क्षणिक तथा क्षैतिजिक होती है। रंगनाथन ने कभी-कभी विच्छेदन के लिए विखण्डन शब्द का ही प्रयोग किया है। किन्तु विच्छेदन एक बार में सम्पन्न होने वाली क्रिया (One Time Action) है।

1.7.1.1.2 अनाच्छादन (Denudation)—किसी एक वर्ग या तत्त्व (Entity) का लम्बे समय तक तथा बारम्बार विच्छेदन अनाच्छादन कहलाता है। इसमें किसी विषय की क्रमिक परतों को इस प्रकार उतारते हैं जैसे किसी अतल (bottomless) गहराई के तल तक पहुँचने का प्रयत्न किया जाए। यह बारम्बार विच्छेदन या संघर्षण (Attribution) का परिणाम हो सकता है। निम्नलिखित विषय शृंखला अनाच्छादन की प्रक्रिया को प्रदर्शित करती है जैसे—विज्ञान, भौतिकीय विज्ञान, रसायन विज्ञान, कार्बनिक रसायन, सुगंधित मिश्रण (Aromatic Compounds), बेन्जीनॉइड्स (Benzenoids), बेन्जीन आदि। यह पदानुक्रम में ऊपर से नीचे की ओर कार्य करते हुए क्रमिक अधीनस्थता में तत्त्वों की एक शृंखला उत्पन्न करता है—विश्व → एशिया → भारत → राजस्थान → कोटा। यह विभाजन अनाच्छादन है, जैसा पहले भी बताया जा चुका है। यह प्रक्रिया लम्बी तथा लगातार चलने वाली होती है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि विच्छेदन तथा अनाच्छादन दोनों ही सापेक्ष शब्द हैं, जो केवल मात्रानुसार भिन्न होते हैं। अनाच्छादन किसी वस्तु का बारम्बार विच्छेदन है। अतः विच्छेदन अनाच्छादन में समाहित है।

1.7.1.2 पटलीकरण (Lamination)—मुख्य वर्ग हमेशा विस्तृत, अस्पष्ट तथा विसरित होते हैं। जब किसी मुख्य वर्ग के अध्ययन क्षेत्र को एकानेक शीर्षकों के उल्लेख द्वारा सीमित किया जाता है तो वह मूल विषय से यौगिक विषय बन जाता है। किसी पैतृक मूल विषय के साथ एक अथवा अधिक एकलों को जोड़ने की प्रक्रिया को पटलीकरण कहते हैं। अंग्रेजी भाषा, भाषा मूलक व्याकरण तथा अंग्रेजी व्याकरण, यह तीनों उदाहरण मुख्य वर्ग भाषा विज्ञान के पटलीकृत विषयों के हैं। इन विषयों को मूल विषय भाषा विज्ञान पर 'अंग्रेजी', 'व्याकरण' तथा 'अंग्रेजी व्याकरण' की परत चढ़ाकर प्राप्त किया जाता है। रंगनाथन की शब्दावली में इनको यौगिक विषय कहा जाता है। अतः एक मूल विषय के साथ एक या अधिक एकलों को जोड़कर यौगिक विषय बन जाता है। किसी विषय के साथ जुड़ने वाली परतों की अधिकतम संया उस विषय के सम्भाव्य एकलों जितनी हो सकती है। किसी विषय में इन परतों की संख्या उसके विशिष्टीकरण के अनुपात में होती है। इस विषय जगत में सबसे बड़ी संख्या में पटलीकृत या यौगिक विषय ही होते हैं। यह वस्तुतः असंख्य होते हैं। सी०सी०, यू०डी०सी० या बी०सी० जैसे पक्षात्मक वर्गीकरणों में इन यौगिक विषयों की संरचना अत्यन्त स्पष्ट होती है। वस्तुतः यह दूसरी तरह का विशिष्टीकरण है जिससे विखण्डित विषयों के एक या अधिक पक्षों को पुनः एकीकृत किया जाता है। यह किसी मूल विषय में एक नवीन आयाम जोड़ते हैं।

1.7.2 अन्तर-अनुशासनात्मक वृद्धि (Inter-disciplinary Growth)

अन्तर-अनुशासनात्मक विषयों को ऐसे विषयों के रूप में भी परिभाषित किया जाता है जो या तो भिन्न-भिन्न अनुशासनों के विद्वानों की रुचि के हो अथवा इनके विपरीत तथ्य भी सत्य हों (Or vice-varsa)। विभिन्न विषयों में विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति इतनी अधिक हो गई थी कि विभिन्न विद्वान एक दूसरे से अलग अपने ढर्रे पर चलने लगे थे। यहाँ तक की एक ही क्षेत्र के विद्वान एक दूसरे के शोध कार्य के क्षेत्र को नहीं समझ पा रहे थे। विषयों में इतनी विशिष्ट शब्दावली (Too jargon ridden) प्रयुक्त होने वाली थी कि विद्वानों का आपस में सम्प्रेषण मुश्किल हो गया। इस प्रवृत्ति के अभावों को एक नई प्रवृत्ति अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययन, जिसने विशेषकर पिछले विश्व युद्ध के बाद जोर पकड़ा, के द्वारा सन्तुलित किया जा रहा है। इस कारण विषयों की आडी-तिरछी सीमाएँ हो गई हैं तथा

नोट-

पूर्व में प्रचलित स्पष्ट सीमांकन का विचार ही समाप्त हो गया है। टीम तथा रिले रिसर्च, विशेषज्ञों तथा संस्थानों के मध्य निकट सहयोग तथा विषय परामर्शदाताओं की उपलब्धता के कारण विद्वानों के लिए अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययनों हेतु मिलकर काम करना सम्भव हो सका है। अब तो इंटरनेट ने दूरियों के विचार को ही निरर्थक बना दिया है। सूचना के निर्बाध प्रवाह से अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययनों पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा है। विषयों के सानिध्य (Juxtaposition) में ज्ञान का विकास होता है। महान फ्रांसिसी दार्शनिक डेनिस डिडरोट (Denis Diderot) ने ही कहा है कि वस्तुएँ अपने से भिन्न वस्तुओं द्वारा पोषित होती हैं। (Things are nourished by things unlike themselves.) डॉ० रंगनाथन ने इन विषयों के निर्माण की निम्नलिखत दो विधियों की पहचान की है—

1.7.2.1 शिथिल समुच्चय (Loose Assembage)—दो या अधिक विषयों या उनके हिस्सों का थोड़ा अस्थायी, आकस्मिक या संयोगवश किन्हीं सम्बन्धों, जैसे प्रभाव तुलनात्मक, झुकाव, उपकरण या फिर अन्य अपरिभाषित सम्बन्धों द्वारा संयोजन शिथिल समुच्चय कहलाता है। यह सुयोग्य विषय भिन्न अनुशासनों से होते हैं। उदाहरणार्थ पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु सांख्यिकी, नर्सों हेतु मनोविज्ञान, पुस्तकालय संचालन में कम्प्यूटर का प्रभाव, प्रसूचीकरण व वर्गीकरण के मध्य सम्बन्ध तथा व्यापारिक अंग्रेजी ऐसे ही कुछ विषय हैं। यह पारस्परिक क्रियाशील विषय एक ही मुख्य वर्ग से या दो भिन्न-भिन्न मुख्य वर्गों से हो सकते हैं। ऐसे उदाहरणों में एक विषय का अध्ययन दूसरे विषय के प्रकाश में किया जाता है तथा यहाँ उनका मिलना या इकट्ठा होना तदर्थ या शिथिल कहा जा सकता है। ऐसे विषय अनिवार्यत: बहुपक्षीय तथा अन्तर अनुशासनात्मक रुचि के होते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा असीमित संख्या में विषयों का निर्माण किया जा सकता है। रंगनाथन ने शिथिल समुच्चय की प्रक्रिया द्वारा बनने वाले विषयों को जटिल विषय नाम दिया है। मिश्रित विषय का प्रत्येक घटक एक दशा (Phase) कहलाता है। विषयों के मध्य कुल तीन अन्तर-विषय, अन्त: पक्ष, तथा अन्त: पंक्ति स्तरों पर छ: प्रकार के सम्बन्ध जैसे—सामान्य, झुकने वाले, तुलनात्मक, विभिन्नता वाले, उपकरण तथा प्रभाव वाले सम्बन्ध हो सकते हैं। इस प्रकार रंगनाथन ने सी०सी०-7 में कुल $6 \times 3 = 18$ प्रकार के जटिल विषयों की पहचान की है।

1.7.2.2 विलयन (Fusion)—विलयन, शिथिल समुच्चय की उन्नत अवस्था है। जब शिथिल समुच्चय के सम्बन्ध दृढ़ होकर स्थायी सम्बन्धों में बदल जाते हैं तथा उनके विभिन्न घटक अनुत्क्रमणीय रूप में एक-दूसरे में विलीन होकर, एक नितान्त नए विषय को जन्म देते हैं जिसके अपने विशिष्ट एकल तथा लिटरेरी वारंट होते हैं तो ऐसे विषयों को विलयित विषय कहा जाता है। विलयित विषय जटिल वर्गों से बढ़कर मूल विषय बन जाते हैं। जैव भौतिकी, जैव रसायन, चिकित्सकीय भूगोल, जैव अभियांत्रिकी, भू राजनीति विज्ञान, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी ऐसे ही कुछ समरूप तथा अनुत्क्रमणीय सम्बन्धों से उत्पन्न विलयित मुख्य विषयों के उदाहरण हैं। यह विषय जटिल विषय से विलयित होकर मूल विषय बन गए हैं।

1.7.2.2.1 जन्मजात विलयित विषय (Born Fused Subjects)—कुछ विषय शुरू से ही पक्ष विलीन (Melded) होते हैं तथा उनके लिए प्रयुक्त शब्दावली से उनके एकाकी होने का ज्ञान होता है। जैसे भाषा विज्ञान का जन्म भाषा शास्त्र (Philology), तथा दर्शनशास्त्र, दोनों के विलयन से हुआ था। अत: भाषा विज्ञान एक विलयित विषय है जिसने आगे चलकर अन्य विलयित विषयों जैसे मनो भाषा विज्ञान तथा सामाजिक भाषा विज्ञान को जन्म दिया।

यद्यपि विलयन एक तथ्य (Phenomenon) के रूप में अत्यन्त प्राचीन विचार है किन्तु विषयों की उत्पत्ति की विधि के रूप में इसकी पहचान 1968 में की गई थी। दरअसल, पूर्व में कोलन क्लासीफिकेशन में विलयन को शिथिल समुच्चय के अन्तर्गत रखा गया था।

1.7.3 बहु-अनुशासनात्मक वृद्धि (Multidisciplinary Growth)

अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में डॉ० रंगनाथन ने डॉक्यूमेन्टेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग सेन्टर, बंगलुरु (स्थापित 1962) के सहयोगियों के साथ विषय निर्माण की तीन अतिरिक्त विधियों की पहचान की थी। यह तीनों विधियाँ नवीनतम शोध प्रवृत्तियों के अनुसार बहु-अनुशासनात्मक स्वभाव की हैं। ऐसे विषय जिनमें विभिन्न अनुशासनों के विशेषज्ञों की विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है, बहु-अनुशासनात्मक विषय कहलाते हैं। शोध के क्षेत्र में 'नवीनतम फैशन-क्षेत्र-अध्ययन' अथवा 'मिशिन अभिमुख अध्ययन', ऐसे मुख्यत: अनुप्रयुक्त स्वभाव के विषयों के प्रादुर्भाव के लिए उत्तरदायी हैं। वृहद् टीम कार्य, बड़ी शोध परियोजनाओं हेतु आर्थिक अनुदान, सैद्धान्तिक तथा अनुप्रयुक्त शोध की पारस्परिक क्रियां (Interaction) के कारण भी ऐसे विषय उत्पन्न होते हैं। बहु-अनुशासनात्मक विषय निर्माण की यह तीनों विधियाँ निम्न प्रकार हैं—

1.7.3.1 आसवन (Distillation)—जब अपेक्षाकृत अपूर्ण रूप से विकसित तकनीक विभिन्न अनुशासनों में प्रयुक्त होने के कारण विकसित होने लगती है। तब इसका अपना साहित्य विभिन्न अनुप्रयोगों से आसवित होता है। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप, जब यह साहित्य पर्याप्त मात्रा में इकट्ठा हो जाता है तो यह एक मुख्य वर्ग का स्थान (Status) प्राप्त कर लेता है। ऐसे मुख्य वर्ग को आसवित मुख्य वर्ग कहते हैं। इन मुख्य वर्गों के निर्माण की प्रक्रिया अत्यन्त धीमी होती है। संग्रहालय विज्ञान, प्रबन्ध विज्ञान, जीवनवृत्ति विज्ञान (Careerology), पुरातत्त्व विज्ञान, सेमीनार तकनीक, शोध पद्धति विज्ञान, कोलन क्लासीफिकेशन में शामिल किए गए आसवित मुख्य वर्गों के कुछ उदाहरण हैं। इनको मुख्य वर्गों की पंक्ति की नवीन प्रविष्टियाँ कहा जा सकता है। यह स्वाभाविक रूप से बहु-अनुशासनात्मक होते हैं क्योंकि इन्हें विभिन्न अनुशासनों के अनुभवों द्वारा पोषित किया जाता है। यद्यपि विलयित विषयों के विपरीत इनके नाम एकाकी प्रतीत होते हैं। इनका बहु-अनुशासनात्मक स्वभाव भीतर की विषय-वस्तु से परिलक्षित होता है बाहरी नाम से नहीं।

1.7.3.2 संचयन (Agglomeration)—परम्परागत रूप से तथा कई बार आवश्यकतानुसार कुछ समान स्तर के मूल विषय एक समूह के रूप में साथ प्रतीत होते हैं। यह विषय न तो शिथिल समुच्चय में और न ही विलयित अवस्था में होते हैं। अपने अन्त: सम्बन्धों में यह नितान्त अक्रिय होते हैं। कजन (Cosin) की तरह यह सम्बन्धित होते हैं। किन्तु अन्तर-प्रजनन नहीं करते। परम्परागत निकटता इनमें एक दूसरे के प्रति अवहेलना का भाव लाती है यद्यपि यह शत्रुता तक नहीं पहुँचता। पादप विज्ञान (Plant Science), (वनस्पति विज्ञान, कृषि विज्ञान, उद्यान विज्ञान, वानिकी), गणितीय तथा भौतिकीय विज्ञान, मानविकी, धर्मशास्त्र तथा दर्शनशास्त्र, भूगोल तथा इतिहास, जैव तथा चिकित्सकीय विज्ञान, संचयन अथवा आंशिक समावेशन के कुछ उदाहरण हैं। सामान्यत: एक आंशिक समावेशित वर्ग के घटक क्रमिक मुख्य वर्ग होते हैं। यह समान जातिगत (Generic) स्वभाव के भी होते हैं जैसे सामाजिक विज्ञान, जीवन विज्ञान। कोलन क्लासीफिकेशन में ऐसे अनेक विषय अनेक स्तरों पर दिए गए हैं। संचयित विषयों को विखण्डित विषयों के पुन: एकीकरण के रूप में भी देखा जा सकता है। रंगनाथन का मानना है कि "आज जो आंशिक समावेशन है वह बहुत पहले विखण्डन की प्रक्रिया के समुचित रूप से विकसित होने से पहले, एक मुख्य विषय रहा होगा।" ऐसे विषय सामान्यत: पत्रिकाओं के शीर्षक तथा विश्वकोशों में ही दिखाई देते हैं। आंशिक समावेशित विषयों को नई शब्दावली में संग्रहित विषय भी कहा जाता है। संचयित विषयों के अपने स्वयं के एकल नहीं होते, यद्यपि इनको मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

नोट-

1.7.3.3 विषय समूह (Subject Bundles)—रंगनाथन एवं गोपीनाथ के अनुसार, "विषय समूह के अन्तर्गत अलग-अलग विशेषज्ञों द्वारा विकसित अलग-अलग अनुशासनों से लिए गए विषय आते हैं।" ऐसे विषय एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं और या तो दूसरे विषयों में इनका अनुप्रयोग होता है या फिर यह दूसरे विषयों के साथ मिलकर समान उद्देश्य के लिए कार्य करते हैं। यह एक-दूसरे के सम्बन्ध में अक्रिय नहीं होते। यह एक नाम के अन्दर अनेक विषयों का शिथिल समुच्चय है। यह सामान्यत: अनुप्रयुक्त स्वभाव के क्षेत्र अध्ययन अथवा मिशन अभिमुख अध्ययन होते हैं। यह एक व्यापक आधार वाली शोध टीम द्वारा शुरू की गई महँगी शोध परियोजना के रूप में भी हो सकते हैं। ऐसी परियोजनाएँ "वृहद् विज्ञान" (Big Science) के क्षेत्र में आती हैं। आरम्भिक अवस्था में प्रत्येक विशेषज्ञ या उनके ग्रुप का एक निर्धारित कार्य क्षेत्र होता है। सी०सी०-7 में प्रदर्शित कुछ विषय समूह इस प्रकार हैं जैसे—भूतल विज्ञान (Surface Science), सामाजिक विज्ञान, द्रव्य विज्ञान (Material Science), भू विज्ञान, जल विज्ञान, समुद्र विज्ञान, गहन समुद्र विज्ञान, वायुमण्डलीय विज्ञान, रक्षा विज्ञान। टेनिसी वैली (Tennessee Valley) परियोजना, अन्टार्कटिक अभियान, अपोलो मिशन, गांधी अध्ययन, भारतीय विद्या, चीन विद्या, पर्यावरण अध्ययन, ऊर्जा विज्ञान, महिला अध्ययन, क्षेत्र अध्ययन आदि यह विषय समूह के कुछ प्रयोगात्मक उदाहरण हैं। इनको विषय झुण्ड (Subject Science) भी कहा जाता है। अब इन विषयों की लिटरेरी वारंट भी होने लगी है। इसी सन्दर्भ में डॉ० रंगनाथन एवं गोपानाथ द्वारा उद्धित दो उदाहरण हैं—

1. मिशन सार्स नॉर्थ एटलांटिक डीप सी एक्सपीडिशन (1910) : रिपोर्ट ऑन द साइन्टिफिक रिजल्ट्स, 1932.
2. इंडियन ओसन एक्सपीडिशन रीसेन्ट प्रोग्रेस इन सर्फेस साइन्सेज, 1964

क्षेत्र में हो रहे नवीन विकास का परिणाम है। दूसरे शब्दों में, ऐसे विषय प्रकाशकों द्वारा उत्पन्न किए गए हैं न कि शोधकर्त्ताओं व शिक्षाशास्त्रियों द्वारा। लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है। ज्ञान की जटिलता हमेशा उसका सामना करने के लिए बनाए गए सामाजिक साधनों से आगे रहती है। यह तो शोध प्रवृत्तियाँ अथवा सामाजिक आवश्यकताएँ हैं जो कि प्रकाशन उद्योग पर रचनात्मक प्रभाव डालते हैं, जबकि इसके विपरित स्थिति सत्य नहीं हो सकती। शोध प्रवृत्तियाँ सामाजिक आवश्यकताओं द्वारा प्रक्षेपित होती हैं। उदाहरणार्थ, विषय समूह सामाजिक आवश्यकता तथा भारी वित्तीय उपलब्धता के कारण अस्तित्व में आए। प्रकाशक तो केवल लेखकों, सम्पादकों तथा शोधकर्त्ताओं के मार्गदर्शन में चलते हैं।

1.8 ज्ञान की विशेषताएँ Characteristics of Knowledge

ज्ञान के समस्त विखण्डित भागों को जोड़कर एक वृहद् समग्रता प्राप्त की जा सकती है। जे०एच० शेरा (1903-81) का मानना है कि ज्ञान में एकत्व (Unity) का भाव होता है। दूसरे शब्दों में, ज्ञान का सम्पूर्ण विस्तार एकतन्त्र की भाँति होता है जिसकी अपनी निश्चित विशेषताएँ निम्नानुसार होती हैं—

1. ज्ञान स्वतन्त्र नहीं होता, यह ज्ञाता अर्थात् व्यक्ति आधारित होता है। यह व्यक्ति सापेक्ष है तथा उसकी बुद्धि (Mind) में रहता है।
2. यह मानव समाज द्वारा संरक्षित होता है। अत: यह स्वभावत: सामाजिक होता है।
3. ज्ञान कभी पूर्ण नहीं होता, यह आंशिक होता है। यह गतिशील, बहुआयामी तथा परिवर्तनशील होता है। यह समय तथा समाज के साथ परिवर्तित होता रहता है।
4. इस प्रकार यह अक्षय (अर्थात् कभी समाप्त नहीं) होता है। दूसरे शब्दों में यह अनन्त होता है।

नोट-

5. प्रौद्योगिकी, सामाजिक उन्नति तथा ज्ञान की खोज, आपस में एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं। ज्ञान अपने भौतिक तथा सामाजिक, दोनों परिवेश में उत्पन्न होता है। व्यक्ति ज्ञाता है तथा प्रकृति (समाज सहित) ज्ञान का मूल स्रोत है, हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञान की अनुभूति करने वाले अपरिष्कृत उपकरण कहे जा सकते हैं।
6. जब ज्ञाता अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रकृति के सम्पर्क में आता है तो सूचना उत्पन्न होती है। इस प्रकार प्राप्त सूचना उसके मस्तिष्क में पहले से संरक्षित ज्ञान के साथ, उपयोग तथा प्रमाणिकता (Validation) के लिए एकीकृत होती है। इस तरह, ज्ञान का रचभसाव सामाजिक-जैविक होता है। समाज ज्ञान का उत्पादक तथा उपभोक्ता दोनों है जबकि ज्ञान सभी सामाजिक गतिविधियों का मुख्य नियन्ता (Prime Mover) होता है। अत: समाज तथा ज्ञान दोनों आपस में एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। इनके सम्बन्ध में एकतरफा प्रभाव की पहचान कर पाना सम्भव नहीं है, जैसे-जैसे समाज विकसित होता है, साथ ही ज्ञान भी विकसित होता है जबकि नव उत्पादित ज्ञान से समाज में परिवर्तन होते हैं तथा उसका विकास होता है। यह निर्णय तो समाज करता है कि उसे किस प्रकार का, किस दिशा में, तथा कितना ज्ञान चाहिए तथा वही विभिन्न श्रेणियों के ज्ञान के लिए मूल्यों के मापदण्ड निर्धारित करता है। इस प्रकार, ज्ञान के विकास के प्रमुख क्षेत्र सामाजिक मूल्यों तथा प्राथमिकताओं पर निर्भर करते हैं।

1.9 पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु ज्ञान के अध्ययन का महत्त्व
Importance of Knowledge Studies for Librarians

ज्ञान लिखित एवं मौखिक दोनों प्रकार का होता है (जनजातीय समाज आज भी मौखिक रूप में ही अपने ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं)। पुस्तकालयाध्यक्ष केवल लिखित ज्ञान अर्थात् प्रलेखों से ही सम्बन्ध रखते हैं। पुस्तकालयाध्यक्षों एवं सूचना पेशेवरों के लिए तो ज्ञान ही उनके पेशे का मुख्य साज़ोसामान (Stock in trade) है। इसलिए हम पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु ज्ञान एवं उसकी विशेषताओं व संरचना का अध्ययन निश्चय ही महत्त्वपूर्ण है। प्रो० जे०एच० शेरा (1903-81) का कहना है कि पुस्तकालय एवं सूचना पेशेवरों हेतु ज्ञान की प्रकृति का अध्ययन उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि एक सर्जन के लिए शरीर-रचना विज्ञान (Anatomy) का अध्ययन। अत: एक पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में हमें ज्ञान की प्रकृति उसकी संरचना तथा स्रोतों के बारे में जानना जरूरी है। केवल तभी हम इसका प्रभावी रूप से संग्रह, व्यवस्थापन तथा प्रसार कर सकेंगे। इसके महत्त्व को जानते हुए डॉ० एस०आर० रंगनाथन ने 1940 के दशक में ही ज्ञान जगत के अध्ययन को एक पूर्ण पेपर के रूप में पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान की स्नातकोत्तर उपाधि के पाठ्यक्रम में स्थान दिया था।

1.10 ज्ञानवर्धन की विधियाँ Modes of Growth of Knowledge

ज्ञान में निरन्तर वृद्धि हो रही है। नए विषय जन्म ले रहे हैं। डॉ० रंगनाथन ने विभिन्न प्रकार के विषयों के निर्माण की अनेक विधियों की पहचान की थी, जो निम्न प्रकार हैं—

1. विशिष्टीकरण (Specialization)
   (i) अनाच्छादन (Denudation) द्वारा
   (ii) विच्छेदन (Dissection) द्वारा
   (iii) पटलीकरण (Lamination) द्वारा

2. अन्तर-अनुशासनात्मक विधि (Interdisciplinary Mode)
   (i) शिथिल समुच्चय (Loose assemblage) द्वारा
   (ii) विलयन (Fusion) द्वारा
3. बहु-अनुशासनात्मक विधि (Multidisciplinary Mode)
   (i) आसवन (Distillation) द्वारा
   (ii) संचयन (Agglomeration) द्वारा
   (iii) विषय समूह (Subject bundles) द्वारा

विषय निर्माण की विधियों का विषयों की संरचना पर काफी प्रभाव पड़ता है। विषय निर्माण की इन विधियों की व्याख्या इस इकाई में दी गई है।

1.11 ज्ञान जगत का चित्रण Mapping of Universe of Knowledge

जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है ज्ञान सदैव वर्धनशील, परिवर्तनशील तथा नवीन बना रहता है। नए विषय लगातार उत्पन्न होते रहते हैं और पुराने विषयों की स्थिति एवं संरचना बदलती रहती है। सम्पूर्ण ज्ञान का कोई ऐसा सार्वभौमिक स्वरूप (Universal Pattern) नहीं होता जिसमें सभी चीजें सभी उपभोक्ताओं के लिए हों। पदानुक्रम (Hierarchy) तो संरचना का मात्र एक स्वरूप है। इसलिए प्रत्येक विषय अपनी संरचना में परिवर्तन करता रहता है तथा विषयों के मध्य सम्बन्ध भी भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से देखे जा सकते हैं। किसी समाज में प्रचलित विचारधारा, भौतिक संस्कृति, आर्थिक एवं प्रौद्योगिकी सम्बन्धी आवश्यकताएँ, विश्व दृष्टि (Comic vision) इतिहास की समझ तथा सामाजिक मूल्यों द्वारा उस समाज में उपलब्ध ज्ञान की स्थिति तथा संरचना प्रभावित होती है। प्रत्येक युग तथा समाज का ज्ञान के प्रति एक पृथक् दृष्टिकोण होता है। उदाहरणार्थ मध्यकाल में धर्मशास्त्र (Theology) को सभी विज्ञानों की रानी माना जाता था तथा अन्य विषयों का मूल्यांकन उनकी इस सामर्थ्य पर निर्भर करता था कि वह धर्मशास्त्र के विकास में कितना योगदान कर सकते थे। प्राकृतिक विज्ञानों को समय की बर्बादी करने वाला माना जाता था तथा उनको अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। यहाँ तक मेलविल ड्यूई (1851-1931) के समय 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भी दर्शनशास्त्र तथा धर्मशास्त्र को अत्यन्त प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि ड्यूई द्वारा मापिए ज्ञान जगत में इन दोनों वर्गों को मिलाकर कुल वर्गों का 1/5वाँ हिस्सा प्रदान किया गया था। इसके विपरीत आज प्राकृतिक विज्ञानों तथा उनके आर्थिक एवं तकनीकी निहितार्थ के अध्ययन को अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। आज तो विज्ञान का ही महत्त्व है तथा कुछ धर्मनिरपेक्ष देशों में तो कहा जा सकता है कि उन्हें राष्ट्रीय धर्म का दर्जा प्राप्त है। शोध समस्याओं के समाधान तथा नवीन ज्ञान की खोज के लिए अन्वेषण की अनुभव सिद्ध (Empirical) तथा प्रयोगात्मक (एक्सपेरिमेंटल) विधियों को विश्वसनीय माना जाता है। आजकल ज्ञान के स्रोत के रूप में प्राधिकार (Authority), विश्वास तथा अन्तर ज्ञान Intuition) को संदेह की नजरों से देखा जाता है। अत: कहा जा सकता है कि किसी भी विषय का माज में हमेशा एक सा स्थान नहीं रहता। कुछ विषय जो एक समय ज्ञान के केन्द्र बिन्दु हुआ करते थे, ब हाँसिए पर चले गए हैं। एक समय औद्योगिक उत्पादन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था किन्तु आज पर्यावरण ध्ययन, प्रबन्धन, जैव प्रौद्योगिकी तथा ऊर्जा के अपरम्परागत (Non-conventional) स्रोतों पर शोध ो विषय महत्त्वपूर्ण होते जा रहे हैं। आज के सूचना समाज में मानव संसाधन, मानवापशु अधिकार ना, अर्थव्यवस्था तथा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी जैसे विषयों को व्यापक स्वीकृति मिल रही है।

नोट-

ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धान्त निम्न प्रकार हैं—

1.11.1 वर्गीकरण पद्धतियों का अस्थायी स्वभाव

(Classification Systems are Impermanent)

जैसा पहले बताया जा चुका है नवीन ज्ञान की उत्पत्ति के साथ-साथ तत्कालीन विषयों की स्थिति तथा उनके महत्त्व में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। विषयों के मध्य समीकरण सदैव परिवर्तनशील होते हैं। उदाहरणार्थ ऐसे अनेकों विषय जैसे सार्वजनिक स्वास्थ्य, अन्तर्राष्ट्रीय विधि भू-राजनीतिशास्त्र, जनसांख्यिकी (Demography) जिन्हें कोलन क्लासीफिकेशन के छठवें संस्करण (1960) में यौगिक या मिश्रित विषयों का दर्जा प्राप्त था, इसी वर्गीकरण पद्धति के सातवें संस्करण (1987) में मूल विषय (Basic Subject) के स्तर पर पहुँच गए हैं। डी०डी०सी० में भी ऐसे अनेकों उदाहरण दिए गए हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि ज्ञान की संरचना सदैव परिवर्तनशील होती है।

वर्गीकरण पद्धति निश्चय ही ज्ञान का चित्रण करती है तथा उसका मानचित्र है। यह ज्ञान के विश्लेषण एवं चित्रण का एक उपकरण है। इसलिए जैसे-जैसे ज्ञान जगत में खाली स्थानों को भरते हुए ज्ञान में वृद्धि होती है, हमें नई वर्गीकरण पद्धतियों की या उपलब्ध प्रणालियों में समायोजन (Adjustment) तथा बदलाव की आवश्यकता पड़ने लगती है। ऐसे में हमें न केवल वर्गीकरण पद्धति तकनीकों की भी खोज करनी पड़ती है।

एस०आर० रंगनाथन ने 19वीं शताब्दी के साहित्य के वर्गीकरण हेतु डी०डी०सी० को सर्वोत्तम पद्धति माना था। साथ ही उन्होंने 20वीं शताब्दी विशेषकर विश्व युद्धों के पश्चात् के समय के ज्ञान के वर्गीकरण हेतु इसे सर्वथा अनुपयुक्त पाया था। इस प्रकार 20वीं शताब्दी को नवीन वर्गीकरण प्रणालियों व तकनीकों की आवश्यकता पड़ी थी और अब 21वीं शताब्दी को भी नवीन ज्ञान, विशेषकर इन्टरनेट के व्यवस्थापन हेतु नई वर्गीकरण पद्धतियों की आवश्यकता होगी। जहाँ तक ज्ञान की संरचना का प्रश्न है, एकीकृत ज्ञान (Unified Knowledge) के कुछ निश्चित आधारों को जानने के लिए हमें अपने विश्लेषण को एक संस्कृति के केवल एक कालखण्ड (Epoch) तक सीमित करना होगा।

1.11.2 ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धान्त

(Principles for Mapping the Universe of Knowledge)

एक प्रसिद्ध अंग्रेज पुस्तकालयाध्यक्ष डी० डब्ल्यू० लैंग्रिज (1925-2001) ने ज्ञान जगत के चित्रण के चार सिद्धान्तों की पहचान की है। वैसे इन सिद्धान्तों में पारस्परिक अनन्यता (Mutual Exclusiveness) नहीं है। ज्ञान जगत के चित्रण के सिद्धान्त निम्न प्रकार हैं—

1.11.2.1 वैचारिक सिद्धान्त (Ideological Principle)—यह सिद्धान्त किसी विचारधारा या विशिष्ट चिन्तन पद्धति पर आधारित होते हैं। पूर्व में, मध्य युग की इसाई पद्धतियाँ इसके प्रमुख उदाहरण हैं। जबकि रूसी वर्गीकरण पद्धति बी०बी०के० इसका नवीनतम उदाहरण है जिसमें मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा को ज्ञान जगत का केन्द्र माना गया है। कुछ सीमा तक प्रत्येक पद्धति किसी-न-किसी विचारधारा पर आधारित होती है। कोई भी वर्गीकरण पद्धति अपनी उत्पत्ति के काल तथा संस्कृति से स्वतन्त्र या मूल्य निरपेक्ष नहीं हो सकती। प्रत्येक पद्धति अपने समाज तथा उसके मूल्यों व संस्कृति की ओर झुकाव रखती है। इसी कारणवश ड्यूई डेसीमल क्लासीफिकेशन को अफ्रीकी तथा एशियाई विषयों के वर्गीकरण के लिए परिवर्तित तथा अनुकूलित करना पड़ा।

1.11.2.2 सामाजिक प्रयोजन का सिद्धान्त (Principle of Social Purpose)—वैदिक पद्धति (1500 ईसा पूर्व) इस सिद्धान्त का एक अच्छा उदाहरण है जिसमें ज्ञान को चार श्रेणियों में विभक्त किया गया है धर्म (नियामक सिद्धान्त), अर्थ (सामाजिक विज्ञान), काम [सैद्धान्तिक विज्ञान (Pure Sciences) तथा कलाएँ] और मोक्ष (आध्यात्मिक ज्ञान)। यह वर्गीकरण की एक मोटी रूपरेखा प्रस्तुत करता है जिसमें ज्ञान को उसकी घटती सामयिक सामाजिक उपयोगिता (Decreasing current social utility) तथा भविष्य में बढ़ते उपयोग की सम्भाव्यता (Increasing potential for future use) के आधार पर व्यवस्थित किया गया है। यह एक सैद्धान्तिक वर्गीकरण है तथा किसी भी पुस्तकालय वर्गीकरण या दार्शनिक ज्ञान वर्गीकरण का आधार नहीं रहा है। रंगनाथन इससे थोड़ा प्रभावित जरूर थे परन्तु उन्होंने कोलन क्लासीफिकेशन में वर्गीकरण के आधार के रूप में इसका कभी उपयोग नहीं किया।

1.11.2.3 वैज्ञानिक अनुक्रम का सिद्धान्त (Principle of Scientific Order)—यह वैज्ञानिक अनुक्रम का सिद्धान्त विषयों के कुछ प्राकृतिक एवं तर्कसंगत क्रम पर आधारित है। इसके मूल तत्त्वों को सर्वप्रथम ई०सी० रिचर्डसन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (Classification : Theoretical and Practical") (1901) में प्रतिपादित किया था। सी०ए० कटर ने मुख्यवर्गों के विकास क्रम (Evolutionary Order) को अपने एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन (1893) में प्रयुक्त किया था। कटर का यह मानना था कि प्रकृति में चीजों का एक क्रम होता है और यह क्रम ज्ञान के व्यवस्थापन में भी परिलक्षित होना चाहिए। उनकी वर्गीकरण पद्धति इस पूर्वधारणा (Assumption) पर आधारित है: "Order of science is the order of things and order of things is the order of their complexity." यह निश्चित ही प्रकृति विज्ञानी चार्ल्स डार्विन (1809-82) के सिद्धान्त 'Theory of origin of species' से प्रभावित थी। प्रकृति में तत्त्व परमाणुविक स्वरूप में आणविक और फिर सम्पूर्ण पदार्थ (Molar form) में विकसित हुए हैं। इन सिद्धान्तों का थोड़ा बहुत प्रयोग जे०डी० ब्राउन (1862-1914) ने अपने सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन (1906) तथा एच०ई० ब्लिस (1870-1955) ने अपने बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन (1935) में किया था। लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस क्लासीफिकेशन में भी वर्ग विन्यास इसी सिद्धान्त पर आधारित है। डी०डी०सी० तथा सी०सी० में वनस्पति विज्ञान व प्राणी विज्ञान में वर्गों का क्रम मुख्यत: वर्गीकीय (Taxonomic) है। किन्तु इस सिद्धान्त के पूर्ण निहितार्थों (Implications) को खोजने का काम लंदन स्थित क्लासीफिकेशन रिसर्च ग्रुप (सी०आर०जी०) (स्थापित 1955) द्वारा किया गया जब यह समूह सामान्य वर्गीकरण पद्धतियों की समस्याओं को सुलझाने तथा एक नई वर्गीकरण पद्धति की अभिकल्पना (Design) करने का प्रयास कर रहा था। इस अस्पष्ट से, विकास क्रम के सिद्धान्त का जे०ई०एल० फैराडेन (1906-89) ने अपनी पुस्तक 'Theory of Integrative Level' में अत्यन्त गहन अध्ययन कर, उसकी सुस्पष्ट परिभाषा दी है। इस सिद्धान्त का उद्देश्य था कि "...identity all the entities or object of knowledge in existence, and to order them by means of a theory and thus provide a structure of knowledge." निश्चय ही यह सिद्धान्त मुख्य रूप से प्राकृतिक वस्तुओं पर लागू होता है जो भौतिक रूप से विकसित होती हैं। यह उन सामाजिक चीजों पर भी लागू हो सकता है जो स्पष्टत: एक धीमे सामाजिक विकास (social evolution) की दशा में निरन्तर रहती हैं।

1.11.2.4 अनुशासनानुक्रम का सिद्धान्त (Principle of Arrangement by Disciplines)—अनुशासन (Disciplines) अध्ययन के समान उद्देश्यों वाले या एक ही विधि से निर्मित विषयों के ज्ञान वृहद् एवं सम्बद्ध खण्ड को कहते हैं। मेलविल ड्यूई (1851-1931) द्वारा ज्ञान को अनुशासनानुसार

नोट-

विभाजित करना उनका एक महत्त्वपूर्ण योगदान था। डी०डी०सी० के अनुसार 'A discipline is an organized field or study or branch of learning dealing with specific kinds of subject and/or subjects considered from specific points of view." अनुशासन ज्ञान को तार्किक रूप से भिन्न ऐसे क्षेत्रों में विभक्त करता है जिनकी प्रमुख विशेषता, उनकी कुछ विशिष्ट धारणाएँ, संरचना तथा विधियाँ हैं जिनसे नए ज्ञान को सत्यापित कर उसे वृहद् स्वीकृति प्रदान की जा सके।

पुस्तकालय उपयोगकर्त्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तथा सूचना पुनर्प्राप्ति की समस्याओं के बेहतर हल के लिए आनुशासनानुसार विभाजन एक उपयुक्त उपाय हो सकता है। इस विधि का प्रतिपादन सर्वप्रथम प्रसिद्ध अंग्रेज दार्शनिक, लेखक तथा वैज्ञानिक फ्रांसिस बेकन (1561-1626) ने अपनी पुस्तक 'Advancement of Learning' (1605) में किया। उन्होंने ज्ञान की तत्कालीन स्थिति तथा उसके विकास के साधनों का गहन अध्ययन किया। उनका सुझाव था कि बुद्धि (Mind) की तीन क्षमताओं (Faculties), कल्पना (Imagination) तथा विवेक (Reason) पर आधारित ज्ञान के भी तीन प्रकार (वृहद् अनुशासन) होते हैं जिनको सम्बन्धित क्षमता के अनुरूप इतिहास, कला तथा विज्ञान में विभाजित किया जा सकता है। हालाँकि यह अब भी विवाद का विषय है कि क्या यह अनुशासन आपस में स्वतन्त्र तथा पारस्परिक अनन्य (Mutually exclusive) हैं और विलय के पश्चात् एकीकृत होकर सम्पूर्ण ज्ञान (Integrated whole of knowledge) बनाते हैं। चाहे जो भी हो यह कहा जा सकता है कि अनुशासनानुसार ज्ञान का विभाजन विद्वानों द्वारा प्रयुक्त प्रवृत्तियों के अनुरूप है तथा यही विश्वविद्यालयों की शैक्षिक व्यवस्था में भी अभिव्यक्त होता है।

Universe of knowledge as mapped in different classification shemes (DDC, UDC, CC, LCC).

विभिन्न पद्धतियाँ अलग-अलग सिद्धान्तों को मानते हुए अपने ढंग से ज्ञान जगत का चित्रण एवं निरूपण करती हैं।

1.11.3 डी०डी०सी० में चित्रण (Mapping in the DDC)

मेलविल ड्यूई ने अपने वर्गीकरण का आधार, समकालीन हीगलवादी दार्शनिक डब्ल्यू०टी० हैरिस (1835-1909) के द्वारा प्रतिपादित बेकन के व्युत्क्रमित विषयक्रम (Inverted Baconian Order) को बनाया। इसमें ज्ञान को सबसे पहले अनुशासनानुसार विभाजित किया गया है जो किसी भी पुस्तकालय वर्गीकरण पद्धति में पहली बार किया गया था। अनुशासनानुसार विभाजन में विभिन्न विषय अलग-अलग वर्गों में बिखर जाते हैं।

बुद्धि की तीन क्षमताओं द्वारा उत्पन्न तीन वृहद् प्रभाव हैं—

मुख्य वर्ग	अनुशासन	मानसिक क्षमता
100-600	विज्ञान	विवेक
700-800	कला एवं साहित्य	कल्पना
900	इतिहास	स्मृति

वास्तव में, विविध वर्ग 0 (शून्य) तथा उसके बाद 1-9 तक कुछ दस मुख्य वर्ग हैं। यह दस मुख्य वर्ग 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध की पश्चिमी दुनिया में शैक्षिक सर्वसम्मति (Educational Consensus) को दर्शाते हैं। डी०डी०सी० के मुख्य वर्ग अनुशासन हैं जो उप अनुशासन में तथा प्रत्येक उप अनुशासन पुनः विषयों व उनके पक्षों में विभक्त किए गए हैं। अनुशासन किसी विषय को समुचित संदर्भ में प्रस्तुत करते हैं।

नोट-

1.11.3.1 दशमलव अंकन की अपरिवर्तनीयता/कृत्रिमता (Rigidity/Artificality of the Decimal Notation)—डी०डी०सी० को प्रत्येक स्तर पर केवल दस वर्गों में विभाजन की अनिवार्यता के कारण सदैव आलोचना का सामना करना पड़ता है। इसके आलोचकों का यह तर्क उचित प्रतीत होता है कि ज्ञान का विस्तार हमेशा दस के पैटर्न पर ही नहीं होता। ज्ञान का विकास दशमलव या मीटरी पद्धति द्वारा नियन्त्रित नहीं होता। यह तो एक कृत्रिम तथा अपरिवर्तनीय सांचा (Mould) है। डी०डी०सी० में प्रयुक्त दशमलव पद्धति में ऐसा इसलिए होता है क्योंकि ड्यूई ने पहले अंकन का चुनाव किया तथा बाद में विभिन्न वर्ग बनाए। इसलिए अपनी सुविधानुसार वर्गों की संख्या निर्धारित करने में अंकन की इस पद्धति में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही।

लेकिन दशमलव युक्ति, शृंखला ग्राह्यता (Hospitality in Chain) के लिए अत्यन्त सुविधाजनक है। पदानुक्रम में डी०डी०सी० के किसी भी उपवर्ग को उसके दाईं ओर एक अंक बढ़ाकर किसी भी स्तर तक ले जाया जा सकता है। प्रत्येक स्तर पर विषय को विशिष्टता/तीव्रता (Intension) बढ़ती जाती है।

999-000	Universe of Knowledge
300	Social Science
330	Economics
332	Financial Economics
332.4	Money
332.42	Monetary Standards
332.422	Monometallic
332.4222	Gold Coins
332.422209	Hallmark Future-History

पदानुक्रम (Hierarchy) डी०डी०सी० पद्धति की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है। दशमलव अंकन के प्रयोग के परिणामस्वरूप यह विशेषता स्वत: ही इस पद्धति में आ गई। हालाँकि मुख्य वर्गों की पंक्ति में कुछ त्रुटियाँ स्पष्टत: परिलक्षित होती हैं। जैसे धर्मशास्त्र (Religion) जो कि आस्था पर आधारित है, को विवेक की श्रेणी में रखा गया है और भाषा मुख्य वर्ग (400) को साहित्य (800) से अलग कर दिया गया है। साथ ही इतिहास (930-990) को सामाजिक विज्ञानों से अलग रखा गया है। मुख्य वर्गों के अलावा प्रभागों व अनुभावों में भी ऐसी अनेकों अनियमितताएँ देखी जा सकती है। ड्यूई का यह मानना था कि जब तक प्रत्येक वर्ग को पद्धति में स्थान दिया जा सकता है तब तक वर्गों के क्रम से ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। इस समस्या से निपटने के लिए उन्होंने पद्धति में एक प्रभावी अनुक्रमणिका का प्रावधान किया था।

डी०डी०सी० एक देश (उत्पत्ति यू०एस०ए०) तथा काल (19वीं शताब्दी) सिद्ध व्यावहारिक पद्धति है। इसके सैद्धान्तिक तथा दार्शनिक आधारों की खोज अगर व्यर्थ नहीं तो कोई विशेष लाभदायक भी नहीं होगी। ड्यूई का मुख्य उद्देश्य एक ऐसी वर्गीकरण पद्धति का निर्माण करना था जो कि शेल्फ में पुस्तकों के क्रम को यंत्रीकृत करे तथा नवीन विषयों, पूर्व में व्यवस्थित क्रम में अव्यवस्थित किए बिना समुचित स्थान प्रदान करें। ड्यूई का मुख्य योगदान केवल ग्राह्यता (Hospitality) की व्यावहारिक समस्या का समाधान प्रस्तुत करने के सन्दर्भ में माना जा सकता है। यह कार्य उन्होंने दशमलव अंकन (Decimal Fraction Notation) की मदद से सफलतापूर्वक किया।

1.11.4 सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति में चित्रण

(Mapping in the Universal Decimal Classification System)

सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति एक लगभग पक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति है। यह दशमलव वर्गीकरण पद्धति पर आधारित है। सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति में सम्बन्धित विचारों एवं विचार समूहों को एकसाथ लाने का प्रयास किया गया है। इसकी संरचना में सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होने के सिद्धान्त को अपनाकर मानव ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र को दस मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है तथा प्रत्येक मुख्य वर्ग को विशिष्टता की आवश्यक मात्रा के आधार पर दशमलव अंकन के द्वारा विभाजित किया गया है।

सार्वभौम वर्गीकरण पद्धति में मानव ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र को एक इकाई के रूप में व्यवस्थित किया गया है। ज्ञान जगत को दस प्रमुख भागों में विभाजित किया गया है तथा प्रत्येक वर्ग को आवश्यकतानुसार विभागों एवं उप-विभागों में दशमलव भिन्न अंकन पद्धति के आधार पर विभक्त किया गया है क्योंकि दशमलव अंकन में प्रत्येक वर्ग के लिए कम-से-कम तीन अंकों के प्रयोग की अनिवार्यता को समाप्त कर दिया गया है।

इसके मुख्य वर्गों की रूपरेखा निम्न प्रकार है—

0 सामान्य कृतियाँ

1 दर्शनशास्त्र

2 धर्म

3 सामाजिक विज्ञान

4 भाषा शास्त्र

5 शुद्ध विज्ञान

6 प्रायोगिक विज्ञान

7 कलाएँ

8 साहित्य

9 भूगोल, जीवनी, इतिहास

इस आधारभूत संरचना को अपनाकर इन मुख्य वर्गों के उपविभाजन में सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होने के सिद्धान्त को प्रयोग में लाया गया है। सुविधा की दृष्टि से आरम्भिक दशमलव बिन्दु को हटा दिया गया है। सन् 1963 में वर्ग 4 भाषाशास्त्र को ज्ञान के भावी विकास को स्थान देने के लिए रिक्त कर दिया गया है और मूल विषय भाषा के लिए वर्ग 8 साहित्य के अन्तर्गत प्रावधान कर दिया गया है। ज्ञान जगत की उपयुक्त स्थिति अंकित करने के साथ यू०डी०सी० में निम्नलिखित दो प्रकार की सहायक सारणियों को स्थान दिया गया है—

1. सामान्य
2. विशिष्ट

सामान्य सहायकों में सामान्य रूप से पुनरावर्तन विशेषताओं (Recurrent characteristics) को सम्मिलित किया गया है। विशिष्ट सहायकों के अन्तर्गत स्थानीय रूप से पुनरावर्तन विशेषताओं को सम्मिलित किया गया है। ड्यूई दशमलव वर्गीकरण की भाँति सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण में भी

आधारभूत तथा संयुक्त विषयों की स्थिति का निर्धारण करते समय परिगणनात्मक पद्धति को अपनाया गया है। ड्यूई दशमलव वर्गीकरण पद्धति की भाँति यह अवस्थितिपरक (Aspect) वर्गीकरण पद्धति है। सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण पद्धति का मुख्य योगदान ग्राह्यता तथा विशिष्ट अंकन चिह्नों के प्रयोग ने इसे एक प्रकार की पक्षात्मक संरचना प्रदान की है तथा सम्पूर्ण पद्धति में इसकी परिवर्तनशील (Versatile) अंकन पद्धति के प्रयोग के कारण संश्लेषण की प्रक्रिया स्पष्ट दिखाई देती है। अतः इसको संश्लेषणात्मक संरचना तथा अंकन युक्तियों के कारण नवीन विषयों की स्थिति का निर्धारण करने का लचीलापन प्राप्त हो गया है।

1.11.5 कोलन क्लासीफिकेशन (Colon Classification)

डॉ० एस०आर० रंगनाथन (1892-1972) की कोलन क्लासीफिकेशन (सी०सी०) पद्धति (प्रथम संस्करण 1933) एक पूर्णतः पक्षात्मक तथा सिद्धान्त आधारित पद्धति है। डॉ० रंगनाथन ने मुख्य वर्गों तथा वर्गांकों के पक्षों के क्रम पर विशेष ध्यान दिया। उनके लिए अनुक्रम वर्गीकरण का सार (essence) था। उन्होंने वर्गों की पंक्ति तथा शृंखला और पक्ष परिसूत्र के पक्षों के क्रम निर्धारण के लिए कुछ अभिधारणाओं (Postulates) तथा सिद्धान्तों (Principles) का प्रतिपादन किया। उम्मीदों के विपरीत उन्होंने सी०सी० में मुख्य वर्गों के क्रम के लिए वैदिक पद्धति का उपयोग नहीं किया यद्यपि इस पद्धति का धुँधला सा प्रभाव जरूर दिखाई देता है। उनके मुख्य वर्गों के क्रम को त्रिभुज के द्वारा दर्शाया गया है—

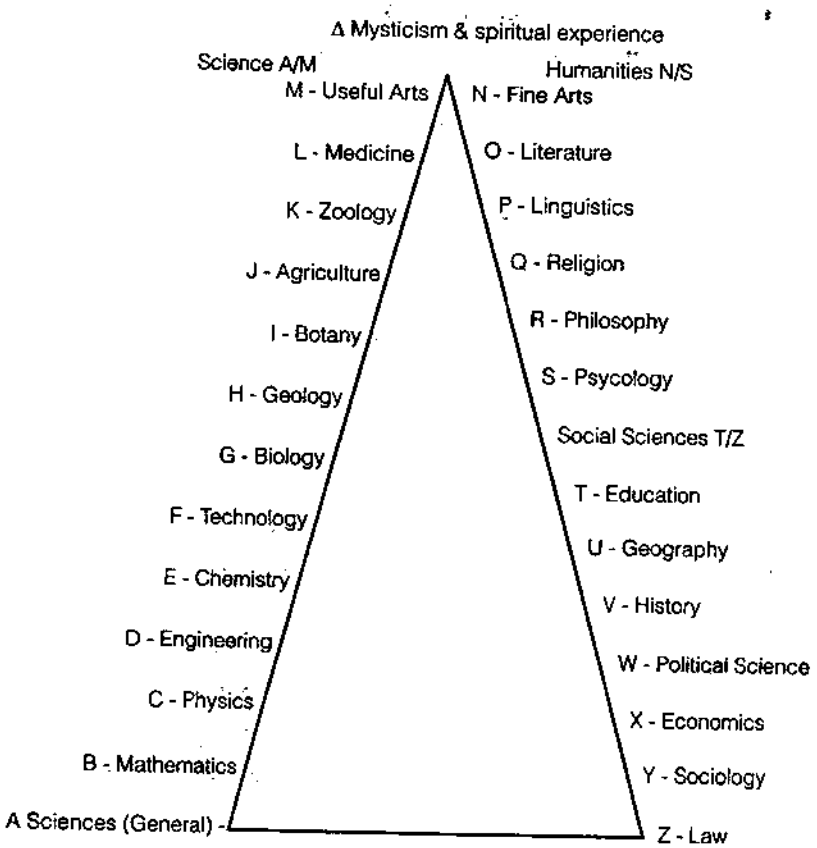

डॉ० रंगनाथन का यह दृढ़ मत था कि विकास के क्रम में सर्वप्रथम विज्ञान विषय विकसित हुए, उसके बाद मानविकी और अन्त में सामाजिक विज्ञान अस्तित्व में आए। तत्कालीन सामाजिक तथा शैक्षिक

नोट-

प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए रंगनाथन ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को कुल मुख्य वर्गों में से आधे स्थान प्रदान किए थे। त्रिभुज के दूसरी ओर के आधे स्थान मानविकी तथा सामाजिक विज्ञानों के बीच बँटे। A से M तक विज्ञानों को मूर्तता के बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया गया है। विज्ञानों में B-गणित सर्वाधिक अमूर्त है, C-भौतिक विज्ञान, B-गणित से अधिक मूर्त तथा D-अभियांत्रिकी से कम मूर्त है। अन्य अनुशासन भी इसी प्रकार व्यवस्थित हैं। M-उपयोगी कलाएँ मुख्य वर्ग के अन्तर्गत वस्त्र अभियांत्रिकी, बढ़ाईगिरी, लोहारी (Smithy), क्रीड़ा एवं खेलकूद जैसे विषय रखे गए हैं जो विज्ञानों में सर्वाधिक मूर्त हैं। विज्ञानों के अन्तर्गत डॉ० रंगनाथन ने ऑगस्ट कॉम्टे (1798-1857) द्वारा सर्वप्रथम प्रस्तुत-'सिद्धान्त एवं व्यवहार के प्रत्यावर्तन' (Theory and practice alternating one another) के सिद्धान्त का प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ B- गणित के अनेक सिद्धान्तों का अनुप्रयोग, C-भौतिक विज्ञान में होता है जो गणित मुख्य वर्ग के तुरन्त बाद दिया गया है। इसी प्रकार, E-रसायन विज्ञान के बाद F-प्रौद्योगिकी तथा I-वनस्पति विज्ञान के बाद J-कृषि विज्ञान वर्गों को व्यवस्थित किया गया है। इस तरह सी०सी० में सिद्धान्त तथा उनके अनुप्रयोगों को एकसाथ लाया गया है जो डी०डी०सी० में अलग-अलग स्थानों पर वर्गीकृत किए जाते हैं। N/S मानविकों विषयों को उनकी विषय-वस्तु की बढ़ती समृद्धि (increasing richness of contents) के क्रम में व्यवस्थित किया गया है। T/Z सामाजिक विज्ञानों को कृत्रिमता के बढ़ते क्रम में व्यवस्थित किया गया है। Z-विधि सभी सामाजिक विज्ञानों में सबसे अधिक कृत्रिम है। मुख्य वर्ग Δ (डेल्टा) -रहस्यवाद एवं आध्यात्मिक अनुभव को ज्ञान के चित्रण में सर्वोच्च-त्रिभुज के शीर्ष में स्थान दिया गया है। यह विज्ञान तथा आध्यात्मिक ज्ञान सभी प्रकार के ज्ञान का स्रोत होता है। यह सम्पूर्ण अनुभव सिद्ध ज्ञान का योग एवं संक्षेपण होता है। आध्यात्मिक ज्ञान को भारतवर्ष में ईश्वर एवं आत्मा (God and Self) का सर्वोच्च ज्ञान माना जाता है। सर्व विद्या प्रतिष्ठा इसलिए इसे सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया है। इस सुविचारित मुख्य वर्गों के क्रम के अलावा, PMEST मूलभूत श्रेणियों को उनकी घटती हुई मूर्तता के आधार पर रखा गया है। जबकि इन मूलभूत श्रेणियों के योजक चिह्नों का क्रम बोध मान (Ordinal value) प्रदान किया गया है जिससे शेल्फ पर विषयों का क्रम अमूर्त से मूर्त की ओर तथा सामान्य से विशिष्ट की ओर हो। इसे प्रतिलोमता का सिद्धान्त कहा जाता है। पक्ष परिसूत्र में पक्षों के आवर्तन एवं स्तर (Rounds and levels) का क्रम पक्ष-अनुक्रम के सिद्धान्तों जैसे वॉल-पिक्चर सिद्धान्त, काउ कॉफ सिद्धान्त आदि द्वारा निर्धारित किया जाता है। उनके पक्ष-अनुक्रम तथा एक पंक्ति के अन्तर्गत सहायक अनुक्रम के सिद्धान्तों का प्रयोग अन्य वर्गीकरण पद्धतियों द्वारा भी किया गया है।

1.11.6 लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस क्लासीफिकेशन

1898 में निर्मित लाइब्रेरी ऑफ कॉंग्रेस क्लासीफिकेशन (LCC) की प्रथम अनुसूची 1902 में प्रकाशित हुई। वर्गांक Z की अनुसूची को सबसे पहले विकसित किया गया। आरम्भ से ही जे०सी०एम० हेनसन तथा वाल्र्स मॉर्टेल के निर्देशन में अलग-अलग विशेषज्ञों के समूहों ने विशिष्ट वर्गों की अनुसूचियों को विकसित करने का काम किया। अनेकों अमेरिकी व विदेशी पुस्तकालयों में प्रयुक्त इस पद्धति में 21 वर्गों की 40 से अधिक अनुसूचियाँ हैं। कटर के एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन तथा इसके मुख्य विभाजनों में अत्यधिक समानता है तभी वही पद्धति इसकी विभिन्न अनुसूचियों के विकास में मार्गदर्शक रही है। यह एक अनुशासनानुसार वर्गीकरण की पद्धति है। यह सार्वभौतिक नहीं अपितु लिटरेरी वारंट के सिद्धान्त पर आधारित हैं इसमें अनुसूचियों का विकास लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस के पुस्तक-संग्रह के अनुसार किया गया है। मुख्य वर्गों को उपवर्गों में बांटा गया है जिन्हें दो अंकों से प्रदर्शित किया जाता है और यह उपवर्ग सामान्य से विशिष्ट की ओर विकसित होते हैं। विश्व के सबसे बड़े पुस्तकालय के लिए

बनाई गई इस पद्धति में वर्गों का क्रम पुस्तकालय भवन की आवश्यकताओं के अनुसार भी प्रभावित होता है। यह पद्धति व्यावहारिकता वाद (Pragmatism) की जीत का एक उत्कृष्ट नमूना है।

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस क्लासीफिकेशन में प्रयुक्त वर्गक्रम इस प्रकार है—

A	General works	Q	Science & Technology Science
B	Philosophy, Psychology Religion	R	Medicine
C	History and Geography	S	Agriculture
H/L	Social Sciences Humanities	T	Technology
		U	Military Science
M/N	Music and Fine Art	V	Navy
P	Language and Literature	Z	Bibliography and Library Science

सामान्य विषयों को पद्धति के शुरू में स्थान दिया गया है। इसके बाद दर्शनशास्त्र तथा धर्मशास्त्र जो मानव जाति के ईश्वर से सम्बन्धों के सिद्धान्तों की रचना करते हैं, को स्थान दिया गया है। C/G के अन्तर्गत ऐसी धारणाएँ जैसे मानव आवास (Abode) तथा उनके निर्वाह (Living) के साधन और बुद्धि का पुरातन सोच से उन्नत संस्कृति की ओर परिवर्तन दिया गया है। इनसे सम्बन्धित सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक पक्ष H/L तक दिये गये हैं। M/P मानवीय सौन्दर्य बोध तथा बौद्धिक विकास हैं। Q/V प्रकृति की समझ तथा सम्बन्धित विषय हैं।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. ज्ञान जगत क्या है?
2. 'ज्ञान जगत गतिशील' होता है, स्पष्ट कीजिए।
3. ज्ञान जगत की तीन विशेषताएँ लिखिए।
4. यौगिक विषय किसे कहते हैं? उदाहरण दीजिए।
5. जटिल विषय किसे कहते हैं? उदाहरण दीजिए।
6. ज्ञान निर्माण की तीन विधियों के नाम लिखिए।
7. ज्ञान जगत बहुआयामी क्यों हैं?
8. डी०डी०सी० में ज्ञान जगत का चित्रण बताइए।
9. द्विबिन्दु वर्गीकरण में ज्ञान का चित्रण स्पष्ट कीजिए।
10. वर्गीकरण पद्धति का स्वभाव अस्थायी क्यों होता है?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सी०सी० के सातवें संस्करण में ज्ञान का विभाजन बताइए।
2. ज्ञान जगत के उद्देश्य लिखिए।
3. पुस्तकालयाध्यक्षों के लिए ज्ञान के अध्ययन का क्या महत्त्व है?

नोट-

4. विषय निर्माण की समूह विधि उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
5. संचयन एवं समूह के अंतर को स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. ज्ञान जगत की 'अनन्त' और 'गतिशील' विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
2. ज्ञान जगत की निरंतर एवं बहुआयामी वृद्धि को स्पष्ट कीजिए।
3. ज्ञान जगत के समवर्ती पृथक्करण व व्यवस्थापन से आप क्या समझते हैं?
4. विषय क्या होता है? यह किस प्रकार मूल विषय से भिन्न होता है? विभिन्न मूल विषयों के नाम बताइए।
5. किन विषय निर्माण विधियों द्वारा सरल विषयों का निर्माण होता है?
6. सी०सी० एवं डी०डी०सी० में ज्ञान का चित्रण किस प्रकार किया जाता है?

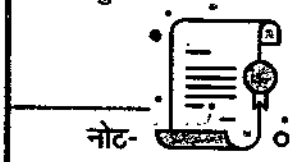

UNIT 2

पुस्तकालय वर्गीकरण
Library Classification

2.1 प्रस्तावना Introduction

वर्गीकरण मानव स्वभाव की एक स्वाभाविक क्रिया है। हम अपने दैनिक जीवन में इस क्रिया का उपयोग करते हैं, चाहे इसकी हमें जानकारी हो या नहीं।

2.2 वर्गीकरण का अर्थ एवं परिभाषा

Meaning and Definition of Classification

'वर्गीकरण' शब्द अंग्रेजी के Classification शब्द का हिन्दी अनुवाद है। Classification शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा शब्द Classis से हुई। इसका अर्थ है—वस्तुओं या व्यक्तियों का वर्ग। इस शब्द का प्रयोग सबसे पहले प्राचीन रोम राज्य में किया गया था। उस समय सम्पत्ति, महत्त्व या वंश की दृष्टि से समाज को मोटे तौर पर छः श्रेणियों या वर्गों (Class) में विभाजित किया जाता था। इन श्रेणियों या वर्गों के भेद को स्पष्ट करने के लिए ही इस शब्द का प्रयोग किया जाता था।

सामान्यतः वर्ग (Class) शब्द का अर्थ वस्तुओं या पदार्थों के ऐसे समूह से है, जो समान विशेषताओं या गुणों के आधार पर परस्पर मिलते-जुलते प्रतीत होते हैं, अर्थात् वे गुण वर्ग के प्रत्येक सदस्य में विद्यमान होते हैं। वर्गीकरण शब्द का अर्थ समझने के लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है—

1. अनेक वस्तुओं या पदार्थों को समान गुणों के आधार पर विभिन्न वर्गों में विभाजित करने की प्रक्रिया को वर्गीकरण कहते हैं। इस प्रक्रिया में समान वस्तुओं को एकसाथ एकत्र कर दिया जाता है तथा असमान वस्तुओं को उनसे अलग कर दिया जाता है। अनेक वस्तुओं को किसी एक वर्ग में रखते समय सर्वप्रथम हम उनकी पहचान करते हैं। यह पहचान हम उनमें अन्तर्निहित गुणों के सादृश्य के आधार पर करते हैं। वस्तुओं के सादृश्य की जानकारी उनकी विशेषताओं से प्राप्त होती है। एक ऐसी या समान विशेषताओं वाली वस्तुओं को एक वर्ग में सम्मिलित कर लिया जाता है तथा असमान वस्तुओं को अलग कर दिया जाता है।
2. वर्गीकरण से हमारा अभिप्राय केवल समान वस्तुओं को एक वर्ग में रखना, अर्थात् केवल वर्ग बनाना, तथा असमान वस्तुओं को अलग करना मात्र ही नहीं है। इसका उद्देश्य समान वस्तुओं के विभिन्न वर्गों को किसी निश्चित क्रम में रखना भी है अर्थात् वर्गीकरण में सभी वर्गों को क्रमशः प्रथम स्थान, दूसरे स्थान व तीसरे स्थान पर रखने की प्रक्रिया भी अपनाई जाती है। विभिन्न वर्गों में क्रम-निर्धारण किसी उद्देश्य, अभिरुचि, सिद्धान्तों तथा नियमों के अन्तर्गत किया जाता है। उदाहरणार्थ, मान लीजिए किसी कक्षा के छात्रों को उनके कद के अनुसार विभिन्न वर्गों में विभाजित करना है। प्रथम वर्ग 50 से 65 इंच कद वालों का, दूसरा वर्ग 51 इंच कद वालों का, तीसरा वर्ग 52

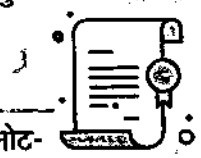

नोट-

इंच कद वालों का—इस प्रकार 50 से 65 इंच कद वाले छात्रों के 16 वर्ग बन सकते हैं। वर्गीकरण की प्रक्रिया में इन वर्गों को किसी क्रम में रखना आवश्यक है। इन्हें उद्देश्य या अभिरुचि के अनुसार या तो कद के बढ़ते हुए क्रम में रखा जा सकता है या कद के घटते हुए क्रम में। इस प्रकार कोई भी तरीका, नियम सिद्धांत अपना कर ही इन्हें क्रमबद्ध करना आवश्यक है।

3. जैसा कि डब्ल्यू०सी०बी० सेयर्स ने लिखा है "वर्गीकरण एक मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम वस्तुओं की समानता व भिन्नता की पहचान करते हैं, उनके सम्बन्धों का पता लगाते हैं तथा उन सम्बन्धों के आधार पर उनके वर्ग बनाते हैं", अर्थात् वर्गीकरण करते समय हम विभिन्न वस्तुओं को उनकी समानता की मात्रा के अनुसार व्यवस्थित करते हैं तथा उनकी भिन्नता की मात्रा के अनुसार ही उनको अलग करते हैं। समानता से हमारा अभिप्राय उस गुण व लक्ष्य से है जो वस्तुओं में निहित होता है तथा उन्हें एकसाथ जोड़ता है।

इस प्रकार समानता वर्गीकरण को निर्धारित करती है। इस समानता को हम वर्गीकरण के क्षेत्र में विशेषता के नाम से जानते हैं। किन्तु यहाँ यह भी जानना आवश्यक है कि जब हम यह कहते हैं कि वस्तुओं में समानता है, तो इसका अभिप्राय यह भी नहीं है कि वे हर प्रकार से समान हैं। दो या अधिक वस्तुओं में पूर्ण समानता या समरूपता नहीं पाई जाती है। वर्ग केवल ऐसी वस्तुओं का समूह होता है जो कुछ अंश तक समान है या जो कुछ सामान्य गुणों से युक्त है, जैसे—रीढ़ की हड्डी वाले पशुओं में रीढ़ की हड्डी का होना सामान्य विशेषता है।

4. वस्तुओं में दो प्रकार की विशेषताएँ हो सकती हैं—(1) प्राकृतिक तथा (2) कृत्रिम। प्राकृतिक विशेषता उस लक्षण को कहते हैं जो वस्तुओं की बनावट व क्रिया में निहित है। कृत्रिम विशेषता बाहरी लक्षणों पर आधारित होती है। प्राकृतिक विशेषता एक जन्म-जात गुणों को व्यक्त करती है। मनमाने ढंग पर चयन की गई विशेषता या उपलक्षण को जो उनके जन्मजात गुण से सीधा सम्बन्ध नहीं रखती है, उसे कृत्रिम विशेषता कहते हैं। यदि वस्त्रों के बण्डलों का विभाजन उनके निर्माण में लाए गए पदार्थों के आधार पर जैसे, रेशमी, सूती व ऊनी कपड़ा, किया जाता है तो यह वर्गीकरण प्राकृतिक विशेषता के आधार पर किया गया है। यदि इन्हें बण्डलों को रंग, आकार अथवा बारीकी के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है तो यह कृत्रिम विशेषता के आधार पर किया जाता है।

5. वर्गीकरण के लिए जिस विशेषता का प्रयोग किया जाए, वह वर्गीकरण के उद्देश्य की पूर्ति के अनुरूप होनी चाहिए। उदाहरणस्वरूप यदि पुस्तकों का वर्गीकरण करने का उद्देश्य उन्हें सजावट के लिए रखना है तो उन्हें उनके आकार या रंग के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि वर्गीकरण का उद्देश्य उन पुस्तकों को जिल्दसाजी के लिए भेजना है तो उन्हें चमड़े की जिल्द, कपड़े की जिल्द आदि के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है। परन्तु यदि वर्गीकरण का उद्देश्य उन्हें उपयोग के लिए पुस्तकालय में रखना हो तो उन्हें उनकी विषय वस्तु के अनुसार व्यवस्थित या वर्गीकृत किया जाता है। इसके साथ ही विशेषता का प्रयोग होना चाहिए। किसी एक विशेषता के अनुसार वर्गों का निर्माण समाप्त करने के बाद ही किसी दूसरी विशेषता के अनुसार वर्गों का निर्माण करना चाहिए अर्थात् किसी एक विशेषता का प्रयोग करने के बाद जो वर्ग बनते हैं, उनका उप-विभाजन किसी अन्य विशेषता के आधार पर किया जा सकता है। जैसे, सर्वप्रथम हम वस्त्रों के, उनमें प्रयोग लाए गए पदार्थ की विशेषता के आधार पर, वर्ग बना सकते हैं—सूती कपड़ा, रेशमी कपड़ा। इसके बाद प्रत्येक वर्ग को रंग की विशेषता के आधार पर पुनः विभाजित किया जा सकता है—हरा सूती कपड़ा, लाल सूती कपड़ा आदि।

नोट-

6. वर्गीकरण की प्रक्रिया में अधिक विस्तार (Greater extension) तथा कम गहनता (Lesser intension) वाले वर्ग से प्रारम्भ कर हम अधिक गहनता (Greater intension) तथा कम विस्तार (Lesser extension) वाले उप वर्गों की ओर बढ़ते हैं। अत: वर्गीकरण का तात्पर्य केवल विभाजन ही नहीं बल्कि उपविभाजन भी है। उपविभाजन का अर्थ है—एक बड़े वर्ग को आवश्यकता अनुसार उपवर्गों में बाँटना। इस प्रक्रिया में वर्गों की एक ऐसी शृंखला (chain) बनती है जिसमें ऊपर वाला वर्ग अपने नीचे वाले वर्ग से विस्तार अधिक तथा अर्थ की गहनता में कम होता है, अथवा नीचे वाला वर्ग ऊपर वाले वर्ग से विस्तार में कम तथा गहनता में अधिक होता है। इसकी चित्रात्मक प्रस्तुति नीचे दी गई है—

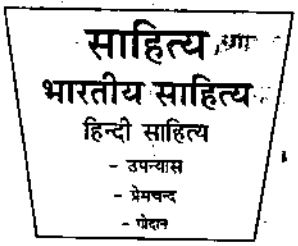

वर्गीकरण की परिभाषा Definition of Classification

वर्गीकरण शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जा सकता है—(1) सामान्य वर्गीकरण के अर्थ में, तथा (2) पुस्तकालय वर्गीकरण के अर्थ में।

सामान्य वर्गीकरण में हम विचारों व वस्तुओं को केवल किसी सुव्यवस्थित क्रम में क्रमबद्ध करते हैं। सामान्य वर्गीकरण की परिभाषायें विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत की है—डब्ल्यू०सी०बी० सेयर्स के अनुसार "वर्गीकरण वस्तुओं को उनकी विशेषताओं के आधार पर पहचानने, उनके वर्ग बनाने तथा इन वर्गों को किसी क्रम में व्यवस्थित करने की मानसिक प्रक्रिया है।" मागरिट मान के अनुसार "समान वस्तुओं को एकसाथ रखना, अर्थात् वस्तुओं को उनकी समानता व भिन्नता के अनुसार व्यवस्थित करना ही वर्गीकरण है।" ए० ब्रोडफिल्ड के अनुसार "किसी सिद्धांत या अवधारणा या उद्देश्य या अभिरुचि या इनके किसी संयोजन के अनुसार किसी क्रम में व्यवस्थित वर्गों की व्यवस्था या श्रेणी को वर्गीकरण कहते हैं।"

पुस्तकालय वर्गीकरण का सम्बन्ध पुस्तकों व प्रलेखों से होता है तथा उनको अत्यधिक सहायक व स्थायी क्रम में व्यवस्थित करना ही इसका उद्देश्य है।

पुस्तकालय वर्गीकरण की कुछ प्रचलित परिभाषायें निम्नलिखित हैं—

(i) "पुस्तकों का वर्गीकरण वस्तुत: ज्ञान का वर्गीकरण है जिसमें पुस्तकों का भौतिक स्वरूप के आधार पर आवश्यक समायोजन कर दिया जाता है।" —मागरिट मान

(ii) "पुस्तक के विशिष्ट विषय के नाम को क्रम सूचक अंकों की अधिमान्य कृत्रिम भाषा में अनुवाद करना तथा उसी विशिष्ट विषय से सम्बन्धित अनेक पुस्तकों को एक अन्य क्रम सूचक अंकों के समूह के द्वारा, जो पुस्तक की विषय वस्तु के अलावा पुस्तक की अन्य विशेषताओं को प्रस्तुत करते हैं, विशिष्टता प्रदान करना पुस्तकालय वर्गीकरण कहलाता है।" —एस०आर० रंगनाथन

(iii) "निधानियों पर पुस्तकों एवं अन्य (अध्ययन) सामग्री को अथवा सूची एवं अनुक्रमणिका की प्रविष्टियों को विषय के अनुसार ऐसे ढंग से, जो अध्ययन करने वालों अथवा किसी निश्चित ज्ञान

नोट-

का पता लगाने वालों के लिए अत्यधिक उपयोगी हो, वर्गीकृत क्रम में व्यवस्थित करना पुस्तकालय वर्गीकरण कहलाता है।" —डब्ल्यू०सी०बी० सेयर्स

इन परिभाषाओं के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि पुस्तकालय वर्गीकरण में हम पहले पुस्तकों में निहित विषयवस्तु का वर्गीकरण करते हैं। इसके बाद एक ही विषयवस्तु वाली अनेक पुस्तकों को वैक्तिकता प्रदान करने के लिए उनकी अन्य विशेषताओं, जैसे प्रकाशन वर्ष; विवरण की भाषा; विवरण का स्वरूप आदि के आधार पर एक अन्य क्रम सूचक संख्या प्रदान करते हैं। तदनुसार पुस्तक के विषय का प्रतिनिधित्व करने वाले वर्गांकों (Class Number) को तथा पुस्तकों की वैक्तिकता प्रदान करने वाले क्रम सूचक अंकों को ग्रन्थांक (Book Number) कहते हैं। वर्गांक तथा ग्रंथांक को मिलाने से क्रामक अंक (Call Number) बनता है। इसे क्रामक अंक इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसकी सहायता से पुस्तकों को फलकों पर से बुलाया या प्राप्त किया जा सकता है।

जैसे, × 72 (वर्गांक), 152 N 72 (ग्रंथांक) तथा दोनों को मिलाकर 'क्रामक अंक' बनता है।

2.3 पुस्तकालय वर्गीकरण Library Classification

अर्थ एवं परिभाषा Meaning and Definition

पुस्तकालय वर्गीकरण का सम्बन्ध प्रलेखों से है। ये प्रलेख मुद्रित, हस्तलिखित अथवा अन्य किसी रूप में उपलब्ध पाठ्य सामग्री हैं अर्थात् पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ, माइक्रो फिल्म; ग्रामोफ़ोन रिकार्ड्स, कम्प्यूटर फ्लॉपी आदि प्रलेखों की श्रेणी में आते हैं। इन प्रलेखों को उनकी विषय सामग्री के अनुसार सहायक एवं स्थायी क्रम में व्यवस्थित करना होता है जिससे किसी भी विषय पर उपलब्ध पाठ्य सामग्री तक आसानी एवं शीघ्रता से पहुँचा जा सके तथा उपयोग के बाद उसे पुन: उसी क्रम में यथा स्थान रखा जा सके।

पुस्तकालय वर्गीकरण की विभिन्न विद्वानों ने अपनी परिभाषा दी है जो निम्न प्रकार से है—

जे०एस० मिल्स के अनुसार, "पुस्तक वर्गीकरण साहित्य में ज्ञान की खोज के लिए समय बचाने की यांत्रिक क्रिया है।"

डब्ल्यू०सी०बी० सेयर्स के अनुसार, "पुस्तक वर्गीकरण, पुस्तकों को फलकों पर व्यवस्थित करना है अथवा पुस्तकों को पाठकों के लिए अत्यधिक उपयोगी बनाने का विवरण है।"

डॉ० रंगनाथन के अनुसार, "पुस्तक के विशिष्ट विषय के नाम को अधिमान्य कृत्रिम भाषा में अनुवाद करना ही पुस्तकालय वर्गीकरण है। इसके साथ ही वर्गीकरण एक ही विशिष्ट विषय पर असंख्य पुस्तकों का पृथक्करण भी है, जो कुछ क्रमिक संख्याओं की सहायता से होता है।"

मार्गरिट मान के अनुसार, "पुस्तकों का वर्गीकरण वस्तुत: ज्ञान का वर्गीकरण है जिसमें पुस्तकों के भौतिक स्वरूप के आधार पर आवश्यक समन्वय कर लिया जाता है।"

2.3.1 पुस्तकालय वर्गीकरण की आवश्यकता Need for Library Classification

आधुनिक युग में ज्ञान के विस्फोट के कारण ज्ञान के नये-नये क्षेत्रों की खोज हुई जिससे नये-नये विषयों का ज्ञान अर्जित हुआ। इस प्रकार बढ़ते हुए साहित्य को सुव्यवस्थित करने के लिए वर्गीकरण आवश्यक हो गया। जहाँ प्राचीन समय में ज्ञान सीमित था, विषयों में सूक्ष्मता का अभाव था, मुद्रण कला के अभाव में प्रकाशित पाठ्य सामग्री नहीं थी तब इन्हें व्यवस्थित करना आसान था। लेकिन धीरे-धीरे साहित्य में वृद्धि होने के कारण वर्गीकरण आवश्यक हो गया। वर्गीकरण से पुस्तकालय में उपलब्ध संसाधनों का अधिकाधिक उपयोग, पाठकों के समय की बचत आदि सम्भव हो सका है। इसके अभाव में कोई भी

नोट-

पुस्तकालय सुचारू रूप से संचालित नहीं किया जा सकता है।

सेयर्स ने इस सम्बन्ध में कहा है, "पुस्तकालय की आधारशिला पुस्तकें हैं, पुस्तकालय प्रशिक्षण की आधारशिला वर्गीकरण है। वर्गीकरण के अभाव में कोई भी पुस्तकालयाध्यक्ष व्यवस्थित पुस्तकालय की रचना नहीं कर सकता। किसी भी पुस्तकालय में समुचित वर्गीकरण के बिना मुक्त प्रवेश व्यवस्था असम्भव है। समुचित पुस्तकों की अवर्गीकृत व्यवस्था में पाठक भटक सकता है तथा वर्गीकरण के अभाव में निष्फल परिणाम निकलते हैं।"

इस प्रकार पुस्तकालय में वर्गीकरण की आवश्यकता के कई कारण हैं, जिसके कारण वर्गीकरण अनिवार्य है। ये कारण निम्न हैं—

1. **ज्ञान का असीमित विस्तार** (Explosion of Knowledge)—आधुनिक समय में विभिन्न कारणों से ज्ञान के विस्फोट के कारण मुद्रित व अमुद्रित सामग्री काफी मात्रा में आने लगी है। इन्हें पुस्तकालय में व्यवस्थित करने के लिए वर्गीकरण की आवश्यकता महसूस हुई।
2. **विषयों की जटिलता** (Complexity of Subjects)—वर्तमान में विषयों की जटिलता बढ़ती जा रही है। अन्तर्विषयी साहित्य प्रकाशित होने लगे हैं। विषय के गहन अध्ययन के कारण गूढ़ साहित्य का प्रकाशन होने लगा है। इस प्रकार के साहित्य को विषय में सम्बन्धित साहित्य के साथ व्यवस्थित करने के लिए वर्गीकरण की आवश्यकता है।
3. **साहित्य के विविध रूप** (Different Forms of Literature)—वर्तमान में मुद्रित व अमुद्रित दोनों प्रकार के साहित्य पुस्तकालय में आते हैं। कम्प्यूटर के आविष्कार से पुस्तकालय में ज्ञान संग्रह में एक क्रान्ति आ गयी है। पुस्तकालय में पुस्तकों के अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाएँ, रिपोर्ट्स, पेम्फलेट्स, नक्शे, चार्ट, माइक्रो फ़िल्म, ग्रामोफोन रिकार्ड्स, माइक्रो फिश, सीडी रोम आदि रूप में पाठ्य सामग्री संग्रहीत की जाती है। इन सभी साहित्य को पुस्तकालय में उचित स्थान प्रदान करने के लिए वर्गीकरण की आवश्यकता है।
4. **विविध भाषा में साहित्य** (Variety of Language of Literature)—आधुनिक काल में विभिन्न भाषाओं में साहित्य प्रकाशित हो रहे हैं। एक विषय पर विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित साहित्य को वर्गीकरण के माध्यम से ही सुनिश्चित स्थान प्रदान किया जा सकता है।
5. **पुस्तकालय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए** (For the Purposes of the Library)—पुस्तकालय का प्रमुख उद्देश्य जन-समुदाय को प्रबुद्ध नागरिक बनने के लिए प्रेरित करना, उनकी उन्नति के लिए पाठ्य सामग्री संग्रहीत करना तथा उसके संरक्षण एवं वितरण की व्यवस्था करना आदि है। इन उद्देश्यों की पूर्ति वर्गीकरण द्वारा ही सम्भव है।
6. **व्यक्तित्व प्रदान करने हेतु** (To give Personality)—पुस्तकालय में प्राप्त समस्त पाठ्य सामग्री को व्यक्तित्व प्रदान करने के लिए वर्गीकरण आवश्यक है। पाठ्य सामग्री को व्यक्तित्व प्रदान हो जाने पर उसे पुस्तकालय के संग्रह से आसानी से खोजा जा सकता है।
7. **पुस्तकालय संसाधनों के उपयोग में वृद्धि हेतु** (To increase the use of Library Resources)—पुस्तकालय वर्गीकरण के अभाव में पुस्तकालय में प्राप्त साहित्य को व्यवस्थित करना असम्भव है जिससे इन साहित्य का अधिकाधिक उपयोग सम्भव नहीं है। वर्गीकरण की सहायता से साहित्य को विषयानुसार व्यवस्थित किया जा सकता है जिससे पाठकों को पुस्तकालय में उपलब्ध साहित्य की जानकारी हो सके और उनका वे अधिकाधिक उपयोग कर सकें।

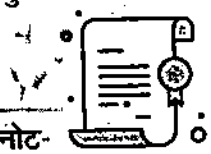

नोट-

8. **सहायक क्रम में विन्यासित करने के लिए**—डॉ० रंगनाथन के अनुसार "पुस्तकालय वर्गीकरण का उद्देश्य "पुस्तकों को सहायक अनुक्रम में विन्यासित करना है।" यह कार्य वर्गीकरण द्वारा ही सम्भव है। पाठ्य सामग्री व्यवस्थित क्रम में हो जाने पर पाठकों, कर्मचारियों दोनों को सुविधा रहती है।

9. **समय की बचत** (Save the time)—आधुनिक काल में असीमित साहित्य के कारण पाठक के सामने यह समस्या आ जाती है कि वह कौन-सा साहित्य अपने कार्य के लिए चुने। यदि समस्त साहित्य को देखना पड़े तो उसको काफी समय लगाना पड़ता है। वर्गीकरण की सहायता से पाठक का समय बचता है। वह कम समय में अपनी इच्छा से सामग्री की खोज कर लेता है। वर्गीकरण से न केवल पाठक के समय की बचत होती है, अपितु कर्मचारी के समय की भी बचत होती है।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि पुस्तकालय में वर्गीकरण आवश्यक है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बिना वर्गीकरण के किसी भी पुस्तकालय को व्यवस्थित नहीं बनाया जा सकता है। व्यवस्थित पुस्तकालय का निर्माण करने के लिए वर्गीकरण की नितान्त आवश्यकता है।

2.3.2 वर्गीकरण का उद्देश्य Purpose of Classification

वर्गीकरण का मुख्य उद्देश्य पुस्तकों को सहायक क्रम में व्यवस्थित करना है, तथापि विभिन्न विद्वानों ने वर्गीकरण के विभिन्न उद्देश्यों का उल्लेख किया है—

डॉ० रंगनाथन (S.R. Ranganathan) के शब्दों में ग्रन्थालय वर्गीकरण का उद्देश्य है, "...पाठ्य सामग्री को सहायक क्रम में विन्यासित करना अथवा वस्तुत: सहायक क्रम में पाठ्य सामग्री के विन्यासन को यन्त्रीकृत कर देना। जिससे—

(अ) ग्रन्थालय में उपलब्ध किसी पुस्तक की पाठक द्वारा माँग होने पर उसका अतिशीघ्र स्थान निर्धारित किया जा सके।

(ब) पाठकों द्वारा लौटायी गयी पुस्तकों को पूर्व निर्धारित यथा स्थान पर पुन: रखा जा सके।

(स) नवीन पुस्तक की प्राप्ति पर उसे सम्बन्धित-विषय की अन्य पुस्तकों में निर्धारित स्थान प्रदान किया जा सके।"

डॉ० सेवेज (A.E. Savage) के मतानुसार, "पाठक और पुस्तकालयाध्यक्षों के लिए सुविधाजनक क्रमबद्ध रूप से पुस्तकों की व्यवस्था करना ही ग्रन्थालय वर्गीकरण का मुख्य उद्देश्य है।"

डॉ० रिचर्डसन (Dr. E.C. Richardson) का मत है कि पुस्तकों का संग्रह उपयोग के लिए किया जाता है और उपयोग हेतु ही उनकी व्यवस्था की जाती है तथा ग्रन्थालय वर्गीकरण का उद्देश्य ही उपयोग को गतिशील बनाना है।

एक विधि के रूप में वर्गीकरण का सर्व प्रमुख उद्देश्य समय की बचत करना और पाठक को उसकी वांछित पाठ्य सामग्री प्रदान करना है।

2.3.3 वर्गीकरण का कार्य Functions of Classification

सेयर्स (W.C.B. Sayers) के अनुसार "वर्गीकरण के अभाव में कोई भी पुस्तकालयाध्यक्ष व्यवस्थित ग्रन्थालय की रचना नहीं कर सकता। किसी भी ग्रन्थालय में समुचित वर्गीकरण के बिना मुक्त प्रवेश व्यवस्था असम्भव है। समुचित पुस्तकों की अवर्गीकृत व्यवस्था में पाठक पथभ्रष्ट हो सकता है तथा वर्गीकरण के अभाव में निष्फल परिणाम निकलते हैं।" उन्होंने बताया कि वर्गीकरण मुख्यत:

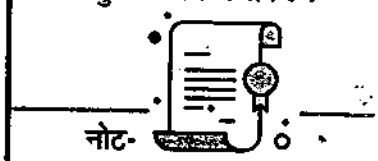

नोट-

निम्नलिखित कार्य करता है—

(अ) समान विषयों की पुस्तकें एक स्थान पर एकत्रित करता है।

(ब) पुस्तकों को ढूँढ़ने में समय की बचत करता है।

(स) पुस्तक संग्रह की समृद्धता एवं निर्बलता का रहस्योद्घाटन करता है।

(द) सुव्यवस्थित, व्यापक एवं एक-रूप पुस्तक चयन में सहायता प्रदान करता है।

डॉ० कीले (Dr. G.O. Kelley) के अनुसार ग्रन्थालय में वैज्ञानिक वर्गीकरण द्वारा निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं—

(अ) पुस्तकों को ऐसे क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित कर देता है, जिससे पाठकों तथा पुस्तकालयाध्यक्षों के समय की बचत हो एवं पुस्तकों के आदान-प्रदान में सुविधा हो।

(ब) निधानियों पर पुस्तकों को पुनः अपने निर्धारित स्थान तक पहुँचने की क्रिया में कोई कठिनाई न हो।

(स) पुस्तकों के चयन एवं संकलन में सरलता होती है।

(द) इसके द्वारा पुस्तकों के संग्रह को उत्तम ढंग से प्रदर्शित किया जा सकता है।

संक्षेप में ग्रन्थालय वर्गीकरण के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं—

1. पुस्तकें तथा अन्य पाठ्य सामग्री सहायक एवं सुविधाजनक क्रमबद्ध अवस्था में निधानियों पर व्यवस्थित हो जाती है, जिससे पाठकों और अनुसंधान में व्यस्त अनुसन्धानकर्ता को सहायता प्राप्त होती है।
2. निधानियों से पुस्तकों को प्राप्त करना तथा फिर निधानियों पर पुस्तकों को पुनः यथा स्थान व्यवस्थित करने में वर्गीकरण सहायक होता है। निधानियों के क्रम को निरन्तर सुव्यवस्थित रखने में भी वर्गीकरण सहायक होता है।
3. वाँछित पुस्तकों को खोजने में समय की बचत होती है।
4. वर्गीकरण के आधार पर ग्रन्थालय के संकलन की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है और सभी विषयों का समान रूप से प्रतिनिधि संकलन (Representative Collection) करने में भी सहायता प्राप्त होती है।
5. पाठक को सूचीपत्र से पुस्तक तक पहुँचाने का कार्य करता है।
6. वर्गीकरण के आधार पर ग्रन्थालयों मे संकलित सम्पूर्ण ज्ञान का संप्रेषण (Communication) और प्रदर्शन (Display) सूची के माध्यम से किया जाता है; साथ ही ज्ञान के भिन्न-भिन्न वर्गों तथा विषयों के आपसी महत्त्व उनकी सीमा, उनके अनेकानेक मुख्य पक्षों तथा क्रम इत्यादि का विवरण भी वर्गीकरण की सहायता से ही सूची के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है।
7. ग्रन्थालय में किस विषय पर कितनी पुस्तकें उपलब्ध हैं तथा उस विषय पर कितनी पुरानी एवं नयी पुस्तकें उपलब्ध हैं, का ज्ञान वर्गीकरण से सम्भव है।
8. वर्गीकरण द्वारा ग्रन्थालय के संकलन का प्रदर्शन एवं पुस्तकों का आदान-प्रदान सरल हो जाता है।
9. वर्गीकरण पुस्तकों के वार्षिक सत्यापन (Annual Verification) निधानी सूची (Self list) द्वारा सम्पन्न करने में सुविधा प्रदान करता है।

नोट-

10. इसके आधार पर पुस्तकों के आदान-प्रदान का लेखा रखने में सुविधा होती है। इससे अनेक प्रकार के आँकड़े तैयार करने में भी सहायता प्राप्त होती है।
11. सूची (Catalogue) एवं वाङ्मय सूची (Bibliography) के निर्माण में यह सहायक है।
12. पुस्तकों तथा पाठक के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य वर्गीकरण द्वारा ही किया जाता है।
13. सूचीकरण (Cataloguing) की दृष्टि से भी ग्रन्थालय वर्गीकरण का अत्यधिक महत्त्व है, जिसे क्रियाशील बनाने में इसका ही एकमात्र योगदान रहता है। पुस्तकों का विश्लेषण करने में तथा वर्गीकृत संलेखों को सूची के अन्तर्गत प्रस्तुत करने में इससे सुविधा मिलती है, इन विधियों से पाठकों की विविध प्रकार की पुस्तकों से अवगत होने तथा उनका उपयोग करने का अवसर प्राप्त होता है।
14. वर्गीकरण स्मृति सहायक के रूप में कार्य करता है तथा वस्तुओं के सम्बन्ध को प्रकट करता है।
15. विषयों की दृष्टि से किसी ग्रन्थालय की सबलता एवं निर्बलता को प्रकट करने का कार्य वर्गीकरण द्वारा सम्पादित किया जाता है।

ग्रन्थालय वर्गीकरण की महत्ता का उल्लेख करते हुए सेयर्स (W.C.B. Sayers) महोदय ने पुस्तकों को ग्रन्थालयों की आधारशिला और वर्गीकरण को ग्रन्थालयीनता की आधारशिला माना है। इससे प्रकट होता है कि वर्गीकरण के अभाव में न तो ग्रन्थालय के उद्देश्य की पूर्ति ही सम्भव है और न ही डॉ० रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित-ग्रन्थालय विज्ञान के प्रथम चार सूत्रों का ही निर्वाह हो सकता है; यथा—

1. उल्लेख उपयोगार्थ है;
2. प्रत्येक पाठक का प्रलेख;
3. प्रत्येक प्रलेख का पाठक;
4. पाठक एवं कर्मचारी के समय की बचत।

2.4 पुस्तकालय के विभिन्न कार्यों में वर्गीकरण की आवश्यकता

Need of Classification In Various Library Activities

ग्रन्थालयों में समस्त पाठ्य-सामग्री की क्रमबद्ध व्यवस्था और आकलन का आधार वर्गीकरण है, जिससे कार्य तीव्र-यान्त्रिक गति से सम्पन्न होने लगता है।

ग्रन्थालयों में निम्नलिखित ऐसे कार्य हैं, जिनमें वर्गीकरण का उपयोग मुख्य रूप से होता है—

1. **पुस्तक चयन**—वर्गीकरण द्वारा पुस्तक चयन में प्रमुख भूमिका का निर्वाह किया जाता है क्योंकि वर्गीकरण के आधार पर ही ग्रन्थालय के संकलन की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। निर्बल विषय संकलन को पुस्तक चयन के समय ध्यान में रखकर उसे सबल बनाने का प्रयास किया जा सकता है। इस प्रकार सभी विषयों का समान रूप से प्रतिनिधि संकलन का निर्माण करने में इसी से सहायता प्राप्त होती है।

   साथ ही पुस्तक चयन प्रक्रिया में भी वर्गीकरण सहायक सिद्ध होता है। चयन करते समय पुस्तकालयाध्यक्ष उपयोगी पुस्तक को पुस्तक चयन स्रोत (Book Selection Tools) में चिह्नित करता है। तदुपरान्त उनके चयन पत्रक बनाता है। यदि चयन पत्रक पर अस्थायी वर्गांक अंकित कर दिया जाये तो उन्हें सरलतापूर्वक विषयानुसार व्यवस्थित किया जा सकता है और सम्बन्धित विशेषज्ञ के पास उन्हें अनुमोदन के लिए भेजा जा सकता है।

नोट-

2. **निधानी व्यवस्था**—सेयर्स (W.C.B. Sayers) के मतानुसार वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा पुस्तकों अथवा उनके वृतान्तों को उनके उपयोगकर्त्ताओं के लिए निधानियों पर सर्वाधिक लाभप्रद रूप से व्यवस्थित कर दिया जाता है। अत: वर्गीकरण का प्राथमिक कार्य पाठ्य सामग्री को निधानियों पर सहायक क्रम में व्यवस्थित करना है जिससे उनका उपयोग सरल एवं सुगम हो जाएँ। वर्गीकरण द्वारा प्रत्येक पुस्तक को एक विशिष्ट बोधांक प्रदान कर निधानी पर उनका स्थान निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार सम्बन्धित पुस्तकों को सम्बद्ध कर दिया जाता है और एक विशिष्ट विषय से सम्बन्धित पुस्तकें एक स्थान पर एकत्रित हो जाती हैं तथा अन्य सम्बन्धित विषयों की पुस्तकों से सम्बद्ध हो जाती हैं जिससे पुस्तकें सहायक एवं सुविधाजनक क्रमबद्ध अवस्था में निधानियों पर व्यवस्थित हो जाती है। निधानियों से पुस्तकों को प्राप्त करने तथा फिर निधानियों पर पुस्तकों को पुन: यथास्थान व्यवस्थित करने, प्रत्येक नवागत पुस्तक का सर्वाधिक सहायक स्थान निश्चित करने एवं निधानियों के क्रम को निरन्तर सुव्यवस्थित रखने को यंत्रीकृत (mechanise) करने के लिए वर्गीकरण की आवश्यकता होती है।
3. **पुस्तक प्रदर्शन**—पुस्तक प्रदर्शन के लिए भी वर्गीकरण आवश्यक है। मुक्तद्वार प्रणाली को अपनाने वाले पुस्तकालयों में सम्पूर्ण संग्रह को भली-भाँति प्रदर्शित करने के लिए वर्गीकरण आवश्यक होता है।
4. **आदान-प्रदान**—पुस्तकों के आदान-प्रदान को सरल एवं सुगम बनाने में वर्गीकरण की आवश्यकता होती है। विभिन्न आदान-प्रदान प्रणालियों में अध्येयता एवं पुस्तक पत्रक को बोधांक द्वारा व्यवस्थित किया जाता है जिससे कम-से-कम समय में आदान-प्रदान की क्रिया को सम्पन्न किया जा सकता है।
5. **पुस्तक के विषय विश्लेषण में**—सूचीकार द्वारा विषय शीर्षकों के निर्माण के समय वर्गांक उस पुस्तक के विषय विश्लेषण में सहायक होता है।
6. **सूची में प्रविष्टियों की व्यवस्था**—वर्गीकृत सूची (Classified Catalogue) द्वारा अभिलिखित ज्ञान (Recorded Knowledge) की क्रमबद्ध व्यवस्था करके पाठ्य-सामग्री को प्राप्त करने में सहायता करना, जो न केवल वर्गीकृत आकलन का प्रावधान है, वरन् आनुवर्णिक क्रम (alphabetical order) का भी आकलन है जिसमें वर्गीकरण बहुत ही सहायक सिद्ध होता है।
7. **सन्दर्भ-सेवा**—सन्दर्भ-सेवा के क्षेत्र में पाठकों के सूचनार्थ उनके विषय की मात्रा का विश्लेषण करने और तत्पश्चात् उसके विशिष्ट विषय को निश्चित करने में भी वर्गीकरण द्वारा सहायता प्रदान की जाती है।
8. **प्रलेखन-सेवा**—प्रलेखन-सेवा (Documentation Service) के क्षेत्र में सूचना पुनर्प्राप्ति (Information retrieval), अनुक्रमणिका (Indexing), वाङ्मय सूची (Bibliography) आदि के निर्माण में भी वर्गीकरण की आवश्यकता होती है।

2.5 कैनन तथा पोस्टुलेट्स Canon and Postulates

2.5.1 कैनन Canon

अर्थ एवं उद्देश्य (Meaning and Purpose)—वर्गीकरण प्रक्रिया को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के उद्देश्य से अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किए। ये सिद्धान्त वर्गीकरण के उपसूत्र के नाम से जाने जाते

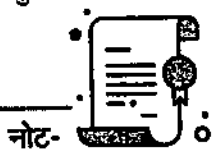

नोट-

हैं। इन उपसूत्रों की सहायता से ही वर्गीकरण की विभिन्न पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। इन उपसूत्रों को सेयर्स, रिचर्डसन एवं ब्लिस ने प्रतिपादित किया।

डॉ० रंगनाथन ने इन उपसूत्रों को आलोचनात्मक अध्ययन किया तथा 1937 में अपनी पुस्तक **प्रोलेगोमेना** की रचना की। इन उपसूत्रों को वर्गीकरण पद्धति के मूल्यांकन में कसौटी के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। उपसूत्र वर्गाचार्य एवं वर्गकार दोनों मार्गदर्शन का कार्य करता है।

वर्गीकरण के क्षेत्र में विषयों के अध्ययन को अधिक सूक्ष्म, व्यवस्थित व वैज्ञानिक आधार पर किए जाने के लिए रंगनाथन ने निम्न तीन स्तर पर कार्यों को करने का प्रारूप रखा—

1. वैचारिक स्तर पर कार्य (Idea Plane)
2. शाब्दिक स्तर पर कार्य (Verbal Plane)
3. अंकन स्तर पर कार्य (Notational Plane)

प्रत्येक स्तर पर वर्गीकरण कार्यों के लिए पृथक्-पृथक् उपसूत्रों का प्रावधान किया गया, जिससे उस स्तर पर किये जाने वाले कार्यों में एकरूपता बनी रह सके। ये उपसूत्र निम्न हैं—

1. **वैचारिक स्तर पर कार्य** (Canon for Work at the Idea Plane)

रंगनाथन ने वैचारिक स्तर पर वर्गीकरण सम्बन्धी कार्यों के निष्पादन व नियन्त्रण के लिए कुछ उपसूत्रों की व्याख्या की। इनका प्रयोग मुख्य रूप से पद्धति के निर्माण व उसके उपयोग में अधिक सहायक होते हैं। इस स्तर पर कुछ मुख्य अवधारणाओं का निर्धारण किया गया, जो निम्न है—

(i) विशेषता (Characteristics)

(ii) विशेषता का क्रमिक विकास (Succession of characteristics)

(iii) वर्ग विन्यास (Array of classes)

(iv) वर्गों की शृंखला (Chain of classes)

(v) संसर्ग अनुक्रम (Filiatory sequence)

उपर्युक्त अभिधारणाएँ वैचारिक स्तर से सम्बन्धित हैं। इन अभिधारणाओं के निम्न उपसूत्र हैं—

(i) विशेषता के उपसूत्र (Canon for characteristics)

(ii) विशेषता के क्रमिक विकास के उपसूत्र (Canon for succession of characteristics)

(iii) वर्गों के पंक्ति सम्बन्धी उपसूत्र (Canon for array)

(iv) वर्गों की शृंखला सम्बन्धी उपसूत्र (Canon for chain)

(v) संसर्ग अनुक्रम सम्बन्धी उपसूत्र (Canon for filiatory sequence)

2. **शाब्दिक स्तर पर कार्य** (Canon for Work at the Verbal Plane)

इस स्तर पर निम्न उपसूत्र प्रतिपादित किए गए—

(i) प्रसंग के उपसूत्र (Canon for context)

(ii) परिगणनात्मक उपसूत्र (Canon for enumeration)

(iii) प्रचलन के उपसूत्र (Canon for currency)

नोट-

(iv) संयतता के उपसूत्र (Canon for reticence)

3. अंकन स्तर पर कार्य (Canon for Work at the Notational Plane)

इस स्तर पर निम्न उपसूत्र प्रतिपादित किए—

(A) (i) समानार्थक सम्बन्धी उपसूत्र (Canon of synonym)

(ii) भिन्नार्थक सम्बन्धी उपसूत्र (Canon of homonym)

(B) चार युग्म उपसूत्र (Four pairs of Canon)—

(i) सापेक्षिकता सम्बन्धी उपसूत्र और एकरूपता सम्बन्धी उपसूत्र
(Canon of relativity and Canon of uniformity)

(ii) पदानुक्रम का उपसूत्र और अपदानुक्रम का उपसूत्र
(Canon of hierarchy and Canon of non-hierarchy)

(iii) मिश्रित अंकन का उपसूत्र और शुद्ध अंकन का उपसूत्र
(Canon of faceted notation and Canon of non-faceted notation)

(iv) सहविस्तृता का उपसूत्र और अल्प विस्तृता का उपसूत्र
(Canon of Co-extensiveness and Canon of under-extensiveness)

विशेषताएँ (Characteristics)

सत्वों (entities) की समानता या असमानता को निश्चित करने वाले गुणों (attributes) के आधार को विशेषताएँ कहते हैं।

गुण (Attribute)

एक सत्व की विशेषता या योग्यता या मात्रा की माप ही गुण है। अर्थात् प्रत्येक वस्तु या विचार में कुछ-न-कुछ गुण अवश्य होते हैं और इन्हीं गुणों के आधार पर इनमें अन्तर स्पष्ट किया जाता है। एक वस्तु में कई गुण होते हैं। वर्गीकरण में उन्हीं गुणों को सम्मिलित किया जाता है, जिनसे वर्गीकरण के उद्देश्य को पूरा करने में आवश्यकता महसूस की जाती है।

उदाहरणार्थ—

छात्र—

ऊँचाई

लम्बाई

औसत आदि।

उपर्युक्त उदाहरण में छात्र की ऊँचाई को एक विशेषता के रूप में उपयोग किया गया है। लेकिन छात्र की आँख व कान को गुण के रूप में उपयोग किया जाएगा।

सारांश में, एक वस्तु में सम्मिलित गुणों में से केवल उसी गुण को विशेषता के रूप में चुना जाता है, जो वर्गीकरण के उद्देश्य को पूरा करने में सबसे अधिक उपयुक्त एवं सहायक होती है। इस प्रकार ज्ञान वर्गीकरण प्रक्रिया का विशेषता एक आधार है।

१.5.2 लक्षण के उपसूत्र Canon of Characteristics

डॉ० रंगनाथन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'प्रोलेगोमेना' में वैचारिक स्तर के अनेक उपसूत्रों की व्याख्या

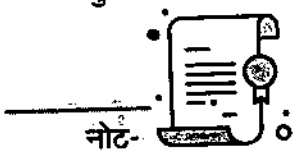

की है। इन उपसूत्रों का प्रथम समूह वर्गीकरण में प्रयोग की जाने वाली विशेषताओं को आधार बनाकर किया है। इसके अन्तर्गत चार उपसूत्रों को सम्मिलित किया है। ये उपसूत्र सामान्य बोध पर आधारित हैं। इनका वर्गीकरण पद्धति में उपयोग किया जाना आवश्यक है। इन उपसूत्रों का विशेष रूप से ज्ञान जगत के मूल विषयों, संयुक्त विषयों, जटिल विषयों तथा एकल विचारों के लिए होता है। विशेषता सम्बन्धी उपसूत्र निम्न हैं—

1. **पृथक्करण का उपसूत्र** (Canon of Differentiation)

इस उपसूत्र के अनुसार ज्ञान जगत के वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त विशेषता का चयन इस प्रकार होना चाहिए कि वह किसी श्रेणी को दो भागों में विभाजित कर सके अर्थात् विशेषता के प्रयोग से दो वर्गों या एकलों का निर्माण सम्भव हो सके; अर्थात् वर्गीकरण करने के लिए प्रयुक्त विशेषता में पदार्थ को कम-से-कम दो भागों में बाँट सकने की क्षमता होनी चाहिए।

उदाहरणार्थ—

किसी महाविद्यालय में अध्ययनरत् विद्यार्थियों को विभाजित करना है, तो इसके लिए 'शैक्षणिक योग्यता' विभाजक विशेषता के आधार पर एक से अधिक वर्ग बन सकते हैं—

1. स्नातकोत्तर 2. स्नातक

(i) कला, (ii) विज्ञान, (iii) वाणिज्य

यदि विद्यार्थी एक ही कक्षा के समान शैक्षणिक योग्यता के हैं, तो इसके आधार पर वर्ग नहीं बनेंगे। ऐसी स्थिति में यहाँ किसी अन्य विशेषता को चुनना होगा। समान शैक्षणिक योग्यता वाले विद्यार्थियों को लिंग, लम्बाई, वजन, मातृ भाषा तथा बौद्धिक स्तर में से किसी एक को आधार मानकर वर्ग बनाए जा सकते हैं।

डॉ० रंगनाथन ने अपनी द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में प्रत्येक वर्ग विभाजन के लिए पृथक् करने की विशेषता का उचित ढंग से प्रयोग किया है।

उदाहरण—मुख्य वर्ग इतिहास में विषयों के उपविभागों के लिए निम्न पाँच विशेषताओं का प्रयोग किया जा सकता है—

V(P), (P2) : (E) (2P) (T)

उक्त पक्ष परिसूत्र में (P) पक्ष में स्थान एवं (P2) पक्ष में संवैधानिक अंग विशेषताओं का प्रयोग निम्न है। इन विशेषताओं के आधार पर निम्नानुसार उपविभागों का निर्माण किया है—

V1 विश्व का इतिहास

V44 भारत का इतिहास

V11 राज्य का अध्यक्ष

V21 देश में प्रधानमंत्री

2. **सम्बद्धता का उपसूत्र** (Canon of Relevance)

इस उपसूत्र के अनुसार, ज्ञान जगत के वर्गीकरण के लिए जिस विशेषता को आधार बनाया जाए, वह वर्गीकरण के उद्देश्यों से सम्बद्ध होनी चाहिए, अर्थात् जिस उद्देश्य को ध्यान में रखकर वर्गीकरण किया जा रहा है, यह विशेषता उसे पूरा करने में सहायक होना चाहिए।

सेयर्स ने इस उपसुत्र को अनिवार्य विशेषता का सिद्धान्त कहा है।

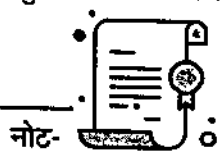

उदाहरणार्थ—यदि किसी विद्यालय की छात्राओं को खेलकूद प्रतियोगिता के लिए विभाजित करना है, तो उनकी ऊँचाई, वजन, शारीरिक क्षमता आदि विशेषताएँ सम्बद्ध होंगी। परन्तु उनका रंग, लेखन शैली, आँखों का रंग आदि विशेषताएँ असम्बद्ध होंगी।

इसी प्रकार पुस्तकों की विशेषताओं के विभाजन में, एक जिल्दसाज के लिए गत्ता, कागज का रंग, आकार-प्रकार, मुद्रण का तरीका आदि सम्बद्ध होगी। लेकिन पुस्तकालयाध्यक्ष इन्हीं पुस्तकों को लेखक, विषय, प्रकाशन वर्ष, भाषा आदि विशेषताओं के रूप में विभाजित करेगा।

द्विबिन्दु एवं दशमलव वर्गीकरण पद्धति में इस उपसूत्र का अनुकरण किया है। जैसे—भाषा विज्ञान में भाषा विशेषता के आधार पर ही मूलभूत विभागों को प्राप्त किया गया है। भाषा के आधार पर किए गए कुछ विभाग इस प्रकार हैं—

द्विबिन्दु		दशमलव
P111	आंग्ल भाषा	420
P122	फ्रेंच भाषा	440
P15	संस्कृत भाषा	491.2

इस प्रकार वर्गीकरण के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही विशेषताओं का चुनाव करना चाहिए।

3. **निर्धार्यता का उपसूत्र** (Canon of Ascertainability)

इस उपसूत्र के अनुसार, ज्ञान वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त विशेषताएँ ऐसी हों, जिसे आसानी से सुनिश्चित एवं निर्धारित किया जा सके।

ज्ञान के सत्वों अथवा विचारधारा का वर्गीकरण करने के लिए कई विशेषताओं का उपयोग किया जाता है, लेकिन इन विशेषताओं में कुछ निश्चित होती हैं एवं कुछ अनिश्चित। यह उपसूत्र इस बात पर बल देता है कि ज्ञान के वर्गीकरण के लिए केवल निश्चित एवं निर्धारित विशेषताओं को ही चुना जाना चाहिए।

उदाहरणार्थ—मुख्य वर्ग साहित्य में लेखकों को वर्गीकृत करना है, तो जन्म तिथि (Date of birth) विशेषता का प्रयोग करना चाहिए, न कि मृत्यु तिथि (Date of death) का। चूँकि मृत्यु तिथि निश्चित नहीं है जबकि जन्म तिथि निश्चित एवं स्पष्ट होती है। इस कारण डॉ० रंगनाथन ने अपने द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में मुख्य वर्ग साहित्य में लेखक के जन्म वर्ष को ही वर्गीकरण का आधार बनाया है।

4. **स्थायित्व का उपसूत्र** (Canon of Permanence)

इस उपसूत्र के अनुसार, ज्ञान वर्गीकरण के लिए जिन विशेषताओं का प्रयोग किया जा रहा है, उन्हें उस समय तक स्थायी एवं निश्चित रहना चाहिए, जब तक कि वर्गीकरण के उद्देश्य में परिवर्तन नहीं हुआ हो।

उदाहरणार्थ—सामयिक को सामान्यतया निम्न विशेषताओं के आधार पर विभाजन करने की परम्परा रही है—

(i) विद्युत परिषद् द्वारा प्रकाशित सामयिक,

(ii) ऐसे सामयिक जो विद्युत परिषद् द्वारा प्रकाशित न किए जाते हैं।

विभाजन का यह आधार दोषपूर्ण है चूँकि अधिकांश सामयिक प्रकाशनों को प्रकाशित करने वाली संस्थाओं में परिवर्तन होने की सम्भावना रहती है। इसलिए उक्त विभाजन का तरीका स्थायित्व प्रदान

नोट-

नहीं कर सकता। अत: यदि प्रकाशन वर्ष की विशेषता प्रयुक्त की जाती है तो यह विशेषता स्थायित्व प्रदान करने वाली हो सकती है।

2.5.3 विशेषताओं के क्रमिक प्रयोग का उपसूत्र

Canon for Succession of Characteristics

डॉ० रंगनाथन के अनुसार ज्ञान वर्गीकरण के लिए चयन की गयी विशेषताओं का प्रयोग क्रम से किया जाना चाहिए अर्थात् जब ज्ञान जगत को विभाजित किया जाता है तो अनेक विशेषताओं का प्रयोग किया जाता है। ये विशेषताएँ दो या उससे अधिक हो सकती हैं। इन विशेषताओं के क्रम को निर्धारण करने के लिए निम्न उपसूत्र का प्रयोग किया जाता है—

1. **संलग्नता का उपसूत्र** (Canon of Concomitance)

इस उपसूत्र के अनुसार दो विशेषताएँ संलग्न नहीं होनी चाहिए अर्थात् दो विशेषताओं द्वारा विषय को समान विभागों में विभाजित नहीं किया जाना चाहिए। चूँकि दोनों विशेषताओं के प्रयोग करने से एक ही प्रकार के वर्ग का निर्माण होगा।

इसलिए आवश्यक है कि यदि दो विशेषताओं के आधार पर निर्मित वर्ग एक ही है तो इस प्रकार की सहयोगी विशेषताओं का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

उदाहरणार्थ—लेखक की आयु व जन्म तिथि, दोनों विशेषताओं के आधार पर निर्मित किया गया वर्ग एक से ही होंगे, क्योंकि ये संलग्न हैं। इसलिए इन दोनों विशेषताओं का प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि आयु व लम्बाई को वर्गीकरण का आधार बनाया जाए तो पृथक् वर्ग निर्मित होंगे।

इसी प्रकार पुस्तक के प्रथम प्रकाशन और प्रथम संस्करण भी सहगामी (concomitance) हैं। इससे भी एक जैसे वर्ग निर्मित होंगे। अत: इनका एकसाथ प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

2. **सम्बद्ध अनुक्रम का उपसूत्र** (Canon of Relevant Succession)

इस उपसूत्र के अनुसार, ज्ञान वर्गीकरण पद्धति में विशेषताओं का प्रयोग वर्गीकरण के उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए। एक से अधिक विशेषता होने पर उनके मध्य अनुक्रम निर्धारित करने में यह उपसूत्र सहायता करता है।

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में भाषा, रूप, ग्रन्थकार एवं कृति विशेषताओं का अनुक्रम निश्चित किया गया है। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में भाषा, रूप, काल एवं लेखक के अनुसार अनुक्रम प्रदान किया गया है।

3. **अनुरूपता अनुक्रम का सिद्धान्त** (Canon of Consistent Succession)

इस उपसूत्र के अनुसार, वर्गीकरण पद्धति में निर्धारित की गयी विशेषताओं के अनुक्रम का उस समय तक अनुसरण किया जाना चाहिए जब तक वर्गीकरण के उद्देश्य में कोई परिवर्तन न हो। इससे पद्धति में एकरूपता बनाए रखने में योगदान मिलता है। इसके अभाव में अव्यवस्था की स्थिति हो जाएगी।

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में इतिहास में चार विशेषताओं को चुना गया है और उसका अनुक्रम भौगोलिक, संवैधानिक अंग, समस्या एवं कालक्रम निश्चित किया गया है। इन अनुक्रम का दृढ़तापूर्वक पालन किया जाना चाहिए।

इस प्रकार इन उपसूत्रों का उपयोग कर वर्गीकरण पद्धति को एकरूप एवं उपयोगी बनाया जा सकता है।

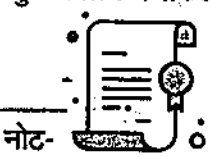

नोट-

2.6 वर्गीकरण की अभिधारणा अधिगम

Postulational Approach to Classification

अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition)—पुस्तकालय वर्गीकरण द्वारा प्रलेखों को एक सहायक अनुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है अर्थात् वर्गीकरण की सहायता से प्रलेख में विशिष्ट विषय का क्रमसूचक प्रतीकों की क्रमिक भाषा में अनुवाद किया जाता है। वर्गीकरण प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है। अत: इसे समझने के लिए कुछ अभिधारणाओं की सहायता ली जाती है।

पुस्तकालय वर्गीकरण के कार्य को सरल बनाने एवं इस कार्य में आने वाली समस्याओं को हल करने के लिए मेलविल ड्यूई, सेयर्स, सेवेज आदि विद्वानों ने अपने अनुभव के आधार पर अनेक नियमों का निर्माण किया। इन नियमों के कारण वर्गीकरण के कार्य में एकरूपता आयी है।

डॉ० रंगनाथन ने वर्गीकरण प्रक्रिया को एक वैज्ञानिक आधार प्रदान किया है। उन्होंने नियमों, उपसूत्रों, नियामक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया जिससे वर्गीकरण को सरल एवं रुचिकर बनाया जा सके।

अभिधारणाओं की सहायता से वर्गीकरण करने का उद्देश्य वर्गीकरण की पद्धति को योजनाबद्ध अथवा अनुशासित बनाना है। इसकी सहायता से अव्यवस्थित विचारधारा को भी नियंत्रित किया जा सकता है। डॉ० रंगनाथन के मतानुसार अभिधारणा विधि के अन्तर्गत कुछ अभिधारणाओं को स्वीकृत कर उनसे सम्बन्धित समस्त अनुमानों को हल कर लिया जाता है। वास्तविकता तो यह है कि निर्धारित परिस्थितियों में प्रत्येक अभिधारणा निश्चित एवं पुष्ट होती है। किसी प्रलेख के वर्गीकरण के लिए कुछ सिद्धांत निश्चित किए गए हैं। डॉ० रंगनाथन ने इस कार्य को करने के लिए सोपानिक विधि की रचना की है। इन सोपानिक विधि के 9 चरण निर्धारित किए हैं। इसकी सहायता से सामान्य श्रेणी का वर्गाकार भी जटिल से जटिल विषय को वर्गीकृत कर सकता है।

2.7 ज्ञान वर्गीकरण एवं पुस्तक वर्गीकरण

Knowledge Classification and Book Classification

ज्ञान वर्गीकरण (Knowledge Classification)—दर्शनशास्त्री प्राचीन समय से ही ज्ञान वर्गीकरण में रुचि लेते रहे हैं। उन्होंने विभिन्न विचारों को उनके आपसी सम्बन्धों के आधार पर वर्ग बनाने का कार्य किया। इस प्रकार ज्ञात-अज्ञात सभी विचारों का समावेश करने के लिए ज्ञान पद्धतियाँ विकसित हुईं। ज्ञान वर्गीकरण पद्धतियों में न तो विषय को उनमें निहित उपविषयों आदि को अन्त तक विभाजन करने पर एवं न ही उसमें स्थिर एवं सहायक क्रम पर जोर दिया।

अत: ज्ञान वर्गीकरण के अन्तर्गत ऐसे समस्त तत्त्वों का अध्ययन किया जाता है, जिसमें कुछ अज्ञात है अथवा केवल भविष्य में ही ज्ञात हो सकता है।

पुस्तक वर्गीकरण (Book Classification)—पुस्तक वर्गीकरण, साहित्य में ज्ञान की खोज के लिए समय बचाने की यांत्रिक क्रिया है। सेयर्स का कथन है कि "पुस्तक को व्यवस्थित करने के लिए वर्गीकरण पद्धति को प्रमुख यंत्र के रूप में पुस्तकों की प्रकृति पर ध्यान दिया जाना चाहिए।" अर्थात् पुस्तकों को फलकों पर व्यवस्थित करना पुस्तक वर्गीकरण है।

इस प्रकार पुस्तक वर्गीकरण, ज्ञान वर्गीकरण में निहित है। ज्ञान वर्गीकरण में कुछ परिवर्तन करने जैसे—ग्रंथांक, संग्रहांक आदि, पुस्तक वर्गीकरण पद्धति बन सकती है। ये परिवर्तन इसलिए आवश्यक है कि पुस्तक की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए पुस्तक वर्गीकरण किया जाता है। ज्ञान वर्गीकरण व पुस्तक वर्गीकरण के सम्बन्ध को अग्रानुसार दर्शाया जा सकता है—

नोट-

ज्ञान वर्गीकरण	=	विशिष्ट विषय (वर्ग संख्या)
पुस्तक वर्गीकरण	=	पुस्तक की विशिष्ट आकृति (ग्रंथ संख्या)
पुस्तकालय वर्गीकरण	=	ज्ञान वर्गीकरण + पुस्तक वर्गीकरण
पुस्तकालय वर्गीकरण	:=	ज्ञान वर्गीकरण + पुस्तक वर्गीकरण + अनुक्रम वर्गीकरण

ज्ञान वर्गीकरण एवं पुस्तक वर्गीकरण में अन्तर

(Difference between Knowledge Classification and Book Classification)

क्र. सं.	ज्ञान वर्गीकरण (Knowledge Classification)	पुस्तक वर्गीकरण (Book Classification)
1.	इसमें दार्शनिक अपने विचारों को अपनी सन्तुष्टि के लिए वर्गीकृत करते हैं।	इसमें पुस्तकों को फलकों पर सहायक क्रम में व्यवस्थित करने हेतु वर्गीकरण किया जाता है जिससे पाठक सुगमतापूर्वक उन्हें ढूँढ सके।
2.	यह अधिक अमूर्त है। केवल भावनाओं को विषय अथवा उपविषय के रूप में व्यवस्थित किया जाता है।	यह अधिक मूर्त है। यह भावनाओं की लिखित अभिव्यक्ति से सम्बन्धित है जिन्हें पुस्तक, पत्र-पत्रिकाओं में व्यक्त किया जाता है।
3.	यह मुख्यतया वास्तविक है।	यह अधिक सीमा तक कृत्रिम है।
4.	दार्शनिकों ने इस पद्धति को क्रमबद्ध नहीं किया है।	इस पद्धति में विभिन्न पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं का क्रम निश्चित किया है।
5.	इस पद्धति में दार्शनिकों के विषयों को अंकन प्रदान नहीं किया है, अपितु विषय को विस्तृत/सूक्ष्म आदि रूप में व्यवस्थित किया है।	प्रत्येक विषय को वर्ग संख्या प्रदान की है। अत: अंकन का उपयोग किया गया है।
6.	ग्रंथांक व अनुक्रम क्रमांक का प्रावधान नहीं है।	प्रत्येक प्रलेख की व्यक्तिगत पहचान हेतु ग्रंथांक व अनुक्रम संख्या का प्रावधान किया है।
7.	अंकन नहीं होने से पंक्ति व शृंखला में असीमित ग्राह्यता है।	इसमें अंकन की सीमाएँ होने में पंक्ति व शृंखला में ग्राह्यता की सीमितता है।
8.	यह पूर्व निर्णीत भावनाओं पर आधारित है। व्यक्तिगत अथवा प्रचलित सिद्धान्तों पर आश्रित है।	वास्तविक व अविभाज्य उद्देश्यों अथवा उनके रूपों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
9.	सम्पूर्ण ज्ञान क्षेत्र अनिवार्यत: सामर्थ्य से बाहर है।	पुस्तकों का भौतिक रूप पूर्णतया निश्चित है।

2.8 अंकन Notation

2.8.1 अंकन का अर्थ Meaning of Notation

प्राय: हम, अपनी सुविधा के लिए, दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में तथा प्रत्येक कला व विज्ञान के क्षेत्र में कुछ प्रतीकों (Symbols) व चिह्नों का प्रयोग करते हैं। इनका प्रयोग हम विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए करते हैं। जैसे—अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अपने विचारों को लिखते समय हम कोमा (,) का प्रयोग अल्पविराम के लिए, सेमीकोलन (;) का प्रयोग अर्धविराम के लिए तथा बिंदु (.) का प्रयोग पूर्णविराम के लिए करते हैं। इसी प्रकार, गणित के क्षेत्र में भी प्रतीकों तथा आकृतियों का प्रयोग विभिन्न पदों व शब्दों को सूचित करने के लिए करते हैं। जैसे = का प्रयोग बराबर या (is equal to) के लिए, % का प्रयोग प्रतिशत के लिए, ÷ का प्रयोग भाग के लिए तथा × का प्रयोग गुणा के लिए किया जाता है। इसी प्रकार रसायन शास्त्र में विभिन्न रसायनों को सूचित करने के लिए

प्रतीकों के रूप में फॉर्मूला प्रयोग में लाये जाते हैं। इसी प्रकार वर्गीकरण के क्षेत्र में भी हम विभिन्न विषयों, वस्तुओं, पदार्थों या वर्गों को प्रतीकों व अंकों के द्वारा प्रदर्शित करते हैं। इन्हीं प्रतीकों को अंकन कहा जाता है। किसी विषय या शाब्दिक धरातल पर वर्गीकरण करते समय हम उसके वर्ग तथा उपवर्गों को प्राकृतिक भाषा में एक नाम देते हैं तथा आंकिक धरातल में उस नाम या विषय या वर्ग को प्रतीकों के माध्यम से प्रतिनिधित्व करते हैं। ये प्रतीक कृत्रिम या बनावटी होते हैं। इस प्रकार प्राकृतिक भाषा के पदों व शब्दों को कृत्रिम प्रतीकों व अंकों की भाषा में व्यक्त करने या बताने की प्रक्रिया को अंकन कहते हैं। वर्गीकरण की प्रक्रियाओं में हम किसी विषय या वर्ग या उपवर्ग या उपवर्गों के भी खण्डों को सूचित करने के लिए प्रतीकों व संकेत संख्याओं का प्रयोग करते हैं। जैसे अर्थशास्त्र के लिए दशमलव वर्गीकरण में 330 प्रतीक संख्या का तथा द्विबिंदु वर्गीकरण पद्धति में X प्रतीक संख्या का प्रयोग दिया गया है।

2.8.2 अंकन की परिभाषाएँ Definitions of Notation

सामान्य अर्थ में, कुछ संकेतों, चिह्नों व प्रतीकों के समूह या इनकी प्रणाली को, जिसे किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए अपनाया जाता है, अंकन कहते हैं। अंकन का अर्थ स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने परिभाषायें निम्नानुसार प्रस्तुत की है—

(i) "किसी वर्गीकरण पद्धति में विभिन्न वर्गों को सूचित करने के लिए प्रयोग में लाई गई क्रम सूचक अंकों की व्यवस्था को (उस पद्धति का) अंकन कहते हैं।" —एस०आर० रंगनाथन

(ii) "वर्गों तथा उनके उपविभागों के लिए प्रयोग में लाये गये प्रतीकों को उस पद्धति का अंकन कहते हैं।" —मार्गरिट मान

(iii) "अंकन प्रतीकों व चिह्नों की एक पद्धति है, जो किसी क्रम को सूचित करते हैं तथा जिनका प्रयोग पदों या किसी शृंखला की इकाइयों या किन्हीं वस्तुओं के समूह को सूचित करने के लिए किया जाता है।" —एच०ई० ब्लिस

(iv) "किसी भी वर्गीकरण में पदों को सूचित करने के लिए प्रयोग में लाई गई प्रतीकों या सांकेतिक चिह्नों की शृंखला को अंकन कहते हैं, जो अपनी क्रम व्यवस्था के द्वारा वर्गीकरण की व्यवस्था को प्रदर्शित करती है।" —सेयर्स

उपरोक्त सभी परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि अंकन प्रतीकों का समूह है। इन प्रतीकों का प्रयोग प्राकृतिक भाषा के पदों व शब्दों को अथवा वस्तुओं व पदार्थों के वर्गों व उपवर्गों को सूचित करने के लिए किया जाता है। ये प्रतीक किसी एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित किये जाते हैं तथा ये वर्गीकरण पद्धति की क्रम व्यवस्था को प्रदर्शित करते हैं। जैसे—A से Z तक रोमन बड़े अक्षरों का प्रतीकों के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इनका क्रम निश्चित है। इस क्रम को सभी जानते हैं।

अंकन का आधार (Bases of Notation)

अंकन के लिए कोई आधार चुनना पड़ता है। अंकन के आधार के लिए मुख्यतया निम्नलिखित प्रकार के प्रतीकों व चिह्नों का प्रयोग किया जा सकता है—

1. हिंदी–अरबी अंक (Indo-Arabic Numerals) : 1 से 9 तथा 0
2. रोमन बड़े अक्षर (Roman Capital Letters) : A से Z
3. रोमन छोटे अक्षर (Roman Small Letters) : a से z
4. ग्रीक अक्षर (Greek Letters) जैसे, Δ

नोट-

5. विराम चिह्न (Punctuation marks) जैसे—कोमा (,), सेमीकोलन (;), बिन्दु (.), कोलन (:) आदि।
6. गणितीय चिह्न (Mathematical Symbols) जैसे— + (प्लस), – (माइनस) आदि।
7. अन्य, जैसे— → तीर, (·) चक्राकार कोष्ठक आदि।

2.8.3 अंकन का महत्त्व Importance of Notation

अंकन के अभाव में ग्रन्थों का वर्गीकरण असम्भव है। वर्गीकरण के लिए अंकन अत्यन्त आवश्यक है। ग्रन्थों में विवेचित विशिष्ट विषय के नाम को प्राकृतिक भाषा में कृत्रिम भाषा में रूपान्तरित करना अनिवार्य है। इस कृत्रिम भाषा का निर्माण अंकन द्वारा ही किया जाता है। सेयर्स (Sayers) महोदय का कथन ठीक ही है "उत्तम अंकन दोषपूर्ण वर्गीकरण को अच्छा नहीं बना सकता, परन्तु एक दोषयुक्त अंकन उत्तम वर्गीकरण की उपयोगिता को किसी सीमा तक नष्ट अवश्य कर सकता है।" इसी प्रकार ब्लिस (Bliss) महोदय का कथन है कि "अंकन का कार्य कुछ भी हो, परन्तु वर्गीकरण का निर्माण इसके द्वारा नहीं होता, यद्यपि यह सम्पूर्ण वर्गीकरण को नष्ट कर सकता है। जिस सीमा तक अंकन कुशल होगा, उसी सीमा तक वर्गीकरण पद्धति, नये वर्गों को तथा पूर्व निर्मित वर्गों को बिना परिवर्तित किये ग्रहण करने में समर्थ होगी।"

ग्रन्थालय वर्गीकरण में अंकन के महत्त्व का अनुमान इस बात से ही लगाया जा सकता है कि अनेक वर्गीकरण प्रणालियों के नामकरण का आधार ही अंकन है। उदाहरणार्थ—डॉ० रंगनाथन द्वारा रचित कोलन क्लासीफिकेशन के नामकरण का आधार कोलन (:) अंकन है। मेल्विल ड्यूई (Melviel Dewey) की प्रणाली दशमलव वर्गीकरण का नामकरण दशमलव (·) अंकन पर आधारित है।

2.8.4 अंकन के प्रकार Types of Notation

अंकन दो प्रकार के होते हैं—

1. **शुद्ध अंकन** (Pure Notation)—वह अंकन जिसका निर्माण केवल एक ही प्रकार के प्रतीकों अथवा चिह्नों से होता है।

उदाहरणार्थ— 123456789 अथवा

ABCD.....XYZI

शुद्ध अंकन का सर्वोत्तम उदाहरण मेल्विल ड्यूई (Melviel Dewey) की दशमलव वर्गीकरण पद्धति है। इसमें शुद्ध अंकन का उपयोग सर्वप्रथम किया गया था। इस प्रणाली में मात्र अरेबिक अंकों (Arabic Numerals) का ही उपयोग किया गया है। कटर (C.A. Cutter) का एक्सपैन्सिव क्लासीफिकेशन (Expensive Classification) भी एक दृष्टि से शुद्ध अंकन माना जाता है।

गुण—शुद्ध अंकन के गुण निम्नलिखित हैं—

1. इसे सरलता एवं शीघ्रता के साथ लिखा जा सकता है।
2. इसे पढ़ना एवं स्मरण रखना सरल है।
3. यह बहुत सरल होता है।
4. यह सरलता से प्रत्येक व्यक्ति की समझ में आ सकता है।
5. इसमें त्रुटि या भूल होने की संभावना कम होती है।
6. यह सरलतापूर्वक क्रम निर्धारण में सहायक है।

नोट-

7. इनसे निर्मित वर्गांक संक्षिप्त होता है।

दोष—शुद्ध अंकन के दोष निम्नलिखित हैं—

1. शुद्ध अंकन का सबसे बड़ा दोष इसके आधार की सीमितता है।

   यदि वर्गीकरण प्रणाली में रोमन अक्षरों का उपयोग किया जाता है, तो सम्पूर्ण ज्ञान जगत को 26 मुख्य वर्गों तक ही विभाजित किया जा सकता है और यदि अरेबिक अंकों का ही उपयोग किया जाता है, तो केवल 9 अथवा 10 मुख्य वर्ग ही संभव होंगे। यही कारण है कि शुद्ध अंकन वाली पद्धति दशमलव वर्गीकरण में भी अब अक्षरों का उपयोग किया जाने लगा है।

2. इसमें अंकन की ग्राह्यता सीमित होती है।
3. शुद्ध अंकन वाली प्रणाली के द्वारा सूक्ष्म वर्गीकरण संभव नहीं है।

डॉ० रंगनाथन के मतानुसार शुद्ध अंकन का उपयोग पूर्णरूप से तभी संभव है जब ज्ञान के समस्त तत्त्व एवं शाखाएँ अंकन योजना प्रस्तुत करने से पूर्व ही ज्ञात हों।

2. **मिश्रित अंकन** (Mixed Notation)—मिश्रित अंकन से तात्पर्य उस अंकन से है जिसका निर्माण दो या दो से अधिक प्रतीकों अथवा चिह्नों से होता है।

उदाहरणार्थ— 0,1,3,4.....7,8,9, या

A,B,C,D.....W,X,Y,Z या

a,b,c,d.......w,x,y,z या

Δ , ; : · ' ( ). ← → आदि।

मिश्रित अंकन का उपयोग सर्वप्रथम रिचर्डसन (E.C. Richardson) महोदय ने अपनी प्रणाली प्रिन्सटन स्कीम (Princeton Scheme) में किया और इसकी उपयोगिता को बढ़ाया जिसके अन्तर्गत संख्याओं और अक्षर दोनों का उपयोग है।

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस (Library of Congress), जे०डी० ब्राउन की सबजेक्ट क्लासीफिकेशन (Subject Classification), डॉ० रंगनाथन की कोलन क्लासीफिकेशन (Colon Classification), ब्लिस की बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन (Bibliographic Classification), ब्रिटिश म्यूजिम (British Museum) पद्धति आदि मिश्रित अंकन के उदाहरण हैं। इन सभी पद्धतियों में अंकनों के लिए अक्षरों एवं अंकों का उपयोग किया गया है।

गुण—मिश्रित अंकन के गुण निम्नलिखित हैं—

1. इसका आधार विस्तृत है जिससे अधिक विषयों को स्थान दिया जा सकता है।
2. शुद्ध अंकन की अपेक्षा इस अंकन का वर्गांक संक्षिप्त होता है।
3. इसमें नये वर्गों को वर्गांक की लम्बाई बढ़ाये बिना ही स्थान प्रदान किया जा सकता है।
4. इसमें सर्वत्र विकसित होने की क्षमता है।
5. यहाँ अंकन में ग्राह्यता अधिक होती है।
6. इसके द्वारा सूक्ष्म वर्गीकरण संभव है।

ोष—मिश्रित अंकन में निम्नलिखित दोष होते हैं—

1. यह शुद्ध अंकन की तुलना में जटिल है।

नोट-

2. इसे शीघ्रता एवं सरलता से लिखना, पढ़ना, उच्चारित करना सम्भव नहीं है।
3. इसमें स्मरणशीलता का अभाव है।
4. इसके वर्गों के क्रम को जानना कठिन होता है।
5. इसमें त्रुटि अथवा भूल होने की संभावना अधिक होती है।

रिचर्डसन (E.C. Richardson) की पद्धति से पूर्ण शुद्ध अंकन बहुत लोकप्रिय था, परन्तु उसके अनेक दोषों के कारण मिश्रित अंकन युक्त पद्धतियों को ही अधिक महत्त्व दिया जाता है। ज्ञान के अनन्त एवं चहुँमुखी विकास तथा नवीन विषयों के क्रम को अव्यवस्थित किये बिना स्थान देने की क्षमता मिश्रित अंकन युक्त पद्धति में ही है।

इस सम्बन्ध में डॉ० रंगनाथन का मत है कि यदि ज्ञान अनन्त एवं असीमित है और भविष्य में भी वृद्धि होने की सम्भावना है तो शुद्ध अंकन की अपेक्षा मिश्रित अंकन ही उपयोगी सिद्ध हो सकता है। पद्धति की सफलता के लिए मिश्रित अंकन का उपयोग अनिवार्य है।

अंकन के कार्य (Functions of Notation)

अंकन के प्रमुख कार्य निम्नानुसार हैं—

(i) **वर्णानुक्रम का व्यवस्थित अनुक्रम से संबंध स्थापित करना**—पुस्तकालय सूची या किसी भी ग्रन्थ सूची में सभी अध्ययन सामग्री प्राय: वर्गीकरण के क्रम में व्यवस्थित होती है। पाठकों की सहायतार्थ विषयों के सभी पदों को वर्णानुक्रम में भी व्यवस्थित किया जाता है। इस प्रकार पाठक पहले वर्णानुक्रम में अपने विषय की खोज करता है और उससे सम्बन्धित प्रतीक संख्या (वर्गांक) को नोट करके वर्गानुसार व्यवस्थित पुस्ताकों के क्रम में अपने विषय से सम्बन्धित पुस्तक या पुस्तकों को एक ही स्थान पर एकसाथ प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार अंकन वर्णानुक्रम को व्यवस्थित अनुक्रम के साथ जोड़ने का कार्य करता है।

(ii) **निधानियों पर व्यवस्थित सामग्री का स्थान यन्त्रवत निर्धारण करना**—प्रतीक संख्या (वर्ग संख्या) की सहायता से पाठक निधानियों पर व्यवस्थित अपनी अध्ययन सामग्री का शीघ्रता से पता लगा लेता है। जैसे—भारत की शिक्षा का वर्गांक T44 है। वह इस प्रतीक संख्या की सहायता से इस विषय से सम्बन्धित सभी पुस्तकों को निधानियों पर तुरन्त प्राप्त कर लेता है।

(iii) **समकक्ष व अधीनस्थ वर्गों के क्रम को प्रदर्शित करना**—ज्ञान के क्षेत्र में कुछ वर्ग एक दूसरे के समकक्ष दरजे के होते हैं तथा कुछ वर्ग किसी एक प्रधान वर्ग के उपविभाजन या उपवर्ग होते हैं। ये सभी उपवर्ग प्रधान वर्ग के अधीन होते हैं। जैसे—हिन्दू धर्म (वैदिक), जैन धर्म, बौद्ध धर्म अपनी पंक्तियों में समकक्ष दरजे के वर्ग हैं। Q1, Q3, Q4 प्रतीक संख्याओं द्वारा यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये सभी समकक्ष वर्ग हैं। जैसे—X722 (संपत्ति कर), X723 (भूमि कर), X724 (आय कर) इन सभी वर्ग संख्याओं में X72 (टैक्स) प्रधान वर्ग का अंकन विद्यमान है और इस प्रकार अंकन (प्रतीकों) के माध्यम से ये सभी X72 (टैक्स) प्रधान वर्ग के अधीनस्थ वर्ग प्रतीत होते हैं।

(iv) **वर्गीकृत व्यवस्था व उसके अनुक्रम को यन्त्रवत बनाना**—वर्गीकरण में प्रत्येक पद को क्रम सूचक प्रतीक संख्या प्रदान कर दी जाती है। इस प्रतीक संख्या (वर्ग संख्या) के द्वारा वर्गीकृत व्यवस्था व उसके अनुक्रम को यन्त्रवत बना दिया जाता है अर्थात् वर्ग संख्या की

नोट-

सहायता से किसी भी पुस्तक के स्थान का तुरन्त पता लगाया जा सकता है। साथ ही इसकी सहायता से पुस्तक को अपने निर्धारित स्थान पर भी तुरन्त वापस रखा जा सकता है। पुस्तकालय में जब नवीन पुस्तक आती है तो उसे भी सह सम्बन्धित विषय की पुस्तकों के साथ, वर्तमान व्यवस्था को भंग किये बिना, तुरन्त रखा जा सकता है।

(v) **पुस्तक संग्रह कक्षों का मार्गदर्शन करने में सहायता करना**—बड़े पुस्तकालयों में पुस्तकें अनेक संग्रह कक्षों में व्यवस्थित होती हैं। इनकी जानकारी प्रदान करने के लिए मार्गदर्शक चार्ट बनाकर विभिन्न स्थानों पर लगा दिए जाते हैं। इस कार्य को अंकन बहुत आसान बना देता है।

(vi) **वर्गीकरण पद्धति की अनुसूचियों के निर्माण तथा उनके भौतिक स्वरूप में अत्यधिक मितव्यता प्रदान करना**—पक्षात्मक वर्गीकरण में विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित विचारों की पृथक्-पृथक् मानक अनुसूचियाँ बना दी जाती है। इसके साथ ही बहुत से सामान्य विचार, जो अनेक विषयों के साथ समान रूप से जोड़े जा सकते हैं, पृथक् सामान्य अनुसूचियों में प्रस्तुत कर दिए जाते हैं। आवश्यकतानुसार एक से अधिक अनुसूचियों से विभिन्न पदों से सम्बन्धित प्रतीकों को लेकर एकसाथ जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार दोनों ही क्षेत्रों में अंकन द्वारा मितव्ययता प्रदान की जा सकती है।

(vii) **स्मृति सहायक विशेषता द्वारा पुस्तकालयाध्यक्ष को सहायता देना**—वर्गीकरण के क्षेत्र में विभिन्न विषयों के उपवर्गों में एक ही प्रकार के विचार को या उससे मिलते-जुलते विचार को व्यक्त करने के लिए एक ही अंक का प्रयोग किया जाता है। यह स्मृति सहायक अंकन विधि पुस्तकालयाध्यक्ष को प्रत्येक विषय के वर्गों के अनुक्रम को याद रखने में सहायता प्रदान करती है। जैसे द्विबिंदु वर्गीकरण पद्धति में G:2, I:2, K:2, L:2 तथा V:2 इन सभी वर्ग संख्याओं में अंक 2 का स्मृति सहायक अंक के रूप में प्रयोग किया है तथा इन सभी विषयों में अंक 2 का 'संरचना, गठन, बनावट' अर्थ में प्रयोग किया गया है।

(viii) **पुस्तकों की निर्गम-आगम प्रक्रियाओं में सहायता देना**—पाठकों को पुस्तकें देते समय अंकन निर्गम-प्रतीक के रूप में कार्य करता है अर्थात् पुस्तकों की वर्ग-संख्या को निर्गम-प्रतीक के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह प्रतीक निर्गम व्यवस्था को सहायक अनुक्रम में व्यवस्थित रखता है तथा इसकी सहायता से निर्गम की गई पुस्तकों के विषयानुसार आँकड़े आसानी से तैयार किये जाते हैं।

अंकन के कार्यों के बारे में कुछ विद्वानों के विचार निम्नानुसार हैं—

जे० मिल्स के अनुसार, "अंकन का प्रधान कार्य विभिन्न विषयों के पदों (शब्दों) को कोई सर्व-सम्मत क्रमदर्शक मूल्य वाला चिह्न प्रदान करके उन विषयों के क्रम को यन्त्रवत बनाये रखना है।"

बी०सी० विकरी के मतानुसार, "अंकन, जिसके द्वारा वर्गांक का निर्माण होता है तथा जिस वर्गांक के प्रतीकों को क्रमसूचक मूल्य के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है, विभिन्न विषयों को एक अधिमान्य क्रम में रखने का कार्य करता है।" इसी के साथ उन्होंने यह भी कहा है कि "अंकन ही वर्गीकृत विषयों की संरचनात्मक विशेषताओं को आसानी से प्रदर्शित करता है अर्थात्, उसके द्वारा यह व्यक्त हो जाता है कि मिश्रित या संयुक्त विषय शीर्षकों की वर्ग संख्या की संरचना किस प्रकार से हुई है तथा विभिन्न पदों के प्रतीकों को किस-किस स्थान पर किस प्रकार से जोड़ा गया है।"

नोट-

अच्छे अंकन के गुण (Qualities of Good Notation)—उत्तम अंकन के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं—

(i) **संक्षिप्तता** (Brevity)—जहाँ तक संभव हो, अंकन अधिक-से-अधिक छोटा होना चाहिए। अंकन की संक्षिप्तता उसके आधार के विस्तार पर निर्भर होती है। अंकन का आधार जितना विस्तृत होगा, उस वर्गीकरण पद्धति की (वर्ग) संख्याएँ उतनी ही छोटी होंगी अर्थात्, यदि वर्गीकरण पद्धति के अंकन के आधार के लिए प्रयोग में लाये गये प्रारम्भिक प्रतीकों व चिह्नों की संख्या अधिक होगी तो उसका वर्गांक छोटा होगा। यदि विभिन्न जातियों के अंकों का प्रयोग किया जाये तो सभी प्रारंभिक मुख्य वर्गों को स्वतंत्र स्थान मिल जाएगा और अंकन स्वत: छोटा होगा। उदाहरणार्थ, यदि A से Z (26 अक्षरों), 1 से 9 व 0 (दस अक्षरों), a से z (23) (अक्षरों—i, o, e को छोड़कर) का अंकन के आधार के लिए प्रयोग किया जाये तो 59 प्रारम्भिक स्थान मिल जाते हैं। इस प्रकार वर्गांकों के निर्माण में कम अंकों का प्रयोग होता है।

जैसे—द्विबिन्दु वर्गीकरण के अनुसार – अर्थशास्त्र = *X*, राजनीति शास्त्र = *W*

दशमलव वर्गीकरण के अनुसार – अर्थशास्त्र = 330, राजनीति शास्त्र = 320

द्विबिन्दु वर्गीकरण के अंकन का आधार विस्तृत है, अर्थात् मिश्रित अंकन का प्रयोग किया गया है। इसलिए केवल एक ही अंग द्वारा वर्ग संख्याओं का निर्माण हुआ है। किन्तु दशमलव वर्गीकरण का आधार छोटा है—केवल 1 से 9 व 0 का ही प्रयोग किया गया। अत: इसकी वर्ग संख्याओं में तीन अंकों का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार विस्तृत आधार वाला मिश्रित अंकन छोटी वर्ग संख्याएँ प्रदान करता है तथा छोटे आधार वाला शुद्ध अंकन बड़ी वर्ग संख्या प्रदान करता है।

बड़ा अंकन आसानी से याद नहीं रखा जा सकता है तथा उसे लिखने व टाइप करने में गलती हो सकती है। किन्तु छोटा अंकन आसानी से समझा जा सकता है और इसे लिखने में गलती नहीं होती। इसके अन्तर्गत अंकन की संक्षिप्तता इस बात पर भी निर्भर करती है कि वर्गीकरण पद्धति में विभिन्न विषयों के लिए अंकों का बँटवारा किस प्रकार से किया गया है; अर्थात् विभाजन के प्रत्येक चरण पर कितने अंक उपलब्ध हैं तथा किस एकरूपता व समानता से अंकों का बँटवारा होना चाहिए तथा जिसके कम उपवर्ग हों, उसे कम प्रतीकों का बँटवारा किया गया है। जिस विषय के अन्तर्गत अधिक उपवर्ग हो, उसे अधिक प्रतीकों व अंकों का बँटवारा होना चाहिए। जैसे—इंजीनियरिंग में धर्म शास्त्र से अधिक उपवर्ग होते हैं, तो इंजीनियरिंग को धर्म शास्त्र से अधिक चिह्न मिलने चाहिए।

(ii) **सरलता** (Simplicity)—अंकन यथा सम्भव सरल होना चाहिए। सरलता दो निश्चित विशेषताओं की ओर संकेत करती है अर्थात् सरलता का पहला अर्थ तो यह है कि अंकन ऐसा होना चाहिए जिसके द्वारा अनुक्रम की स्पष्ट रूप से जानकारी मिल जाए। जैसे—हिन्द-अरबी अंक 1 से 9 व 0 तथा रोमन अक्षर A से Z स्वत: ही अपने अनुक्रम को व्यक्त कर देते हैं। इनके अनुक्रम को सभी जानते हैं। सरलता का दूसरा अर्थ यह है कि अंकन ऐसा होना चाहिए जिसका सरलता से उच्चारण किया जा सके, जिसे सरलता से याद रखा जा सके, जिसे सरलता से दूसरों को बताया जा सके, जिसे आसानी से लिखा या टाइप किया जा सके। जैसे—1 से 9 व 0 अंकों को और रोमन बड़े अक्षरों A से Z को आसानी से पहचाना जा सकता है। किन्तु छोटे रोमन अक्षर i, o, l अंक 1 तथा शून्य का भ्रम पैदा करते हैं। इसी प्रकार शून्य व वर्ण O भी भ्रांति पैदा करते हैं। इसलिए अंकन में इस प्रकार की भ्रांति का समावेश नहीं होना चाहिए।

नोट-

(iii) **वर्द्धनशीलता तथा अनुक्रमिकता** (Expansibility and Hierarchical)—वर्धनशीलता, विस्तारशीलता, ग्राह्यता एवं समायोजनशीलता शब्दों का प्रयोग एक ही अर्थ व उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है। इन सभी शब्दों का अर्थ यह है कि अंकन ऐसा होना चाहिए जो ज्ञान के क्षेत्र में निरन्तर उत्पन्न होने वाले विषयों, उपवर्गों व विचारों को वर्तमान अनुक्रम में समुचित स्थान प्रदान करने की क्षमता रखता हो। नए विषय या विचार किसी भी पंक्ति के पहले छोर पर पंक्ति के बीच में या पंक्ति के अंतिम छोर पर किसी भी जगह अपने स्थान की मांग कर सकते हैं। अत: अंकन में नए विषयों व विचारों को अनुसूचियों की वर्तमान व्यवस्था में, बिना किसी व्यवधान व अस्तव्यस्तता के, उचित स्थान प्रदान करने की क्षमता होनी चाहिए। अंकन की वर्धनशीलता के अभाव में, वर्गीकरण पद्धति ज्ञान जगत के विस्तार की गति के साथ नहीं चल सकती और वह शीघ्र ही समाप्त हो जाती है या अप्रचलित हो जाती है।

(iv) **स्मरणशीलता** (Mnemonic)—वर्गीकरण पद्धति में प्रतीकों या चिह्नों का इस भाँति प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि जहाँ कहीं भी उनका प्रयोग किया जाए, उनका अर्थ लगभग समान ही हो। उदाहरणार्थ—द्विबिन्दु वर्गीकरण में a अक्षर का जहाँ कहीं भी प्रयोग किया जाता है, ग्रन्थसूची के अर्थ में ही किया जाता है। इसी प्रकार 44 संख्या का प्रयोग भारत भौगोलिक क्षेत्र के लिए किया जाता है। इसी प्रकार दशमलव वर्गीकरण में भी 03 संख्या का प्रयोग सभी स्थानों पर विश्वकोश या शब्दकोश के लिए होता है। यह गुण आकस्मिक या आनुषंगिक होना चाहिए।

(v) **संश्लेषणात्मकता** (Synthesis)—अंकन इस प्रकार का होना चाहिए कि आवश्यकतानुसार उसका संश्लेषण किया जा सके। उदाहरणार्थ—सभी विषयों के विभिन्न पक्ष होते हैं। पहले किसी भी पुस्तक के विशिष्ट विषय की जानकारी प्राप्त की जाती है। इसके बाद इस विशिष्ट विषय का उसके विभिन्न पक्षों में विश्लेषण किया जाता है। वर्गीकरण की अनुसूचियों से इन पक्षों के वर्गों सम्बन्धी अंकन प्राप्त किए जाते हैं तथा इन प्रतीकों को नियमानुसार एक-दूसरे के साथ जोड़ दिया जाता है। अत: अंकन में ऐसी क्षमता होनी चाहिए कि विषय के विभिन्न पक्षों का आसानी से संश्लेषण किया जा सके और इस संश्लेषण में विभिन्न पक्षों की संरचना स्पष्ट रूप से दिखाई देती रहे। द्विबिन्दु वर्गीकरण जैसे वैश्लेषी संश्लेषणात्मक वर्गीकरण पद्धति का अंकन प्राय: संश्लेषणात्मक होता है।

(vi) **अभिव्यंजकता** (Expressiveness)—ऐसे अंकन का प्रयोग किया जाना चाहिए जो कि वर्गीकरण पद्धति के वर्ग-विभाजन के क्रम को आसानी से व्यक्त कर सके या प्रदर्शित कर सके। अंकन के द्वारा ही यह स्पष्ट रूप से पता लग जाना चाहिए कि किसी प्रधान वर्ग के अधीनस्थ उपवर्ग कौन-कौन से हैं तथा प्रधान वर्ग की विशेषता सूचित करने वाला प्रतीक उन सभी उपवर्गों में विद्यमान हैं अथवा नहीं, अर्थात् विभाजन के क्रम में विभाजन की प्रत्येक विशेषता को व्यक्त करने वाला प्रतीक उसके उपवर्गों में विद्यमान होना चाहिए। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि अधीनस्थ वर्ग नियंत्रक वर्ग के अधीन प्रतीत हो। उसके उप-भाग के रूप में दिखाई दे। अंकन द्वारा ही उपवर्गों की क्रम परम्परा (Hierarchy) की अभिव्यंजकता हो जानी चाहिए। उदाहरणार्थ, KX311 = गाय, KX312 = भैंस, KX313 = बकरी। ये सभी वर्ग अंकन स्तर पर प्रधान KX31 = दुधारू पशु के उपभाग के रूप में प्रतीत होते हैं क्योंकि KX31 द्वारा व्यक्त की गई विशेषता इन सभी में विद्यमान है।

(vii) **सापेक्षता** (Relativity)—वर्गांक की लम्बाई अर्थात् उसमें प्रयोग किए गए अंकों की संख्या उस वर्ग के क्रम या दरजे के अनुपात में होनी चाहिए जिसको उसके द्वारा व्यक्त

किया जाता है। जब किसी वर्ग का अर्थ सीमित हो व विस्तार कम हो तो उसका अंकन बड़ा होना चाहिए अर्थात् ज्ञान के क्षेत्र में प्रथम क्रम व दरजे के वर्गों को एक ही अंकों द्वारा व्यक्त किया जाना चाहिए, क्योंकि उनका विस्तार अधिक होता है। जैसे—द्विबिन्दु वर्गीकरण में प्रथम क्रम के वर्गों को एक ही अंक द्वारा व्यक्त किया गया है—राजनीति शास्त्र =W, अर्थशास्त्र =X, समाजशास्त्र =Y आदि।

इसके अतिरिक्त अच्छे अंकन के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों के विचार निम्नानुसार हैं—

बी०सी० विकरी के अनुसार, "अच्छा अंकन वही होता है जिसमें प्रयोग किए गए प्रतीकों व अंकों को व्यवस्थित करने के क्रम को पाठक आसानी से समझ सके अर्थात् उनको व्यवस्थित करने का क्रम स्वत: ही स्पष्ट होना चाहिए।"

"वह किसी भी विषय का सम्बन्ध उसके अधीनस्थ, उसके समकक्ष तथा उसकी ऊपरी-श्रेणी के पदों के साथ प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से प्रदर्शित कर सके।"

सी०जे० कोट्स के कथानुसार, "अंकन वही अच्छा होता है जिसमें बोधगम्यता हो, जो याद रखने में सुगम हो तथा जो ज्ञान जगत के परिवर्तनशील वातावरण में निरन्तर विकास पाता रहे एवं अपना अस्तित्व बनाए रखे।"

2.9 अंकन के उपसूत्र Canon of Notation

पुस्तकों में वर्णित विषयों को अंकन (Notation) द्वारा सहायक अनुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इसका मुख्य कारण विषयों को उनके नाम के आधार पर वर्णक्रम में व्यवस्थित करना उपयोगी सिद्ध नहीं हुआ है। अंकन की कृत्रिम भाषा है, इस कारण विषयों की विशेषताओं को अनुक्रम प्रदान किया जा सकता है। अंकन चयन में उपसूत्रों का ध्यान रखना आवश्यक है। डॉ० रंगनाथन ने वर्गीकरण पद्धति में निम्न उपसूत्रों को बताया है—

1. **समानार्थक का उपसूत्र** (Canon of Synonyms)—इस उपसूत्र के अनुसार, वर्गीकरण पद्धति में एक विषय का वर्ग अंक एवं एकल अंक पद्धति में एक एकल विचार का एकल अंक विशिष्ट होना चाहिए अर्थात् प्रत्येक विषय का वर्गांक एक और केवल एक ही होना चाहिए एवं इसी प्रकार प्रत्येक एकल विचार का प्रतिनिधि भी एक और केवल एक ही एकल संख्या होनी चाहिए। इस प्रकार किसी एक विषय के दो या दो-से-अधिक वर्गांक या प्रतीक चिह्न नहीं होने चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि वर्गीकरण की भाषा समानार्थक अंक से मुक्त होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो वर्गाकार व उपयोगकर्त्ता दोनों ही भ्रमित हो सकते हैं। यदि एक से अधिक वर्गांक होंगे तो एक ही विषय की पाठ्य सामग्री पुस्तकालय में बिखर जाएगी। इस प्रकार यह उपसूत्र आवश्यक उपसूत्र है।

   द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में विषय को एक ही वर्गांक प्रदान किया गया है। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में इस उपसूत्र की अवहेलना के कई उदाहरण मिलते हैं। लेकिन 17वें संस्करण के बाद के संस्करणों में इस उपसूत्र की पालना करने की कोशिश की U.D.C. में इस उपसूत्र की अनुपालना के लिए अन्तर्राष्ट्रीय प्रलेख संघ ने संस्तुति की है।

2. **भिन्नार्थक का उपसूत्र** (Canon of Homonyms)—इस उपसूत्र के अनुसार, एक वर्गांक केवल एक विषय का ही प्रतिनिधित्व करेगा एवं एक एकल संख्या भी केवल एक विचार का ही प्रतिनिधित्व करेगी अर्थात् प्रत्येक वर्गांक से दो या दो-से-अधिक विषयों की अभिव्यक्ति नहीं होनी

नोट-

चाहिए। इसी प्रकार प्रत्येक एकल संख्या का भी एक और केवल एक ही विचार अभिव्यक्त होना चाहिए।

प्राकृतिक भाषा में भिन्नार्थक शब्दों पर नियन्त्रण नहीं होता है लेकिन वर्गीकृत भाषा में भिन्नार्थक शब्दों को रोका जा सकता है। इसलिए विषयों की वर्णक्रम व्यवस्था को नकारा गया है। यदि प्राकृतिक भाषा का प्रयोग किया जाना है तो पुस्तकालय में अव्यवस्था की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। वर्गीकरण भाषा, प्राकृतिक भाषा के दोषों से मुक्त होती है।

इस उपसूत्र के अनुसार वर्गाचार्य को अपनी पद्धति का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वर्गीकरण पद्धति भिन्नार्थक शब्दों से मुक्त रहे।

द्विबिन्दु वर्गीकरण, यू०डी०सी० एवं बी०सी० 2 पक्षात्मक पद्धति होने के कारण प्रत्येक विषय को विशिष्ट वर्गांक प्रदान करने में सक्षम है। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में पूर्व के संस्करणों में दोष पाया गया है। लेकिन 18वें व 19वें संस्करण में भिन्नार्थक शब्दों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया गया है।

3. **सापेक्षिकता का उपसूत्र बनाम एकरूपता का उपसूत्र** (Canon of Relativity versus Canon of Uniformity)

(i) **सापेक्षिकता का उपसूत्र** (Canon of Relativity)—सापेक्षिकता के उपसूत्र के अनुसार, एक वर्गांक अथवा एकल संख्या के लिए प्रयुक्त अंकों की संख्या (Number of digits) का विस्तार विषय अथवा एकल विचार के क्रम के अनुपात में होना चाहिए, जिसका वह प्रतिनिधित्व करता है अर्थात् किसी वर्गांक या एकल संख्या में प्रयोग किए गए अंकों की संख्या उस विषय अथवा एकल विचार के क्रम के अनुरूप होना चाहिए, जिस विषय को व्यक्त करने के लिए उन अंकों का प्रयोग किया गया है।

इस प्रकार ज्ञान जगत के प्रथम क्रम में पंक्ति एकलों को एक अंक से, दूसरे क्रम के पंक्ति एकलों की दो अंकों से एवं जैसे-जैसे पंक्ति एकलों के क्रम में वृद्धि होती जाए, उसी अनुपात में अंकों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जानी चाहिए।

इस उपसूत्र का CC, DC व UDC पद्धति में पालन किया गया है।

उदाहरणार्थ—

विषय	द्विबिन्दु (वर्गांक)	दशमलव (वर्गांक)
भूगोल	U	551
प्राकृतिक भूगोल	U2	551.4
समुद्रीय विज्ञान	U25	551.46
धाराएँ	U2562	551.47

अत: स्पष्ट है कि इस उपसूत्र की पालना करने से वर्गांक में वृद्धि होती है। जैसे-जैसे विषय का विस्तार होता है, उसी अनुपात में वर्गांक संख्या में भी वृद्धि होती है। लम्बे वर्गांक विशिष्ट विषय से सम्बन्धित होते हैं जबकि छोटे वर्गांक स्थूल विषय से सम्बन्धित होते हैं।

(ii) **एकरूपता का उपसूत्र** (Canon of Uniformity)—इस उपसूत्र के अनुसार, एक विषय के लिए, जो ज्ञान जगत में किसी भी क्रम के पंक्ति के एकलों में अभिव्यक्त किया गया है, वर्गांक अथवा एकल संख्या में प्रयुक्त अंकों की संख्या एक-सी होनी चाहिए। यह उपसूत्र

सापेक्षिकता उपसूत्र के बिल्कुल विपरीत है। पुस्तकालय वर्गीकरण में एकरूपता उपसूत्र को अपेक्षा सापेक्षिकता उपसूत्र को अधिक उपयोगी माना गया है। इस उपसूत्र की मशीन द्वारा सूचना पुन: प्राप्ति के लिए अवश्य उपयोगी माना गया है। डॉ० रंगनाथन के अनुसार, मशीन सूचना पुनर्प्राप्ति में वर्गीकरण की भाषा के वर्गांक को, मशीनी भाषा के कोड नम्बर के रूप में अनुवाद किया जाता है। यह अनुवाद मशीन द्वारा स्वत: ही हो जाता है।

इस उपसूत्र की रायडर अन्तर्राष्ट्रीय वर्गीकरण पद्धति ही पूर्णरूप से पालन करती है। BC, LC व SC पद्धतियाँ आंशिक रूप से इस उपसूत्र का पालन करती हैं।

4. **पदानुक्रम का उपसूत्र बनाम अपदानुक्रम का उपसूत्र** (Canon of Hierarchy versus Canon of Non-Hierarchy)

(i) **पदानुक्रम का उपसूत्र** (Canon of Hierarchy)—इस उपसूत्र के अनुसार, वर्गांक या एकल संख्या में उपयोग किया गया प्रत्येक अंक, उन विशेषताओं को प्रदर्शित करने वाला होना चाहिए, जिसके आधार पर वह वर्गांक निर्मित हुआ है अर्थात् वर्गांक में प्रयुक्त प्रत्येक अंक की अपनी विशेषता होनी चाहिए और कोई भी अंक अर्थहीन नहीं होना चाहिए।

C.C. में इस उपसूत्र की पालना की गई है। कई स्थानों पर अन्तर्बिद्ध पंक्तियों (Telescoping arrays) के उपयोग से ऐसा लगता है कि इस उपसूत्र की अवहेलना हुई है, लेकिन ऐसा नहीं है। इसके उपयोग से मितव्ययिता नियम की सन्तुष्टि होती है। चूँकि इससे वर्गांक में एक अंक की बचत होती है।

उदाहरणार्थ—

(a) विश्व, (b) एशिया, (c) यूरोप, (d) अफ्रीका

उपर्युक्त विभाजनों को अंकन के धरातल पर देखने से ऐसा लगता है कि ये सभी प्रथम क्रम के वर्ग हैं, लेकिन वैचारिक धरातल देखें तो प्रतीत होता है कि ये सभी दूसरे क्रम के वर्ग हैं। उपर्युक्त वर्ग 'विश्व' के अधीनस्थ वर्ग नहीं हैं, बल्कि अन्तर्बिद्ध पंक्ति (Telescoped array) के द्वारा प्रत्येक को स्वतन्त्र दर्जा दिया गया है। इससे अंकों की बचत हुई है।

(ii) **अपदानुक्रम का उपसूत्र** (Canon of Non-Hierarchy)—यह उपसूत्र पदानुक्रम उपसूत्र के बिल्कुल विपरीत है। इसके अनुसार वर्गांक या एकल संख्या में उपयोग किया गया प्रत्येक अंक उन विशेषताओं का प्रतिनिधित्व होना आवश्यक नहीं है अर्थात् यह कोई जरूरी नहीं है कि वर्गांक का प्रत्येक अंक की अपनी विशेषता हो। ऐसा तभी किया जाता है, जब पंक्ति में स्थान दिए गए वर्ग क्रम और स्थान अपेक्षाकृत अधिक होते हैं।

5. **मिश्रित अंकन का उपसूत्र बनाम शुद्ध अंकन का उपसूत्र** (Canon of Mixed Notation versus Canon of Pure Notation)

मिश्रित अंकन का उपसूत्र (Canon of Mixed Notation)—इस उपसूत्र के अनुसार, वर्गीकरण पद्धति में अंकन का प्रयोग दो या दो-से-अधिक जातियों का किया जाना चाहिए अर्थात् वर्गीकरण पद्धति में वर्गांक निर्माण हेतु एक से अधिक प्रकार के अंकों व प्रतीकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

नोट-

शुद्ध अंकन का उपसूत्र (Canon of Pure Notation)—इस उपसूत्र के अनुसार, वर्गीकरण पद्धति में अंकन का प्रयोग एक ही जाति का किया जाना चाहिए अर्थात् वर्गांक निर्माण हेतु एक ही प्रकार के अंकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

ये दोनों ही उपसूत्र आपस में विरोधी हैं। वर्गीकरण पद्धति में कौन-से उपसूत्र को प्रयोग में लाना चाहिए, इसके निम्न बिन्दुओं पर विचार किया जाना चाहिए—

(i) वर्गीकरण पद्धति के अनुसार ज्ञान को कुल कितने वर्गों में विभाजित किया गया है।

(ii) विषयों को सूक्ष्म वर्गांक प्रदान करना है या स्थूल।

शुद्ध अंकन का आधार, मिश्रित अंकन की अपेक्षा काफी छोटा होता है। केवल हिन्दी-अरेबिक अंक या रोमन बड़े अक्षरों के आधार पर निर्मित अंक काफी सीमित होते हैं जबकि दोनों को सम्मिलित करते हुए यदि अंकों का निर्माण किया जाए तो काफी विस्तृत होगा। इसलिए मिश्रित अंकन का ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

EC, LC, SC, CC व BC मिश्रित अंक पर आधारित है। दशमलव वर्गीकरण पद्धति में 18वें व 19वें संस्करण में हिन्दी-अरेबिक अंकों के साथ-साथ रोमन शब्दों का प्रयोग भी किया है लेकिन इनका प्रयोग वर्गांक को छोटा बनाने के लिए किया गया है न कि विभाजन क्रम को प्रदर्शित करने के लिए।

6. **पक्षात्मक अंकन उपसूत्र बनाम अपक्षात्मक अंकन उपसूत्र** (Canon of Faceted Notation versus Canon of Non-faceted Notation)

पक्षात्मक अंकन उपसूत्र (Canon of Faceted Notation)—इस उपसूत्र के अनुसार एक पक्षात्मक अंकन पद्धति का उपयोग तब किया जाता है, जब

(i) अंकन के आधार की लम्बाई 10 हो और ज्ञान जगत के विषयों की संख्या एक मिलियन से अधिक हो।

(ii) अंकन के आधार की लम्बाई लगभग 56 हो और ज्ञान जगत के विषयों की संख्या एक हजार मिलियन या इससे अधिक हो।

अपक्षात्मक उपसूत्र (Canon of Non-faceted Notation)—इस उपसूत्र के अनुसार एक अपक्षात्मक अंकन पद्धति का उपयोग तब करना चाहिए, जब

(i) अंकन के आधार की लम्बाई 10 हो और ज्ञान जगत के विषयों की संख्या एक मिलियन से अधिक न हो।

(ii) अंकन की लम्बाई 56 हो और ज्ञान जगत के विषयों की संख्या एक हजार मिलियन से अधिक न हो।

इस प्रकार पक्षात्मक अंकन उपसूत्र और अपक्षात्मक अंकन उपसूत्र एक-दूसरे के विपरीत हैं। पक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति में अंकन विस्तार की क्षमता, अपक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति से अधिक होती है। अधिकांश यह देखा जाता है कि वर्गांकों की लम्बाई 10 अंकों से अधिक ही होती है। अधिक लम्बे वर्गांक आँखों के क्रिया विज्ञान व स्मरण शक्ति के मनोविज्ञान के विपरीत होते हैं। इसलिए लम्बे वर्गांक को छोटे-छोटे खण्डों में विभक्त करना उचित रहता है। ये खण्ड पूर्णतया स्पष्ट एवं अर्थपूर्ण होने चाहिए।

अत: वर्गीकरण पद्धतियों में पक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति अधिक उपयोगी होती है।

7. **सहविस्तृता का उपसूत्र बनाम अल्प विस्तृता का उपसूत्र** (Canon of Co-extensiveness versus Canon of Under-extensiveness)

सहविस्तृता का उपसूत्र (Canon of Co-extensiveness)—इस उपसूत्र के अनुसार, ज्ञान वर्गीकरण में विषय की अन्तिम विशेषता का अंक प्रदान कर वर्गांक निर्माण करने का प्रावधान होना चाहिए अर्थात् विषय में निहित उसकी प्रत्येक विशेषता को अभिव्यक्त करने के लिए अंक प्रदान करने का प्रावधान होना चाहिए। इस प्रकार इस उपसूत्र के निर्देशानुसार, ज्ञान जगत के वर्गीकरण के लिए, वर्गीकरण उद्देश्य के अनुरूप जिन विशेषताओं को उपयुक्त समझा गया है, उसके वर्गांक की अन्तिम विशेषता तक का प्रतिनिधित्व करने वाला अंक जोड़ने का प्रावधान होना चाहिए।

अल्प विस्तृता का उपसूत्र (Canon of Under-extensiveness)—यह उपसूत्र विस्तृता उपसूत्र के विपरीत है। इस उपसूत्र के आधार पर विषयों का स्थूल वर्गीकरण किया जाता है। अल्प विस्तृता होने के कारण विषयों के वर्गांक सूक्ष्म स्तर तक प्रदान नहीं किए जा सकते हैं अर्थात् इस उपसूत्र के कारण विषय में निहित अन्तिम विशेषता या प्रत्येक विशेषता को अभिव्यक्त करने के लिए अंक प्रदान नहीं किए जा सकते।

द्वि-बिन्दु वर्गीकरण पद्धति में सह-विस्तृता उपसूत्र का पूर्णतः पालन हुआ है जबकि दशमलव वर्गीकरण में इसका आंशिक रूप से ही पालन हुआ है फिर भी 19वें संस्करण में सह-विस्तृता के महत्त्व को ध्यान में रखा गया है।

2.10 क्रामक संख्या Call Number

परिभाषा एवं अर्थ (Definition and Meaning)—**डॉ० रंगनाथन** के अनुसार, "पुस्तकालय में एक प्रलेख की अन्य प्रलेखों के मध्य तथा सूची में किसी प्रविष्टि की अन्य प्रविष्टियों के मध्य, सुनिश्चित सापेक्षिक स्थिति को दर्शाने वाली संख्या को क्रामक संख्या (Call Number) कहते हैं।"

मेलविल ड्यूई के मतानुसार, "ग्रंथ की क्रामक संख्या सामान्यतः वर्ग संख्या तथा ग्रंथ संख्या दोनों से मिलकर बनती है। एक ही विषय से सम्बन्धित समस्त ग्रंथों को एक ही वर्ग संख्या दी जाती है। एक वर्ग की समस्त रचनाओं में से प्रत्येक रचना को ग्रंथ संख्या द्वारा पृथक् किया जाता है एवं एक ही रचना के समस्त अंकों एवं प्रतियों पर ही क्रामक संख्या दी जाती है।"

इस प्रकार क्रामक संख्या पुस्तकालय में प्रत्येक पुस्तक का अन्य पुस्तकों के मध्य निश्चित स्थान निर्धारित करता है। पुस्तकालय में वर्गीकरण द्वारा प्रत्येक पुस्तक की पृथक् क्रामक संख्या होना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, किन्हीं भी दो पुस्तकों की एक जैसी क्रामक संख्या नहीं होनी चाहिए अन्यथा उनका क्रम निर्धारण सम्भव नहीं होगा।

क्रामक संख्या के भाग (Parts of Call Number)—डॉ० रंगनाथन के अनुसार क्रामक संख्या का निर्माण निम्न तीन भागों से मिलकर होता है—

1. वर्गांक (Class Number)
2. ग्रंथांक (Book Number)
3. संग्रहांक (Collection Number)

1. **वर्गांक** (Class Number)

अर्थ (Meaning)—एक वर्गीकरण पद्धति में किसी विशिष्ट विषय के लिए प्रयुक्त द्योतक सांकेतिक को वर्गांक कहते हैं। डॉ० रंगनाथन के अनुसार, किसी पुस्तक का वर्गांक उसके विशिष्ट

नोट-

विषय के नाम का क्रमदर्शक अंकों की कृत्रिम भाषा में अनुवाद है।

इस प्रकार प्रत्येक पुस्तकालय में एक स्वीकृत वर्गीकरण पद्धति के अनुसार प्रत्येक पुस्तक में वर्णित विशिष्ट विषय के लिए प्रयुक्त बोधांक को वर्गांक कहते हैं। अत: किसी पुस्तक का वर्गीकरण करने के लिए एक निश्चित पद्धति के अनुसार उस पुस्तक के विशिष्ट विषय की वर्ग संख्या निश्चित की जाती है।

वर्गांक की सुस्पष्टता का उपसूत्र (Canon of Distinctiveness of Class Number)—डॉ० रंगनाथन के अनुसार, क्रामक संख्या को सुस्पष्ट लिखा जाना चाहिए। क्रामक संख्या को कई स्थानों पर लिखा जाता है, जहां उन्हें स्पष्ट रूप से लिखा जाना चाहिए।

इस हेतु डॉ० रंगनाथन ने विभेद का उपसूत्र का प्रतिपादन किया। इस उपसूत्र के अनुसार, एक वर्गीकरण पद्धति में वर्ग संख्या, ग्रंथांक और संग्रहांक को एक-दूसरे से सर्वथा पृथक्-पृथक् एवं सुस्पष्ट लिखा जाना चाहिए।

क्रामक संख्या को निम्न विधियों द्वारा सुस्पष्ट लिखा जा सकता है—

(i) सम रेखा पर (On horizontal line)

(ii) ऊर्ध्व रेखा पर (On vertical line)

(i) **सम रेखा पर** (On Horizontal Line)—क्रामक संख्या को एक सीधी सम रेखा पर लिखते समय वर्ग संख्या (वर्गांक), ग्रंथांक एवं संग्रहांक के बीच उपयुक्त एवं बराबर स्थान छोड़ना चाहिए ताकि तीनों भागों को पृथक्-पृथक् पहचाना जा सके।

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति के नियमानुसार वर्गांक व ग्रंथांक में मध्य दो अक्षरों का स्थान छोड़ना चाहिए।

जैसे—

X K9

Q6 152 K1

(ii) **ऊर्ध्व रेखा पर** (On Vertical Line)—इस नियम के अनुसार, क्रामक संख्या के तीनों भागों को एक-दूसरे के नीचे लिखा जाना चाहिए। डॉ० रंगनाथन के अनुसार तीनों भागों का अनुक्रम निश्चित करने के लिए पाठक की सुविधा एवं मनोविज्ञान को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

उनके अनुसार पाठक का अभिगम विषयानुसार होता है, इस कारण वर्गांक को प्रथम स्थान पर, ग्रंथांक को दूसरे स्थान पर और संग्रहांक को तीसरे स्थान पर रखा जाना चाहिए।

लेकिन इस क्रामक संख्या को पुस्तक की पीठिका तथा आख्या पृष्ठ के पीछे के भाग पर लिखते समय संग्रहांक को सबसे ऊपर, उसके नीचे वर्गांक तथा सबसे अन्त में ग्रंथांक लिखा जाता है। जैसे—

RR—संग्रहांक

V44—वर्गांक

K9—ग्रंथांक

नोट-

इस प्रकार इस उपसूत्र के अनुसार क्रामक संख्या को जहाँ भी लिखा जाए, सुस्पष्ट लिखा जाना चाहिए, जिससे पाठकों के अभिगम की पूर्ति हो सके।

2. **ग्रंथांक** (Book Number)

अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition)—पुस्तकालय में एक ही विषय से सम्बन्धित कई पुस्तकें एकत्रित हो जाती हैं, जिनकी वर्ग संख्या समान होती है। इस कारण इन पुस्तकों को फलकों पर सहायक क्रम में व्यवस्थित करना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए ग्रंथांक (Book Number) की व्यवस्था की गई है। ग्रंथांक प्रदान करने के लिए पुस्तक की विशेषताओं को आधार बनाया जाता है। पुस्तक की विशेषताओं में लेखक, उसका रूप, भाषा, प्रकाशन वर्ष खण्ड आदि को सम्मिलित किया जाता है।

डॉ० रंगनाथन ने ग्रंथांक की व्याख्या करते हुए लिखा "किसी पुस्तक का ग्रंथांक, एक ऐसा प्रतीक चिह्न है जिसका प्रयोग उस विषय से सम्बन्धित तथा समान वर्गांक वाली पुस्तकों का अन्य पुस्तकों के मध्य सापेक्ष स्थान निर्धारित करने के लिए किया जाता है।"

इस प्रकार ग्रंथांक उस स्थान पर व्यक्तित्व प्रदान करता है, जहाँ वर्ग संख्या व्यक्तित्व प्रदान करने में असमर्थ है। अत: किसी पुस्तक का ग्रंथांक, उसके विशिष्ट विषय के अलावा, उसकी अन्य विशेषताओं को व्यक्त करने वाले प्रतीक होते हैं।

ग्रंथांक का उपसूत्र
(Canon of Book Number)

डॉ० रंगनाथन ने ग्रंथांक निर्मित करने के लिए एक परिसूत्र दिया और उसकी अनुपालना के लिए ग्रंथांक का उपसूत्र प्रदान किया है।

इस उपसूत्र के अनुसार, "पुस्तक वर्गीकरण पद्धति में ग्रंथांक की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि एक विषय से सम्बन्धित कई पुस्तकों को व्यक्तित्व प्रदान किया जा सके एवं उन्हें अपने ही समान वर्गों में यंत्रवत् व्यवस्थित किया जा सके।"

ग्रंथांक निर्मित करने के लिए प्रयुक्त विधियाँ
(Methods for Constructing Book Number)

ग्रंथांक निर्मित करने के लिए अनेक प्रणालियाँ प्रचलित हैं। प्रत्येक प्रणाली में पुस्तक के विभिन्न गुणों का उपयोग किया जाता है। ये विधियाँ निम्न हैं—

1. लेखक के कुल नाम के आधार पर
2. लेखक के नाम का क्रमिक संख्या के आधार पर
3. पुस्तक के प्रकाशन वर्ष के आधार पर
4. द्विबिन्दु ग्रंथांक पद्धति।

1. **लेखक के कुलनाम के आधार पर**—इस विधि को सेयर्स ने प्रतिपादित किया। इस विधि के अनुसार लेखक के कुलनाम (Surname) के प्रथम तीन अक्षरों का प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरणार्थ—अर्थशास्त्र की विभिन्न लेखकों की पुस्तकों को अग्रानुसार ग्रंथांक दिया जा सकता है—

लेखक का नाम	द्विबिन्दु	दशमलव
Seth, M.L.	X	330
	Set	Set
Jain, K.P.	X	330
	Jai	Jai
Agarwal, P.C.	X	330
	Aga	Aga

लेकिन इस विधि का दोष यह है कि समान कुलनाम के दो या अधिक लेखकों की पुस्तकों को, व्यक्तित्व प्रदान करना सम्भव नहीं है। इस विधि द्वारा एक पुस्तक के विभिन्न संस्करणों, खण्डों में प्रकाशित पुस्तकों को भी भिन्नता प्रदान नहीं की जा सकती।

2. **लेखक के नाम का क्रमिक संख्या के आधार पर**—इस विधि के अनुसार लेखक के नाम को अंकों की भाषा में अनुवाद किया जाता है। ये अंक मिश्रित अथवा शुद्ध अंक होते हैं। इस पद्धति का निर्माण कटर, मेरिल, ब्राउन व जास्ट ने किया।

(i) **कटर का लेखक चिह्न** (Cutter's Author Mark)—कटर ने अपनी विस्तारशील वर्गीकरण पद्धति में ग्रंथांक के लिए एक लेखक सारणी का निर्माण किया है। इन सारणियों में कुलनाम के प्रथम अक्षर के साथ दो अंक, कुलनाम के दो अक्षरों के साथ एक अंक एवं S से प्रारम्भ होने वाले कुलनाम के प्रथम अंक प्रथम तीन अक्षरों के साथ एक या दो अंकों का प्रयोग किया गया है।

उदाहरणार्थ—(i) Huxley H98
(ii) Semmes SE5
(iii) Swain Swl
(iv) Scammon Sca5

(ii) **मेरिल की लेखक संख्या** (Merril's Author Number)—इस विधि में मेरिल ने A-Z वर्णमाला को 100 संख्याओं में विभक्त किया है, जिससे लेखकों के नाम प्रारम्भ होते हैं। लेखक का नाम जिस अक्षर से प्रारम्भ होता है, उसी के अनुसार संख्याओं का प्रयोग किया गया है।

उदाहरणार्थ—01 A
0.7 Bax
98 Wit
99 X-Z आदि

(iii) **ब्राउन का लेखक अंक** (Brown's Author Mark)—ब्राउन ने अपनी विषय वर्गीकरण पद्धति के अन्त में एक व्यक्तिगत लेखक चिह्नों की सारणी दी है। इसी के आधार पर ग्रंथांक दिया जाता है।

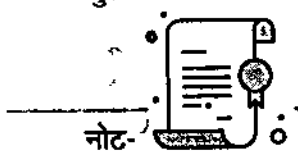

(iv) **जास्ट की लेखक संख्या** (Jast's Author Number)—इस विधि के अनुसार लेखक के नाम के प्रथम तीन अक्षरों का प्रयोग किया जाता है। इसके साथ रचनाओं को पृथक् दर्शाने के लिए रचना के नाम के प्रथम अक्षर को लेखक अंक के साथ जोड़ा जाता है। इसके बीच दशमलव चिह्न लगाया जाता है।

उदाहरणार्थ—

Shakespeare's King lear SHA.K

Shakespeare's Othello SHA.O

3. **पुस्तक के प्रकाशन वर्ष के आधार पर**—इस विधि के अनुसार, ग्रंथांक निर्मित करने में प्रलेख के प्रकाशन वर्ष को आधार बनाया जाता है। इस विधि को निर्मित करने का श्रेय बिस्को (Biscoe) को है।

ग्रंथांक निर्मित करने के लिए एक कालक्रमिक सारणी का प्रावधान किया गया। इस विधि द्वारा जो प्रलेख पहले प्रकाशित हुआ, वह पहले एवं जो बाद में प्रकाशित हुआ वह बाद में रखा जाता है। बिस्को की सारणी निम्न है—

A ईसा पूर्व (BC)	Q 1900-1909
B0-999	R 1910-1919
C 1000-1499	S 1920-1929
D 1500-1599	T 1930-1939
E 1600-1699	.....
.....	.....

उदाहरणार्थ—

अर्थशास्त्र की पुस्तकों के ग्रंथांक को निम्नानुसार प्रदान किया जाएगा—

		वर्ग संख्या	ग्रंथांक
प्रथम	1909	330	Q9
द्वितीय	1966	330	W6
तृतीय	1976	330	X6

4. **द्विबिन्दु ग्रंथांक पद्धति**—डॉ० रंगनाथन ने द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में ग्रंथांक बनाने के लिए प्रलेख के विषय को छोड़कर उसकी अन्य विशेषताओं अथवा गुणों का प्रयोग किया है। ये गुण प्रलेख की भाषा, प्रलेख में दी गई सूचना का रूप, प्रकाशन वर्ष, परिग्रहण क्रम का अंक, खण्ड अंक, पूरक संख्या, प्रति संख्या, समीक्षा अंक आदि हैं।

इन गुणों के आधार पर ग्रंथांक बनाने के लिए निम्न सूत्र का निर्माण किया है—

(L) (F) (Y) (A). (V)- (S); (C) : (EVN)

(L) = भाषा अंक (Language number)

(F) = रूप अंक (Form number)

(Y) = प्रकाशन वर्ष (Year of publication)

(A) = परिग्रहण क्रम का अंक (Accession part of the book number)

नोट-

(V) = खण्ड अंक (Volume number)

(S) = पूरक संख्या (Supplement number)

(C) = प्रति संख्या (Copy number)

(EVN) = समीक्षा अंक (Evaluation number)

भाषा अंक (Language Number)—पुस्तकालयों में प्रचलित भाषा (लोकप्रिय भाषा) के अतिरिक्त अन्य भाषाओं में लिखे प्रलेख के लिए भाषा अंक का प्रयोग किया जाता है। भाषा अंक भाषा सारणी से प्राप्त किया जाता है, अर्थात् जब किसी प्रलेख की विषय वस्तु एक से अधिक भाषाओं में लिखी गई हो, तो सबसे अधिक लोकप्रिय भाषा को भाषा अंक के रूप में ग्रंथांक में दिया जाता है।

उदाहरणार्थ—

भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा	T4.44
(अंग्रेजी भाषा में) 1991 में प्रकाशित	111N1
भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा	T4.44
(हिन्दी भाषा में) 1992 में प्रकाशित	152N2
भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा	T4.44
(मराठी भाषा में) 1994 में प्रकाशित	155N4

यदि कोई श्रेण्य पुस्तक (Classic), जिसकी समीक्षाएँ एक से अधिक भाषाओं में उसके साथ दी गई हैं, किन्तु श्रेण्य पुस्तक उस पर लिखी गई समीक्षाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं तो श्रेण्य पुस्तक की भाषा को, भाषा अंक के रूप में दिया जाना चाहिए।

भिन्न-भिन्न भाषाओं में दी गई हैं, किन्तु श्रेण्य पुस्तक का मूल पाठ नहीं दिया गया हो तो समीक्षाओं की भाषाओं में से लोकप्रिय भाषा को भाषा अंक रूप दिया जाना चाहिए।

रूप अंक (Form Number)—प्रलेख में विषय वस्तु का वर्णन; कई रूपों में होता है; जैसे कविता, नाटक, नियमावली, अनुक्रमणी आदि। मुख्य वर्ग साहित्य में (P2) पक्ष में 'रूप पक्ष' दिया जाता है। इस कारण साहित्य विषय के प्रलेख में ग्रंथांक के साथ रूप सम्बन्धित अंक नहीं दिया जाता है। लेकिन साहित्य के अतिरिक्त अन्य विषयों के प्रलेखों में रूप अंक प्रदान किया जाता है।

उदाहरणार्थ—

Classified Catalogue Code, 1984	2:55 N3
	9G4
Lecturers on Library Classification 1992	2 : 51
	P1 N2

वर्ष अंक (Year Number)—ग्रंथांक में वर्ष अंक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अधिकांश पुस्तकों को व्यक्तित्व प्रदान करने में वर्ष अंक सक्षम होता है। वर्ष अंक को सभी पुस्तकों में दिया जाता है।

वर्ष अंक का निर्माण पुस्तक के प्रकाशन वर्ष से तैयार किया जाता है। इस हेतु कालक्रम सारणी का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरणार्थ—

अर्थशास्त्र के सिद्धान्त पुस्तकों के निम्न वर्गांक व ग्रंथांक होंगे—

X	K1	1961 में प्रकाशित
X	L4	1974 में प्रकाशित
X	M8	1988 में प्रकाशित
X	N1	1991 में प्रकाशित

ग्रंथांक का परिग्रहण भाग (Accession Part of the Book Number)—कभी-कभी एक विषय पर एक ही वर्ष में प्रकाशित तथा एक ही भाषा में कई पुस्तकें पुस्तकालय में खरीदी जाती हैं। इस स्थिति में यह भिन्नता प्रकट करने के लिए पुस्तक समावेश अंक का प्रयोग किया जाता है। यह अंक प्रथम समाविष्ट पुस्तक को नहीं दिया जाता है। जब उसी प्रकार की दूसरी पुस्तक आती है, तब वर्ष अंक के साथ बिना किसी योजक चिह्न के ग्रंथ समावेश अंक 1,2,3,.....,9 का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरणार्थ—

भारतीय इतिहास पर 1993 में प्रकाशित पुस्तकों के ग्रंथांक निम्न होंगे—

पहली पुस्तक	V44	N3
दूसरी पुस्तक	V44	N31
तीसरी पुस्तक	V44	N32

खण्ड अंक (Volume Number)—कुछ पुस्तकें विभिन्न खण्डों में प्रकाशित होती हैं। इन पुस्तकों को खण्डों के क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इस हेतु ग्रंथांक में खण्ड अंक भी प्रदान किया जाता है। यह अंक दशमलव संयोजक चिह्न से जोड़ा जाता है। इन खण्डों का प्रकाशन वर्ष एक भी हो सकता है और भिन्न-भिन्न भी हो सकता है। जब खण्डों का प्रकाशन वर्ष भिन्न-भिन्न होता है, तब खण्ड अंक निर्मित करते समय प्रथम खण्ड प्रकाशन वर्ष का ही प्रयोग किया जाता है।

उदाहरणार्थ—भारत का इतिहास-V44 पर चार खण्डों में प्रकाशित पुस्तक, जिसका प्रकाशन वर्ष 1979 हो, को निम्न प्रकार से ग्रंथांक के साथ खण्ड अंक प्रदान किया जाएगा—

प्रथम खण्ड	V44	L9.1
द्वितीय खण्ड	V44	L9.2
तृतीय खण्ड	V44	L9.3
चतुर्थ खण्ड	V44	L9.4

भिन्न प्रकाशन वर्ष होने पर निम्नानुसार ग्रंथांक प्रदान किया जाएगा—

खण्ड संख्या	प्रकाशन वर्ष	ग्रंथांक
प्रथम	1979	L9.1
द्वितीय	1988	L9.2
तृतीय	1990	L9.3
चतुर्थ	1991	L9.4

नोट-

उदाहरण से स्पष्ट है कि चारों खण्डों के पृथक्-पृथक् वर्ष होते हुए भी ग्रंथांक के लिए सभी खण्डों के लिए प्रथम खण्ड के प्रकाशन वर्ष को ही आधार माना है।

परिशिष्ट अंक (Supplement Number)—कई पुस्तकों के कभी-कभी परिशिष्ट भी प्रकाशित होते हैं। ऐसी स्थिति में इन परिशिष्टों को मुख्य पुस्तकों के साथ ही रखना उचित रहता है। अत: इन परिशिष्टों को परिशिष्ट अंक ग्रंथांक के साथ संयोजक चिह्न छोटी रेखा (-) के साथ जोड़ा जाता है। ये परिशिष्ट मुख्य पुस्तकों या खण्डों दोनों के हो सकते हैं। जब खण्डों के परिशिष्ट हों, तो खण्ड अंक प्रदान करने के बाद परिशिष्ट अंक प्रदान किया जाता है।

उदाहरणार्थ—

प्रकाशन वर्ष	खण्ड अंक	परिशिष्ट अंक	ग्रंथांक
1979		प्रथम	L9-1
1979	–	द्वितीय	L9-2
1979	प्रथम	प्रथम	L9.1-1
1979	प्रथम	द्वितीय	L9.1-2
1980	द्वितीय	प्रथम	L9.2-1
1980	द्वितीय	द्वितीय	L9.2-2

प्रति संख्या (Copy Number)—कभी-कभी पुस्तकालय में एक पुस्तक की कई प्रतियाँ क्रय की जाती हैं। इन प्रतियों को प्रति संख्या प्रदान की जाती है। इस प्रति संख्या को सेमीकोलन (;) संयोजक बिन्दु के साथ जोड़ा जाता है।

उदाहरणार्थ—

प्रकाशन वर्ष	प्रति संख्या	ग्रंथांक
1979	प्रथम	L9
1979	द्वितीय	L9;1
1979	तृतीय	L9;2
1979	चतुर्थ	L9;3
1979	पंचम	L9;4

समीक्षा अंक (Evaluation Number)—कुछ पुस्तकों की आलोचना, प्रत्यालोचना, समीक्षा आदि लिखी जाती है। इन्हें मूल पुस्तक के साथ ही रखना उचित रहता है। इस हेतु समीक्षा अंक प्रदान किया जाता है। मूल पुस्तक को आतिथेय (Host book) व आलोचना के रूप में लिखी पुस्तक सम्बद्ध पुस्तक (Associate book) कहलाती है। समीक्षा अंक को कोलन (:) योजक चिह्न के साथ 'g' का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरणार्थ—

भारत का इतिहास विषय पर मूल पुस्तक व समालोचना पुस्तक को अग्र प्रकार से ग्रंथांक प्रदान किया जाता है—

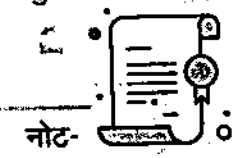

नोट-

	प्रकाशन वर्ष	ग्रंथांक
मूल पुस्तक	1978	L8
मूल पुस्तक की समीक्षा	1980	L8;g
मूल पुस्तक पर लिखा प्रत्युत्तर	1981	L8;g1

संग्रहांक
(Collection Number)

अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition)—यह आवश्यक नहीं है कि पुस्तकों को वर्गांक के अनुसार ही उसी क्रम में व्यवस्थित किया जाए। इसके मुख्य कारण हैं—कुछ पुस्तकों का सामान्य आकार से भिन्न होना, कुछ प्रलेखों का भौतिक स्वरूप माइक्रो फिल्म, ग्रामोफोन रिकार्ड्स, माइक्रो कार्ड के रूप में होना एवं कुछ पुस्तकों को पाठकों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए उनका स्थान निर्धारण करना आदि। अत: पुस्तकालय में इस प्रकार के संग्रह को संग्रह अंक प्रदान कर उनका स्थान निर्धारित किया जाता है। इसी संग्रह अंक को संग्रहांक कहते हैं।

डॉ० रंगनाथन के अनुसार, "संग्रहांक ऐसा प्रतीक है, जिनका प्रयोग, प्रलेख के ग्रंथांक के साथ, किसी विशिष्ट संग्रह को सूचित करने के लिए किया जाता है अर्थात् संग्रहांक द्वारा पुस्तक संग्रह की जानकारी प्राप्त होती है।

आवश्यकता (Need)

1. **प्रलेखों के भौतिक स्वरूप की भिन्नता के कारण** (Collection by Different Physical Forms of Documents)—पुस्तकों के विभिन्न रूप होते हैं; जैसे—फिल्म स्ट्रिप्स, माइक्रो फिल्म, माइक्रो कार्ड, सीडी रोम आदि। इन्हें पृथक् से संग्रहीत करना होता है।
2. **आकार के कारण** (Collection by Size)—कुछ पुस्तकें सामान्य आकार से भिन्न होती हैं अर्थात् अत्यधिक बड़ी या छोटी होती हैं। कुछ पेम्फलेट्स भी होती हैं; इन्हें सामान्य पुस्तकों के संग्रह के साथ नहीं रखा जा सकता है। इस प्रकार की पुस्तकों के लिए अलग संग्रह निर्मित कर रखना होता है।
3. **पुस्तकालय सेवा का आधार** (Collection by Service)—पुस्तकालय में पुस्तकों की सेवा के आधार पर पुस्तकों का संग्रह करना होता है, जिससे पाठकों को शीघ्र सेवा प्रदान की जा सके। ये संग्रह निम्न होते हैं—
   (i) अध्ययन कक्ष संग्रह (Reading Room Collection)
   (ii) विभागीय संग्रह (Departmental Collection)
   (iii) पाठ्यपुस्तक संग्रह (Textbook Collection)
   (iv) दुर्लभ पुस्तक संग्रह (Rare book Collection)

नोट-

संग्रहांक का उपसूत्र
(Canon of Collection Number)

द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति में डॉ० रंगनाथन ने संग्रहांक का उपसूत्र प्रतिपादित किया।

इस उपसूत्र के अनुसार, "एक पुस्तक वर्गीकरण पद्धति में विशिष्ट प्रकार के संग्रहों को व्यक्तित्व प्रदान करने के लिए संग्रहांकों की एक अनुसूची का प्रावधान किया जा सकता है। ऐसे संग्रहांकों का निर्माण पाठ्य सामग्री के भौतिक स्वरूप या दुर्लभ प्राप्यता का पाठक सेवाओं की आवश्यकतानुसार किया जाना चाहिए।

इस उपसूत्र की अनुपालना के लिए द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति ग्रंथांकों की एक लघु सारणी दी है, जो पुस्तकालय के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। इसके कुछ अंश निम्न हैं—

	संग्रह (Collection)	संग्रहांक (Collection Number)
1.	लघु आकार की पुस्तकें (Under sized books)	ग्रंथांक को नीचे से रेखांकित किया जाता है— V44 L8
2.	वृहद् आकार की पुस्तकें (Over sized books)	ग्रंथांक को ऊपर से रेखांकित किया जाता है— V44 K8
3.	असामान्य आकार की पुस्तकें (Abnormal sized books)	ग्रंथांक को ऊपर व नीचे से रेखांकित किया जाता है— Q3 M3
4.	जीर्णावस्था में पुस्तकें (Worn out books)	ग्रंथांक को वृत्त में रखा जाता है— X (J2)
5.	वाचनालय कक्ष की पुस्तकें (Books in Reading Room)	ग्रंथांक के ऊपर RR लिखा जाता है— Y RR N3
6.	पत्र-पत्रिका कक्ष की पुस्तकें (Books in Periodical section)	ग्रंथांक के ऊपर PC लिखा जाता है— Wn PC N4
7.	दुर्लभ प्राप्त पुस्तकें (Rare books)	ग्रंथांक के ऊपर RB लिखा जाता है— RB J8
8.	पाठ्य पुस्तकें (Text books)	ग्रंथांक के ऊपर TC लिखा जाता है— TC X5

इस प्रकार विभिन्न पुस्तकालयों में अपनी-अपनी आवश्यकतानुसार विशिष्ट प्रकार के संग्रह निर्मित कर, उनके लिए संग्रहांक निर्मित करते हैं। संग्रहांक को पुस्तक की टैग पर, क्रामक अंक, ऊर्ध्व रेखा पर लिखा जाता है। जैसे—

RR
X5
L8

नोट-

लेकिन सूची पत्रक पर क्रामक अंक सम स्तर रेखा पर लिखे जाने से, संग्रहांक को ग्रंथांक के ऊपर अंकित किया जाता है। जैसे—

X5 RR
L8

अभ्यास प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. वर्गीकरण का अर्थ लिखिए।
2. पुस्तकालय वर्गीकरण की परिभाषा दीजिए।
3. डॉ० रंगनाथन की उपसूत्रों पर लिखित पुस्तक का नाम बताइए।
4. अंकन का अर्थ समझाइए।
5. अंकन के प्रकार बताइए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. अच्छे अंकन के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
2. अंकन के कार्यों का वर्णन कीजिए।
3. अंकन के किन्हीं तीन उपसूत्रों का वर्णन कीजिए।
4. क्रामक संख्या का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
5. अभिधारणा अधिगम पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पुस्तकालय का अर्थ स्पष्ट कीजिए एवं उसकी आवश्यकता को बताइए।
2. पुस्तकालय के उद्देश्य एवं कार्यों का वर्णन कीजिए।
3. अंकन के उपसूत्रों का वर्णन कीजिए।
4. पुस्तक एवं ज्ञान वर्गीकरण को समझाते हुए इनमें अन्तर स्पष्ट कीजिए।
5. अंकन के गुणों का वर्णन कीजिए।

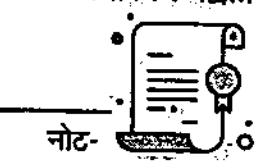

UNIT 3

वर्गीकरण पद्धति
Classification Schemes

3.1 प्रस्तावना Introduction

पुस्तकालय में पाठ्य सामग्री का संग्रह किया जाता है एवं इसके उपयोग की व्यवस्था की जाती है। इस व्यवस्था की पद्धति को वर्गीकरण पद्धति कहा जाता है।

वर्गीकरण का मुख्य उद्देश्य पाठ्य सामग्री को इस प्रकार व्यवस्थित करना है जिससे इसका उपयोग सुविधापूर्वक हो सके। इसके लिए आवश्यक है कि एक वैज्ञानिक वर्गीकरण पद्धति होनी चाहिए।

3.2 वर्गीकरण की विभिन्न पद्धतियाँ

Species of Library Classification Schemes

मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है तथा मनुष्य के इसी गुण के कारण प्राकृतिक वस्तुओं को रंग-रूप आकार के आधार पर अलग-अलग समूह में रखी वस्तुओं को मनुष्य द्वारा विभेदित करना अत्यधिक सरल होता है। इसी तरह वर्गीकरण पद्धति की शुरुआत हुई। पुस्तकालय विज्ञान में वर्गीकरण का अपना विशेष महत्त्व है क्योंकि बिना वर्गीकरण के पुस्तकों को ढूँढ़ निकालना या समूहों में रखना मुश्किल है। वर्तमान समय में पुस्तकालय वर्गीकरण हेतु कई पद्धतियाँ प्रचलित हैं।

पुस्तकालय विज्ञान के विद्वानों द्वारा पुस्तकों के वर्गीकरण पर ध्यान दिया गया। पुस्तकालयों विज्ञान के अन्तर्गत विषयों के वर्गीकरण की निम्नलिखित पद्धतियाँ डॉ० रंगनाथन द्वारा बताई गई—

1. परिगणनात्मक वर्गीकरण (Enumerative Classification)
2. लगभग परिगणनात्मक वर्गीकरण (Almost Enumerative Classification)
3. लगभग पक्षात्मक वर्गीकरण (Almost Faceted Classification)
4. अपरिवर्तनीय पक्षात्मक वर्गीकरण (Rigidly Faceted Classification)
5. लगभग मुक्त पक्षात्मक वर्गीकरण (Almost Freely Faceted Classification)
6. पूर्णतः मुक्त पक्षात्मक वर्गीकरण (Fully Freely Faceted classification)

1. **परिगणनात्मक वर्गीकरण** (Enumerative Classification)—इस पद्धति में "Ready made" नम्बर रहता है और इसमें किसी भी तरह के जोड़ घटाव की अनुमति नहीं रहती है। यानि कि बना-बनाया रेडिमेड नम्बर उपलब्ध होता है, इस प्रकार के वर्गीकरण पद्धति का उदाहरण Library of congress classification है।
2. **लगभग परिगणनात्मक वर्गीकरण** (Almost Enumerative Classification)—इस तरह के classification पद्धति में क्लास न० लगभग बना-बनाया होता है फिर भी इसमें थोड़ा बहुत जोड़-तोड़ कर नम्बर बनाया जाता है। इस पद्धति का उदाहरण D.D.C. है, जैसे कि D.D.C. में

History of Hindi Literature का नम्बर बनाना हो तो हिन्दी Literature बना-बनाया मिल जाएगा, परन्तु History के लिए Table-1 से 09 लाकर, जोड़कर नम्बर बनाना पड़ेगा।

3. **लगभग पक्षात्मक वर्गीकरण** (Almost Faceted Classification)—इस पद्धति में क्लास न० लगभग बना-बनाया होता है फिर भी इसमें पक्षात्मक वर्गीकरण का गुण भी पाया जाता है। इस पद्धति का उदाहरण U.D.C. है।

4. **अपरिवर्तनीय पक्षात्मक वर्गीकरण** (Rigidly Faceted Classification)—इस तरह के वर्गीकरण पद्धति निर्माता डॉ० रंगनाथन थे जिन्होंने अपनी पद्धति Colon Classification के प्रथम संस्करण में पक्षात्मक वर्गीकरण पद्धति को अपनाया तथा समस्त ज्ञान जगत को पक्षों (Facets) में विभाजित किया। इस तरह की वर्गीकरण पद्धति में विषयों को पूर्व निर्धारित फेसेट में बाँट लिया जाता है और Facet Sequence का निर्धारण पूर्व में ही कर लिया जाता है।

5. **लगभग मुक्त पक्षात्मक वर्गीकरण** (Almost Freely Faceted Classification)—इस तरह की वर्गीकरण पद्धति के अन्तर्गत Colon Classification के 4वें, 5वें, 6वें संस्करण को रखा जाता है। इस तरह की वर्गीकरण पद्धति में विषयों को पूर्व निर्धारित फेसेट में बाँट लिया जाता है परन्तु सभी facet के लिए अलग-अलग Indicator Digit (योजक चिह्न) का प्रयोग किया गया है।

6. **पूर्णतः मुक्त पक्षात्मक वर्गीकरण** (Fully Freely Faceted classification)—इस तरह की वर्गीकरण पद्धति के अन्तर्गत Colon Classification के 7वें संस्करण को रखा जाता है। इस तरह के वर्गीकरण पद्धति में विषयों को फेसेट में बाँट लिया जाता है और Facet Sequence का निर्धारण बाद में किया जाता है।

पुस्तकालय विज्ञान में वर्गीकरण का अपना विशेष महत्त्व है, क्योंकि बिना वर्गीकरण के पुस्तकों को ढूँढ़ निकालना या समूहों में रखना अत्यन्त कठिन कार्य है। वर्तमान समय में पुस्तकालय वर्गीकरण हेतु अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं और खोजकर्त्ता को वर्गीकरण कार्यों हेतु इसकी विभिन्न पद्धतियों की जानकारी आवश्यक हो जाती है।

3.2.1 प्रमुख वर्गीकरण पद्धतियाँ (Major Schemes of Classification)

पुस्तकों एवं अन्य पाठ्य-सामग्री को सहायक क्रम में व्यवस्थित करने के लिए अनेक वर्गीकरण पद्धतियों की समय-समय पर रचना की गई। इनमें प्रमुख पद्धतियाँ निम्नलिखित हैं—

1. ड्यूई दशमलव वर्गीकरण (Dewey Decimal Classification)—मेलविल ड्यूई (1876)
2. विस्तारशील वर्गीकरण (Expensive Classification)—चार्ल्स एमीकटर (1891)
3. लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस वर्गीकरण (Library of Congress Classification)—लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस (1904)
4. सार्वभौम दशमलव वर्गीकरण (Universal Decimal Classification)—इंस्टीट्यूट इन्टरनेशनल डी बिब्लियोग्राफी (1905).
5. विषय वर्गीकरण (Subject Classification SC)—जेम्स डी० ब्राउन (1906)
6. द्विबिन्दु वर्गीकरण (Colon Classification)—एस०आर० रंगनाथन (1933)
7. वाङ्मयात्मक वर्गीकरण (Bibliographic Classification)—एच०ई० ब्लिस (1935)

नोट--

3.3 ड्यूई दशमलव वर्गीकरण Dewey Decimal Classification

इस पद्धति का आविष्कार मेलविल ड्यूई ने सन् 1876 ई० में किया। जब विश्व में ज्ञान जगत को वर्गीकृत (classify) करने के लिए किसी भी तरह की मानक वर्गीकरण (Classification) पद्धति नहीं थी, उस समय मेलविल ड्यूई द्वारा DDC (Dewey Decimal Classification) का निर्माण किया गया जो सम्पूर्ण ज्ञान जगत को वर्गीकृत करने का काम करती थी। इन्होंने अपनी वर्गीकरण पद्धति को मुख्य रूप से 10 वर्गों में विभाजित किया। इसके लिए उन्होंने हिन्दी अरेबिक अंकों (Indo-Arabic Numerals) को प्रतीकों के रूप में उपयोग करने पर विचार किया। इसका प्रथम संस्करण सन् 1876 में 'A Classification and Subject Index for Cataloguing and Pamphlets of a Library' नाम से प्रकाशित हुआ। अभी तक इसका 23वाँ संस्करण प्रकाशित हो चुका है।

दशमलव पद्धति (19वें संस्करण) की संरचना (Structure of Decimal Classification)—इस पद्धति को निम्न तीन खण्डों में विभाजित किया है—

1. भूमिका, सारणियाँ (Introduction, Tables)
2. अनुसूचियाँ (Schedules)
3. सापेक्षिक अनुक्रमणिका (Relative Index)

खण्ड-1 भूमिका, सारणियाँ (Introduction, Tables)—इस खण्ड के प्रारम्भ में इस पद्धति की विशेषताएँ, मूल योजना के प्रारूप तथा इसके उपयोग करने की विधि समझाई गई है। इसके साथ ही निम्न सात सारणियाँ दी गई हैं—

सारणी-1 मानक उपविभाजन (Standard Subdivisions)
सारणी-2 भौगोलिक उपविभाजन (Area Subdivisions)
सारणी-3 साहित्यिक उपविभाजन (Subdivisions of Individual Literature)
सारणी-4 भाषा उपविभाजन (Subdivisions of Individual Language)
सारणी-5 प्रजातीय, भाषायी, राष्ट्र समूह (Racial, Ehnic, National Groups)
सारणी-6 भाषाएँ (Languages)
सारणी-7 व्यक्ति (Persons)

ये सभी सारणियाँ सहायक सारणियाँ (Auxilliary Tables) कहलाती हैं। इनका उपयोग आवश्यकतानुसार अनुसूची (खण्ड 2) की वर्ग संख्या के साथ जोड़कर किया जाता है।

खण्ड-2 अनुसूचियाँ (Schedules)—इस खण्ड में मुख्य वर्गों की अनुसूचियाँ दी गई हैं—

उदाहरणार्थ—

301-307	Sociology
301	Sociology
302	Social Interaction
303	Social Process

सभी वर्गांकों को श्रेणीबद्ध क्रम में व्यवस्थित किया गया है अर्थात् एक मुख्य वर्ग के अन्तर्गत आने वाले विषयों को व्यवस्थित किया गया है। उदाहरणार्थ—

खण्ड-3
वर्गीकरण पद्धति

नोट-

साहित्य

भारतीय साहित्य

हिन्दी साहित्य

—उपन्यास

—प्रेमचन्द

—गोदान

खण्ड-3 सापेक्षिक अनुक्रमणिका (Relative Index)—इस खण्ड में वर्णानुक्रम (Alphabetically) में व्यवस्थित एक विस्तृत एवं सापेक्ष अनुक्रमणिका दी गई है। शब्दकोश के उपयोग की तरह इसका उपयोग है। इसके माध्यम से एक ही विषय व प्रकरण से सम्बद्ध विषयों को, जो अनुसूची में अलग-अलग विषयों के अन्तर्गत बिखरे होते हैं, एकत्रित कर वर्णानुक्रम में व्यवस्थित कर दिया गया है। इस तरह किसी पुस्तक का वर्गांक देने के लिए सर्वप्रथम पुस्तक का विषय निश्चित कर अनुक्रमणिका में ढूँढ़ना चाहिए। इसकी सहायता से वर्गांक को खोजने में सहायता मिलती है।

विशेषताएँ (Main Features)—DDC की अपनी कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। ये विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. **दशमलव वर्गीकरण** (Decimal Classification)—डॉ० मेलविल ड्यूई ने अपनी वर्गीकरण पद्धति में तीन अंकों के बाद दशमलव का प्रयोग किया जिसके कारण इसे दशमलव वर्गीकरण के नाम से जाना जाता है।
2. **परिगणनात्मक वर्गीकरण पद्धति** (Enumerative Scheme)—इस पद्धति में वर्गांक के निर्माण की आवश्यकता नहीं होती अपितु बने-बनाए वर्गांक प्रदान किए गए हैं। अनुसूची वाले खण्ड में सभी सम्भावित विषयों को वरीयतापूर्वक सहायक अनुक्रम में रखकर उन्हें सामान्य से विशिष्ट की ओर व्यवस्थित किया गया है। सापेक्षिक अनुक्रमणिका खण्ड भी अत्यधिक उपयोगी है। यह अनुक्रमणिका वर्णक्रम से व्यवस्थित है जिसकी सहायता से विषय के किसी भी पहलू को खोजा जा सकता है, जहाँ उसका बना-बनाया वर्गांक अंकित होता है।
3. **शुद्ध अंकन** (Pure Notation)—इस पद्धति में इन्डो अरेबिक अंकों (Indo-Arabic Numerals) को प्रयुक्त किया गया है अर्थात् इसमें शुद्ध अंकन का उपयोग किया गया है, जिसे सरलता से लिखा, पढ़ा व उच्चारित किया जा सकता है। तीन अंक के बाद दशमलव का प्रयोग किया गया है, इससे स्मरणशीलता में वृद्धि होती है।
4. **मुख्य वर्गों की रूप-रेखा** (Outlines of Main Classes)—DDC में सम्पूर्ण ज्ञान जगत को विभाजित करने के लिए द्विधाकरण (Decachotony) (दस वर्गों में विभाजन) विधि का प्रयोग किया है जो निम्न है—

000 – GENERALITIES & COMPUTER SCIENCE

100 – PHILOSOPHY AND PSYCHOLOGY

200 – RELIGIONS

300 – SOCIAL SCIENCES

400 – LANGUAGES

500 – NATURAL SCIENCES & MATHEMATICS

600 – TECHNOLOGY (APPLIED SCIENCES)

700 – THE ARTS

800 – LITERATURE & RHETORIC

900 – GEOGRAPHY, BIOGRAPHY & HISTORY

5. **मुख्य वर्गों के विभाजन** (Division of M.C.)—DDC में प्रत्येक मुख्य वर्ग को पुन: 10 विभागों में विभक्त किया गया है। जैसे—

310 – Statistics

320 – Political Science

330 – Economics

340 – Law

350 – Public Administration

360 – Social Problems and Service

370 – Education

380 – Commerce

390 – Customs, Etiquatte, Folklore

6. **सहायक सारणियाँ** (Helping Tables)—DDC के Class No. को अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए 16वें संस्करण ने कुल 7 प्रकार के Table का भी प्रावधान किया है। हालाँकि 22वें संस्करण से टेबल 7 को हटा दिया गया है।

Table. 1 – Standard Sub-divisions

Table. 2 – Areas

Table. 3 – Sub-divisions of Individual Literature

Table. 4 – Sub-divisions of Individual Languages

Table. 5 – Racial, Ethnic, National Groups

Table. 6 – Languages

Table. 7 – Persons

7. **स्मृति सहायक अंकन** (Mnemonics)—इस पद्धति में स्मृति सहायक अंकनों का प्रयोग किया गया है। मानक उपविभाजन तथा भौगोलिक उपविभाजन का स्मृति सहायक अंकन के रूप में प्रयोग हुआ है।

उदाहरणार्थ—

(i) Dictionary of Law 340.03

Dictionary of Library Science 020.3

यहाँ 03 अंक का मानक उपविभाजन में स्मृति सहायक के रूप में Dictionary के लिए प्रयुक्त हुआ है।

(ii) History of France 944

Geography of France 914:4

Parliament of France 328.44

Geology of France 554.4

यहाँ भौगोलिक उपविभाजन 44 का स्मृति सहायक प्रयोग फ्रांस के रूप में सभी मुख्य वर्गों में समान रूप से हुआ है।

(iii) भाषाओं के लिए भी इस पद्धति में स्मृति सहायक अंक का प्रयोग किया गया है।

English Language Encylopaedia 032

English Linguistics 420

English Literature 820

English Language Periodicals 052

यह अंक 2 का स्मृति सहायक प्रयोग अंग्रेजी भाषा के लिए किया गया है।

8. **पक्ष विश्लेषण एवं संश्लेषण** (Facet Analysis and Synthesis)—DDC पद्धति का मूल प्रारूप परिगणनात्मक है, लेकिन 17वें संस्करण के बाद के संस्करणों में पक्षात्मक पद्धति के गुणों का समावेश किया जाने लगा।

उदाहरणार्थ—

मुख्य वर्ग 400 (Language) को सबसे पहले भाषा से विभाजित करते हैं, उसके बाद भाषा के तत्त्वों से। जैसे—

German Language 430

Loords of German 438.1

यहाँ जर्मन भाषा के आधार अंक 43 को पुन: शब्द के प्रतीक एकल संख्या 81 से विभाजित किया गया है।

9. **संयोजी चिह्नों का पूर्ण अभाव** (No Connecting Symbol)—इसमें CC की तरह किसी भी प्रकार के संयोजी चिह्नों का प्रयोग नहीं किया गया है। इसमें सिर्फ तीन अंकों के बाद एक दशमलव का प्रयोग किया गया है।

10. **योजक विधियाँ** (Add Device)—DDC के 19वें संस्करण में योजक विधियों का प्रावधान है। इससे एक मुख्य वर्ग की संख्या में दूसरे मुख्य वर्ग की संख्या या उसी मुख्य वर्ग की किसी अन्य वर्ग संख्या से जोड़कर एक नया वर्गांक निर्मित किया जा सकता है।

11. **सापेक्षिक अनुक्रमणिका** (Relative Index)—DDC में एक विशेष प्रकार के Index का प्रयोग किया गया है जिसको Relative Index कहा जाता है जिसमें समस्त विषयों के पर्यायवाची शब्द का भी प्रयोग किया है, जिससे वर्गाकार को अपना विषय खोजने में आसानी होती है।

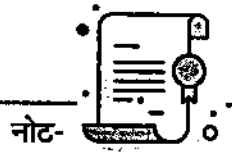

12. **संयोजी चिह्नों का पूर्ण अभाव** (No Connecting Symbol)—इसमें CC के तरह किसी भी प्रकार के Connecting Symbol का प्रयोग नहीं किया गया है। इसमें सिर्फ तीन अंकों के बाद एक Decimal का प्रयोग किया गया है।
13. **सरल पद्धति** (Simplicing)—DDC अन्य पद्धति की अपेक्षा काफी सरल है। इसके प्रयोग से वर्गांक को याद करने, लिखने व टाइप करने में आसानी होती है।
14. **अन्तर्राष्ट्रीय वर्गीकरण पद्धति** (International Classification Scheme)—DDC को International Classification Scheme कहा जाता है क्योंकि इसके आधार को मानने वाले विश्व के प्राय: देश है।

DDC की विशेषताओं के सन्दर्भ में Drown महोदय ने कहा है कि DDC समस्त वर्गीकरण पद्धतियों में अत्यधिक सर्वव्यापी एवं प्रतिष्ठत पद्धति है और इस बात की सत्यता का इसकी लोकप्रियता से ही पता चल जाता है।

3.4 द्विबिन्दु वर्गीकरण Colon Classification (CC)

द्विबिन्दु वर्गीकरण (Colon Classification) पद्धति के प्रणेता Dr. S.R. Ranganathan थे जो भारत में पुस्तकालय विज्ञान के जनक के रूप में जाने जाते हैं। इस वर्गीकरण पद्धति की रूपरेखा का निर्माण Dr. Ranganathan ने लंदन प्रवास के दौरान ही कर लिया था। एक दिन उन्होंने लंदन के एक Departmental Store में मैकॉनों सेट (Meccano Set) देखा। यह एक खिलौना होता है जिसमें नट-बोल्ट के सहारे कई विभिन्न रूप में खिलौने का निर्माण एक ही Set से किया जा सकता है। उसी मैकॉनों सेट के आधार पर उन्होंने Colon Classification System का निर्माण किया और उसमें "Colon" योजन चिह्न का प्रयोग किया।

मद्रास विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य तथा विश्वविद्यालय पुस्तकालय में Librarian के रूप में किए गए कार्यों के अनुभव के आधार पर सन् 1933 में Dr. Ranganathan ने Colon Classification के First edition को प्रकाशित किया। Dr. S.R. Ranganathan ने ज्ञान जगत को और विषय जगत को वर्गीकरण के आधार पर चित्रित करते हुए इसकी रचना की है। इसकी रचना करने में उन्होंने सबसे पहले यह पाया कि किसी भी विषय के मूलरूप से पाँच पक्ष व्यक्तित्व (Personality), तत्त्व (Matter), ऊर्जा (Energy), स्थान (Space) और काल (Time) अर्थात् "PMEST" के आधार पर चित्रांकन किया जा सकता है। अपने वर्गीकरण को तैयार करते समय उन्होंने और भी दूसरी बातों को ध्यान में रखा कि कौन-सा विषय किस विषय का अंग है या उपअंग है। उन्होंने यह भी ध्यान रखा कि बाद में आने वाले विषय को स्थान देने के लिए भी स्थान छोड़ना होगा, इस तरह से अनेक अन्य बातों को ध्यान में रखकर Dr. Ranganathan ने विषय जगत को अपनी वर्गीकरण पद्धति में विकास किया।

द्विबिन्दु वर्गीकरण की विशेषताएँ (Features)—CC की अपनी कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं जो निम्नलिखित हैं—

1. **द्विबिन्दु वर्गीकरण**—Dr. S.R. Ranganathan ने ज्ञान जगत को और विषय जगत को वर्गीकरण के आधार पर चित्रित करते हुए इसकी रचना की है। इसकी रचना करने में उन्होंने सबसे पहले यह पाया कि किसी भी विषय को मूलरूप से पाँच पक्ष व्यक्तित्व (Personality), तत्त्व (Matter), ऊर्जा (Energy), स्थान (Space) और काल (Time) अर्थात् "PMEST" के आधार पर चित्रांकित किया जा सकता है तथा उसमें "PMEST" को जोड़ने के लिए "Colon" योजक चिह्न का प्रयोग किया। अत: इसका नाम द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति पड़ा।

2. **Analytico-Synthetico**—इस पद्धति के जन्मदाता डॉ० एस०आर० रंगनाथन थे। उन्होंने 1933 ई० में Colon Classification पद्धति का आविष्कार किया जिसमें उन्होंने analytico-Synthetico Scheme को आधार बनाया। इस पद्धति में Class number बनाने के लिए उसका पहले विश्लेषण (Analysis) किया जाता है। फिर उसे संश्लेषण (synthetic) कर Class number बनाया जाता है।

3. **मिश्रित अंकन**—Colon Classification में अंकन के लिए एक तरह का अंकन-प्रयोग नहीं करके कई तरह के अंकन को मिला दिया जाता है।

जैसे—0 से 9 तक, साथ में A से Z तक, या अन्य चिह्न : ; . आदि का प्रयोग एकसाथ किया जाता है। इस तरह के अंकन में कई चिह्नों का प्रयोग होता है। रंगनाथन ने अपने CC में मिश्रित अंकन का प्रयोग किया है तथा 0-9, A से Z, छोटी a से z, , : ; . आदि चिह्नों का प्रयोग किया है। यह शुद्ध अंकन से ज्यादा जटिल होता है परन्तु ज्यादा उपयोगी होता है।

4. **मुख्य वर्गों की रूप-रेखा** (Outlines of Main Classes)—CC में सम्पूर्ण ज्ञान जगत को विभाजित करने के लिए polychotony (बहुवर्गों में विभाजन) विधि का प्रयोग किया है जो निम्न है—

A	=	Natural Sc.	N	=	Fine Arts
B	=	Mathematics	O	=	Literature
C	=	Physics	P	=	Linguistics
D	=	Engineering	Q	=	Religion
E	=	Chemistry	R	=	Philosophy
F	=	Technology	S	=	Psychology
G	=	Biology	T	=	Education
H	=	Geology	U	=	Geography
I	=	Botany	V	=	History
J	=	Agriculture	W	=	Pol. Sc.
K	=	Zoology	X	=	Economics
L	=	Medicine	Y	=	Sociology
M	=	Useful Arts	Z	=	Law

5. **सापेक्षिक अनुक्रमणिका** (Relative Index)—CC में एक विशेष प्रकार के Index का प्रयोग किया गया है जिसको Subject Index कहा जाता है जिसमें समस्त विषयों के पर्यायवाची शब्द का भी प्रयोग किया है, जिसमें वर्गाकार को अपना विषय खोजने में आसानी होती है।

6. **सहायक क्रम** (Helpfull Sequence)—Colon Classification के अन्तर्गत विषयों का सहायक क्रम प्रदान करते हुए सजाया गया है। सारे प्रकृति विज्ञान को एकसाथ रखा गया है। सारे Applied Science को Pure Sc. के बाद उन पर रखा गया है जिन पर वे आधारित हैं। उसी तरह से Humanities, Social Sc. को एकसाथ सहायक क्रम दिया गया है। सहायक क्रमों को तर्कसंगत आधार प्रदान किया गया है। जैसे—Biology संग Animal Husbandry के साथ।

नोट-

7. **अंकन** (Notational Capacity)—Colon Classification में mixed Notation का प्रयोग किया गया है। इसमें 26 Roman Capital, 23 Roman Small (Small o, Small i, Small l), 10 Indo-Arabic Number, एक ग्रीक संख्या के अलावा 10 Indicator digit का प्रयोग किया गया है। इसके अंकन विस्तृत और लचीले हैं। इनके अतिरिक्त Common Isolate, Special Isolate एवं अन्य प्रकार के Isolates के प्रावधान भी दिए गए हैं। Colon Classification की मदद से Compound Subject का Class No. बनाना भी सम्भव है।

8. **भविष्य के लिए सम्भावना** (Provision for Future)—Extrapolation और Inter Polation की मदद Array और Chain लेते हुए भविष्य में आने वाले विषयों को समाहित कर लेने का पूरा रास्ता प्रदान किया गया है।

उदाहरण—

(i) **Extra Polation in Array**—Zone और Sector बनाकर कम-से-कम 1,166 Digit बनाने की शक्ति इसके अन्तर्गत प्राप्त है जो Array के प्रारम्भ या अन्त में लगाकर बनाया जा सकता है।

(ii) **Extra Polation in Chain**—आवश्यकता होने पर वर्गांक की Chain में अधिनस्थ उनके Isolate को शामिल किया जाता है। ऐसा gape device और decimal fraction device के द्वारा किया जाता है। जैसे—R6 को Indian Philosophy माना गया है। इसके पहले के अंक जो छोड़ दिए गए हैं। वह Gape Device ही हैं जो आने वाले विषयों के लिए खाली छोड़ दिया गया है।

(iii) **Inter Polation in Chain**—किसी वर्गांक की Chain में लगातार दो Isolate या वर्ग के बीच किसी Isolate का अंत: नियोजन किया जाता है। उसे Inter Polation in Chain कहते हैं।

(iv) **Inter Polation in Array**—इसके अन्तर्गत Array में Emptying digit तथा Empty Emptying digit, Partial Comprehension आदि की मदद से विषय का निर्माण किया जाता है।

उदाहरण—

Emptying Digit (T, V, X)

* Zoology - K

Animal Husbandry -KX

* India - 44

* Nepal - 44 T

* Empty emptying digit -

Medicine - L

Public health - LV5

3.5 सार्वभौमिक दशमलव वर्गीकरण पद्धति
Universal Decimal Classification; UDC

UDC (Universal Decimal Classification) पद्धति Melvil Dewey की दशमलव वर्गीकरण पद्धति का एक अन्तर्राष्ट्रीय विस्तार एवं प्रयोग है। इसका अविर्भाव 1895 में ब्रूसेल्स (बेल्जियम) में सम्पन्न International Conference of Bibliography के परिणाम स्वरूप हुआ था। इस पद्धति का निर्माण बेल्जियम के दो निवासी Henry La Fontaine तथा Paul Outlet ने किया था और उन्हें FID (International Institute of Bibliography) में उपलब्ध समस्त पुस्तकों एवं प्रलेखों को Universal Classification के लिए किसी सूक्ष्म वर्गीकरण पद्धति की आवश्यकता का अनुभव हुआ। इस समय DDC अत्यधिक लोकप्रिय थी जिसने उन दोनों महानुभावों को आकर्षित किया।

परिणामत: IIB ने DDC का प्रयोग करने का निश्चय किया और उसे संशोधित करने की अनुमति Melvil Dewey से प्राप्त की। परिणामस्वरूप एक नवीन वर्गीकरण पद्धति UDC का प्रथम सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय संस्करण का सन् 1905 ई० में French भाषा में Manual the Repertoire Bibliographic Universal नाम से प्रकाशित हुआ। अब तक इसके कुल सात संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। इसके बाद संक्षिप्त संस्करण भी प्रकाशित हो चुका है।

विशेषताएँ (Features)—Universal Decimal Classification की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. **सार्वभौमिक दशमलव वर्गीकरण पद्धति**—यह वर्गीकरण पद्धति DDC के अन्तर्राष्ट्रीय (Universal) विस्तार एवं प्रयोग के रूप में प्रकाशित की गई है। इसलिए इसका नाम Universal Decimal Classification Scheme पड़ा है।
2. **लगभग पक्षात्मक पद्धति**—UDC में भी DDC की तरह ही Ready Made Class No. दिया गया है इसलिए यह Enumerative Pattern पर आधारित Classification Scheme है लेकिन इसकी व्यवस्था कुछ-कुछ Faceted Scheme के जैसी भी है। इसलिए इसको Almost Faceted Classification Scheme भी कहा जाता है।
3. **मुख्य वर्ग के विभाजन** (Division of Main Class)—UDC में सम्पूर्ण ज्ञान जगत को DDC की तरह ही 10 मुख्य भागों में बाँटा गया है। उदाहरण के रूप में—

Main Classes

0	–	Generalities
1	–	Philosophy
2	–	Religion
3	–	Social Science
4	–	Language
5	–	Mathematics & Natural Sc. (Pure Sc.)
6	–	Applied Science
7	–	Fine Arts
8	–	Literature
9	–	History & Geography

नोट-

4. **पुनः मुख्य वर्ग का विभाजन** (Subdivision of Main Class)—UDC ज्ञान जगत में Main Class को पुन: 10 भागों में बाँटा गया है जो इस प्रकार हैं—

Division of Pure Sc. पुन: 51 को 10 भागों में

5. Pure Sc.	**51 Mathematies**
51. Mathematics	511 Arithmetic
52. Astronomy	512 Algebra
53. Physics	513 Geometry
54. Chemistry	514 Trignometry
55. Geology	515 Decription Geometry
56. Paleentology	516 Analytical & Co-Ord. Geometry
57. Biology	517 Analysis, Calculus
58. Botany	518 Special Methods
59. Zoology	519 Combl. & Stat. Analysis, Probets.

5. **सहायक प्रावधान** (Auxiliaries)—UDC में Common Isolate के स्थान पर Common Auxiliaries का प्रावधान किया गया है। इसमें निम्न Auxiliaries का प्रयोग किया गया है।

Common auxiliary of language	=	भाषा के लिए (=)
Common auxiliary of form	(0)	स्वरूप के लिए (0)
Common auxiliary of nationality	(= ...)	राष्ट्रीयता के लिए (= ...)
Comman auxiliary of time	(" ")	समय के लिए (" ")
Common auxiliary of relation	(:)	सम्बन्ध के लिए (:)

6. **सापेक्षिक अनुक्रमणिका** (Relative Index)—UDC में प्रयुक्त Index साधारण न होकर एक विशेष प्रकार का होता है, जिसे Relative Index कहा जाता है। इसमें वर्गाकार को वर्गीकरण करने में सहायता मिलती है।

7. **संयोजी चिह्न** (Indicator Digit)—UDC में विभिन्न पदों के Notations को जोड़ने के लिए Indicator digit का प्रावधान किया है। जैसे—

लगातार Main Classes को जोड़ने के लिए	+
अलगातार Main Classes को जोड़ने के लिए	/
सम्बन्धित Main Classes को जोड़ने के लिए	:
अधिनस्थ Main Classes को जोड़ने के लिए	[]

8. **मिश्रित अंकन** (Mixed Notation)—UDC में DDC की तरह शुद्ध अंकन के बदले Mixed Notation का प्रयोग किया गया है। इसमें 10 Arabic Numbers तथा Roman Capital Alphabeticals का प्रयोग किया गया है।

9. **अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग** (International Use)—विश्व की सभी बड़ी-बड़ी Library में UDC का ही उपयोग किया जाता है। इसमें सरलता के साथ-साथ व्यापक क्षमता के कारण यह

नोट-

अत्यधिक लोकप्रिय है।

UDC की विशेषताओं के सन्दर्भ में Milles महोदय ने प्रकाश डालते हुए कहा है कि विषयों के संगठन एवं व्यवस्था के लिए UDC अत्यन्त उपयोगी वर्गीकरण पद्धति है। यह सम्पूर्ण वर्गीकरण भी है, तो वास्तविक रूप से सार्वभौमिक है।

डॉ० एस०आर० रंगनाथन का पुस्तकालय वर्गीकरण में योगदान

डॉ० एस०आर० रंगनाथन का जन्म 12 अगस्त, 1892 को शियाली, मद्रास (वर्तमान चेन्नई) में हुआ था। रंगनाथन के योगदान का पुस्तकालय विज्ञान पर विश्वव्यापी प्रभाव पड़ा। रंगनाथन की शिक्षा शियाली के हिन्दू हाई स्कूल, टीचर्स कॉलेज, सइदापेट्ट में हुई थी। मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज में उन्होंने 1913 और 1916 में गणित में बी०ए० और एम०ए० की उपाधि प्राप्त की। 1917 में उन्होंने गवर्नमेंट कॉलेज, कोयंबटुर और 1921-23 के दौरान प्रेजिडेंसी कॉलेज, मद्रास विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया।

पद

1924 में रंगनाथन को मद्रास विश्वविद्यालय का पहला पुस्तकालयाध्यक्ष बनाया गया और इस पद की योग्यता हासिल करने के लिए वह यूनिवर्सिटी कॉलेज, लंदन में अध्ययन करने के लिए इंग्लैंड गए। 1925 से मद्रास में उन्होंने यह काम पूरी लगन से शुरू किया और 1944 तक इस पद पर बने रहे। 1945-47 के दौरान उन्होंने बनारस (वर्तमान वाराणसी) हिन्दू विश्वविद्यालय में पुस्तकालयाध्यक्ष और पुस्तकालय विज्ञान के प्राध्यापक के रूप में कार्य किया व 1947-54 के दौरान उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ाया। 1954-57 के दौरान वह ज्यूरिख, स्विट्जरलैंड में शोध और लेखन में व्यस्त रहे। इसके बाद वह भारत लौट आए और 1959 तक विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन में अतिथि प्राध्यापक रहे। 1962 में उन्होंने बंगलौर में प्रलेखन अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किया और इसके प्रमुख बने और जीवनपर्यंत इससे जुड़े रहे। 1965 में भारत सरकार ने उन्हें पुस्तकालय विज्ञान में राष्ट्रीय शोध प्राध्यापक की उपाधि से सम्मानित किया।

योगदान

पुस्तकालय विज्ञान के लिए रंगनाथन का प्रमुख तकनीकी योगदान वर्गीकरण और अनुक्रमणीकरण (इंडेक्सिंग) सिद्धान्त था। उनके कोलन क्लासीफिकेशन (1933) ने ऐसी प्रणाली शुरू की, जिसे विश्व भर में व्यापक रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इस पद्धति ने डेवी दशमलव वर्गीकरण जैसी पुरानी पद्धति के विकास को प्रभावित किया। बाद में उन्होंने विषय अनुक्रमणीकरण प्रविष्टियों के लिए 'शृंखला अनुक्रमणीकरण' की तकनीक तैयार की।

पुस्तकालय वर्गीकरण में योगदान

पुस्तकालय विज्ञान के लिए रंगनाथन का प्रमुख तकनीकी योगदान वर्गीकरण और अनुक्रमणीकरण (इंडेक्सिंग) सिद्धान्त था। उनके कॉलन क्लासीफिकेशन (1933) ने ऐसी प्रणाली शुरू की, जिसे विश्व भर में व्यापक रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इस पद्धति ने डेवी दशमलव वर्गीकरण जैसी पुरानी पद्धति के विकास को प्रभावित किया। बाद में उन्होंने विषय अनुक्रमणीकरण प्रविष्टियों के लिए 'शृंखला अनुक्रमणीकरण' की तकनीक तैयार की।

नोट-

द्विबिन्दु वर्गीकरण (Colon Classification) पद्धति के प्रणेता Dr. S.R. Ranganathan थे जो भारत में पुस्तकालय विज्ञान के जन के रूप में जाने जाते हैं। इस वर्गीकरण पद्धति की रूपरेखा का निर्माण Dr. Ranganathan ने लंदन प्रवास के दौरान ही कर लिया था। उन्होंने लंदन के एक Departmental Store में Meccano Set देखा। यह एक खिलौना होता है जिसमें नट-बोल्ट के सहारे कई विभिन्न रूप में खिलौने का निर्माण एक ही Set से किया जा सकता है। उसी Meccano Set के आधार पर उन्होंने Colon Classification System का निर्माण किया और उसमें "Colon" योजना चिह्न का प्रयोग किया।

मद्रास विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य तथा विश्वविद्यालय पुस्तकालय में Librarian के रूप में किए गए कार्यों के अनुभव के आधार पर वर्ष 1933 में Dr. Ranganathan ने Colon Classification के First edition को प्रकाशित किया। Dr. S.R. Ranganathan ने ज्ञान जगत को और विषय जगत को वर्गीकरण के आधार पर चित्रित करते हुए इसकी रचना की है। इसकी रचना करने में उन्होंने सबसे पहले यह पाया कि किसी भी विषय के मूलरूप से पाँच पक्ष व्यक्तित्व (Personality), तत्त्व (Matter), ऊर्जा (Energy), स्थान (Space) और काल (Time) अर्थात् "PMEST" के आधार पर चित्रांकित किया जा सकता है। अपने वर्गीकरण को तैयार करते समय उन्होंने और भी दूसरी बातों को ध्यान में रखा कि कौन-सा विषय किस विषय का अंग है या उपअंग है। उन्होंने यह भी ध्यान में रखा कि बाद में आने वाले विषय को स्थान देने के लिए भी जगह छोड़ना होगा, इस तरह से अनेक अन्य बातों का ध्यान में रखकर Dr. Ranganathan ने विषय जगत को अपने वर्गीकरण पद्धति में चित्रण किया।

3.6 लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस का वर्गीकरण

Library of Congress Classification; LCC

LCC 1898-1910 के दौरान विकसित हुआ। इसमें 21 मुख्य वर्ग शामिल हैं, जिसे A-Z से सूचित किया जाता है। यह कुछ हद तक सी०ए० कटर (1837-1903): एक्सपेंसिव क्लासीफिकेशन (1893) पर आधारित है।

A	सामान्य कार्य
B	दर्शन, मनोविज्ञान, धर्म
C/I	इतिहास
G	भूगोल और मानव विज्ञान
H, J/L	सामाजिक योजनाएँ, कानून और शिक्षा
M/N	संगीत और ललित कला
P	भाषा और साहित्य
Q/T	विज्ञान, चिकित्सा, कृषि और प्रौद्योगिकी
U/V	सैन्य/नौसेना
Z	ग्रंथ सूची और पुस्तकालय विज्ञान

I, O, W, X, Y को खाली रखा गया है। उपर्युक्त विकासवादी व्यवस्था सिद्धान्त को व्यवहार में लाया जाता है। हालाँकि प्रत्येक वर्ग स्वतन्त्र है, पूरे अनुसूची 51 खण्डों तक विवरण के गहराई में विस्तारित किया गया है। इसे एक सामान्य वर्गीकरण के रूप में वर्णित किया गया है जिसमें गहरी अनुसूची की एक

नोट

शृंखला शामिल है। यह एक परिगणनात्मक प्रणाली का सबसे अच्छा उदाहरण है। मुख्य वर्ग पुनः एक दूसरे वर्णमाला से विभाजित होती हैं—

Q विज्ञान
QA गणित
QB खगोलशास्त्र
QC भौतिक विज्ञान
QD रसायन विज्ञान

दोहरे अंकों के उपखण्डों से विभाजित किया जाता है। यह एकमात्र वर्गीकरण है; जो अब दशमलव अंकन की प्रवृत्ति के सामने अंकगणितीय अंकों का उपयोग कर रहा है—

QD रसायन विज्ञान
1-65 सामान्य विषय
71-142 विश्लेषणात्मक रसायन विज्ञान
146-197 अकार्बनिक रसायन विज्ञान
241-441 कार्बनिक रसायन
901-991 क्रिस्टलोग्राफी

शेल्फ वर्गीकरण के रूप में यह काफी सफल है।

उपयोगिता—जैसा कि पहले कहा गया था, एल०सी०सी० अपने मुख्य वर्गों के लिए दो रोमन कैपिटल का उपयोग करती है। फिर दो अंकों में से प्रत्येक वर्णमाला को अंकगणितीय अंकन द्वारा आगे विभाजित किया जाता है। अंकन को सन्तुलित रूप से मिश्रित, और ए/जेड से बड़ा आधार और आगे AA से VZ और Z जैसे विभाजन इसे भविष्य के विस्तार के लिए अत्यधिक क्षमता प्रदान करते हैं। इसके अलावा, अक्षर I, O, W, X और Y अभी भी खाली हैं। अंकगणितीय अंकन में कई अन्तराल छोड़ दिए गए हैं जिन्हें भरा जा सकता है। जहाँ कोई अन्तराल नहीं है, वहाँ देर से ही सही यह नए विषयों को सम्मिलित करने के लिए दशमलव विस्तार का उपयोग करना शुरू कर दिया गया है। वर्णमाला उप-विभाजनों का उपयोग एक बिन्दु पर अन्तहीन ग्रह्यशीलता प्रदान करता है।

QD 149 अकार्बनिक रसायन विज्ञान
QD 149.5 सामान्य कार्य
QD 149.7 क्षेत्र या देश के अनुसार
QD 149.7 A-Z देश द्वारा
QD 149.7 In भारत से
QD 149.7 Jap जापान से

वर्णमाला के उपखण्डों को छोड़कर स्मृति सहायक नहीं है।

एक पूर्ण वर्ग संख्या में लेखक और प्रकाशन के वर्ष के लिए कटर अंक को भी शामिल किया जा सकता है—

Economic way of thinking by P.T. Heyne 2003

HB 717.5 H 46 2003

यहाँ H 46 होने के लिए कटर संख्या है और 2003 प्रकाशन का वर्ष है।

4.4.4. सी०सी०—सी०सी० के अंकन को पुस्तकालय अंकन में ऊँचा दर्जा प्राप्त है। यह अपने आप में एक व्यापक प्रणाली है और व्यवस्थित उपसूत्र और युक्ति साधनों पर आधारित है। समस्या केवल इसकी जटिलता और भयावह वर्ग संख्या है। लेकिन रंगनाथन इस आधार पर अपनी आलोचना से डिगे नहीं थे। सी०सी० के अंकन में छह प्रजातियों से सम्बन्धित 74 अंक शामिल हैं—

1. A/Z मुख्य कक्षाएँ 26
2. ग्रीक अक्षर 01
3. 1/9 एकल अंक का दशमलव अंकन 10
4. a/z (i, l, o को छोड़कर) सर्वमान्य एकल 23
5. विशेष संकेतन चिह्न * ← 03
6. साधारण संकेतक चिह्न

   & ' . : ; , - = → + 0 11

किसी भी पुस्तकालय वर्गीकरण में सी०सी० का अंकन आधार सबसे बड़ा है। इसलिए, उनके पास अपने उचित स्थानों पर नए विषयों को समायोजित करने के लिए बड़ी जगह है। रंगनाथन ने ग्राह्यशील अंकन के लिए कई पद्धतियों को तैयार किया हालाँकि पक्षात्मकता अपने आप में बहुत ग्राह्यशील है। दशमलव अंश और अन्तराल के पारम्परिक ग्राह्यशील उपकरणों के अलावा, उन्होंने सेक्टर अंकन, पंक्ति में नए विषयों के लिए अन्त:वेशन और बहिर्वेशन के लिए रिक्त एवं रिक्तक अंकों को तैयार किया। इसके अलावा अंकन भी बहुत स्मृति सहायक है।

वर्ग	शारीरिक रचना	शरीर विज्ञान	रोग
G जीव विज्ञान	G : 2	G : 3	G : 4
I वनस्पति विज्ञान	I : 2	I : 3	I : 4
K प्राणि विज्ञान	K : 2	K : 3	K : 4
L चिकित्सा	L : 2	L : 3	L : 4

समझने के लिए, सामान्य शारीरिक रचना, पादप शरीर रचना विज्ञान, पशु शरीर रचना विज्ञान और मानव शरीर रचना विज्ञान को हर जगह ": 2" द्वारा निरूपित किया जाता है।

योगदान—हालाँकि एल०सी०सी० को केवल अपने पुस्तकालय के लिए अभिकल्पित किया गया था, फिर भी इसका उपयोग अमेरिका के लगभग 60 बड़े सार्वजनिक, शैक्षणिक और शोध पुस्तकालयों में किया जा रहा है। एल०सी०सी० की संख्या मार्क रिकॉर्ड में दिखाई देती है, जिसका उपयोग पूरे विश्व के कई पुस्तकालयों द्वारा प्रतिलिपि प्रसूचीकरण में किया जाता है। यहाँ तक कि एशिया और यूरोप के कुछ राष्ट्रीय ग्रंथ सूची इस प्रणाली का उपयोग कर रहे हैं। विवरणों की गहराई, निरन्तर संशोधन और संस्थागत समर्थन के कारण इसका भविष्य बहुत उज्जवल है। इसके ऑनलाइन संस्करण को वर्गीकरण प्लस के रूप में जाना जाता है, जिसमें एल०सी०एस०एच० भी शामिल है और यह अत्यधिक बहुमुखी है। वेब वातावरण में इंटरनेट संसाधनों को व्यवस्थित करने के लिए एक उपकरण के रूप में एल०सी०सी० का उपयोग करने की क्षमता सफल साबित हुई है। इसका उपयोग आयोवा स्टेट यूनिवर्सिटी की वेबसाइट पर साइबरस्टैक्स में किया जाता है। एल०सी०सी० द्वारा वर्गीकृत विज्ञान और प्रौद्योगिकी के चयनित क्षेत्रों में डब्ल्यू०डब्ल्यू०डब्ल्यू० और अन्य इंटरनेट संसाधनों का साइबरस्टैक्स एक महत्त्वपूर्ण संग्रह है।

नोट-

J भूगोल, मानव विज्ञान
H सामाजिक विज्ञान
J राजनीति विज्ञान

इन्हें पुन: एल०सी० वर्ग संख्याओं से विभाजित किया गया है। उदाहरण के लिए, TL 787-4050 नासा के अन्तरिक्ष यात्रियों की जीवनियों पर संसाधन उपलब्ध कराता है। प्रत्येक संसाधन के लिए एक संक्षिप्त व्याख्या भी प्रदान की जाती है।

अधिवक्ता, एल्विन टॉफलर का कहना है इसे एक ही समय में निर्माता और उपयोगकर्ता होने का गौरव प्राप्त है। यह एक सामान्य वर्गीकरण है जिसमें गहन अनुसूची की एक शृंखला है और इसे सामान्य और अनुसंधान दोनों पुस्तकालयों में समान रूप से उपयोग किया जा सकता है। इसे लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस का समर्थन प्राप्त है और इसका उपयोग केन्द्रीयकृत और सहकारी सूचीकरण सेवाओं का समर्थन और इसकी उत्कृष्ट ग्रंथ सूची सेवाओं में इसके उपयोग के कारण इसमें कई तकनीकी दोषों और कमजोरियों के बावजूद इस प्रणाली को महान मान लिया गया है।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. DDC का पहला संस्करण कौन-से वर्ष में प्रकाशित हुआ?
2. 19वें संस्करण के ड्यूई दशमलव वर्गीकरण पद्धति के तीन खण्डों के नाम बताइए।
3. 1876 में निर्मित वर्गीकरण पद्धति का नाम बताइए।
4. दशमलव वर्गीकरण पद्धति की कोई दो विशेषताएँ लिखिए।
5. कौन-सी वर्गीकरण पद्धति 1933 में प्रचलित हुई? उसके प्रणेता का नाम बताइए।
6. कोलन क्लासीफिकेशन में सापेक्ष अनुक्रमणिका को समझाइए।
7. UDC कौन-सी पद्धति का विस्तार है?
8. UDC के सम्पूर्ण ज्ञान जगत को कितने मुख्य भागों में बाँटा गया है?
9. द्विबिन्दु वर्गीकरण पद्धति के प्रणेता कौन थे?
10. LCC में कितने मुख्य वर्ग शामिल हैं?
11. अब तक कोलन क्लासीफिकेशन (CC) के कितने संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. पुस्तकालय की वर्गीकरण पद्धतियों का वर्णन कीजिए।
2. वर्गीकरण की प्रमुख पद्धतियों के नाम लिखिए।
3. लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस वर्गीकरण की उपयोगिता लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. ड्यूई दशमलव वर्गीकरण (DDC) पद्धति का सविस्तार वर्णन कीजिए।
2. द्विबिन्दु वर्गीकरण (CC) को समझाते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. सार्वभौमिक पद्धति (UDC) का सविस्तार वर्णन कीजिए।

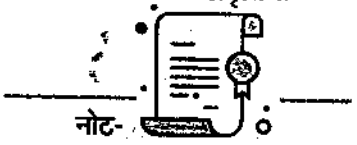

UNIT 4

पुस्तकालय वर्गीकरण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ

Current Trends in Library Classification

4.1 प्रस्तावना Introduction

यह सर्वविदित है कि आधुनिक वर्गीकरण के युग का आरम्भ 1876 में ड्यूई डेसीमल क्लासीफिकेशन (डी०डी०सी०) के प्रकाशन के साथ हुआ। इस प्रणाली ने पुस्तकों को दक्षतापूर्वक व्यवस्थित करने की एक नवीन पद्धति ही नहीं दी बल्कि पुस्तकालयाध्यक्षों के समक्ष उपस्थित अनेक अन्य समस्याओं को भी हल किया। इस प्रणाली के अस्तित्व में आने के साथ वर्गीकरण ही नहीं अपितु पुस्तकालय विज्ञान में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। इसी कारण डी०डी०सी० के जनक मेलविल ड्यूई (1851-1931) को आधुनिक पुस्तकालय विज्ञान का पिता भी कहा जाता है। डी०डी०सी० के अविर्भाव के पश्चात् अनेक अन्य वर्गीकरण प्रणालियाँ भी बनाई गई जो या तो डी०डी०सी० की कमियों को सुधारती हैं या ज्ञान को संधारित करने की वैकल्पिक विधियों का उपयोग करती हैं या फिर अंकन की एक नवीन प्रणाली प्रस्तुत करती हैं। किन्तु इनमें से कोई भी प्रयास डी०डी०सी० के समान सफल नहीं हो पाया। यद्यपि आज कोई भी नवीन सामान्य वर्गीकरण प्रणाली नहीं बनाई जा रही है किन्तु पूर्व में बनी कुछ प्रणालियाँ इस प्रकार हैं—चार्ल्स एमी कटर (1837-1903) द्वारा निर्मित 'एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन (1893)' तथा ब्रिटिश पुस्तकालयाध्यक्ष जेम्स डी० ब्राउन (1862-1914) द्वारा निर्मित 'सब्जेक्ट क्लासीफिकेशन 1906)'। पुस्तकालय में प्रयोग की दृष्टि से ये दोनों पद्धतियाँ प्राय: लुप्त हो चुकी हैं। अमेरिकी पुस्तकालयाध्यक्ष फ्रीमोन्ट ए० राइडर (1885-1962) द्वारा निर्मित 'इन्टरनेशनल क्लासीफिकेशन 1961)' भी मुख्यतया पुस्तकालय क्षेत्र में उपेक्षित ही रही है। अन्य प्रणालियों द्वारा प्रयुक्त विधियाँ तथा विषय विस्तार अत्यन्त पूर्वकालीन हैं, इसलिए इनका प्रयोग नहीं किया जाता। इनके अलावा कुछ अन्य सामान्य वर्गीकरण प्रणालियों का निर्माण तथा प्रयोग केवल स्थानीय स्तर पर ही हो रहा है। अत: हम इस इकाई में पुस्तकालयों में प्रयुक्त कुछ प्रमुख सामान्य वर्गीकरण प्रणालियों, प्रमुखत: उनके नवीनतम संस्करणों की विशेषताओं तथा इन प्रणालियों एवं इनके सिद्धान्तों की इलेक्ट्रॉनिक प्रलेखों को संघटित करने में उपयोगिता का अध्ययन करेंगे। इस इकाई में पुस्तकालय वर्गीकरण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ की विस्तार से चर्चा की गई है।

4.2 ड्यूई डेसीमल क्लासीफिकेशन Dewey Decimal Classification

पुस्तकालय वर्गीकरण के क्षेत्र में प्रथम तथा सर्वाधिक लोकप्रिय इस प्रणाली की रचना मेलविल ड्यूई (1651-1931) द्वारा 1876 में की गई। इस प्रणाली में सम्पूर्ण ज्ञान जगत को दस मुख्य वर्गों में विभाजित करने के पश्चात्, इण्डो-अरेबिक संख्यांक के शुद्ध तथा सरल अंकन की दशमलव प्रणाली

खण्ड-4
पुस्तकालय वर्गीकरण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ

द्वारा दर्शाया जाता है। दशमलव अंकन प्रणाली द्वारा नवीन विषयों का पदानुक्रम में समावेश आसान हो जाता है तथा इसमें प्रलेखों की स्थिति सापेक्ष होती है न कि पूर्व निश्चित। डी०डी०सी० की अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषताओं में इसकी सापेक्ष अनुक्रमणिका तथा ज्ञान का विभाजन विशिष्ट विद्या (Discipline) के अनुसार है। यह तीन प्रमुख संस्करणों में उपलब्ध है—डी०डी०सी०-22 (2003) का सम्पूर्ण संस्करण, संक्षिप्त डी०डी०सी०-14 (2004) तथा वेब ड्यूई (Web Dewey) नाम से प्रस्तुत इलेक्ट्रॉनिक संस्करण। यह सम्पूर्ण तथा संक्षिप्त दोनों ही संस्करणों में उपलब्ध है।

4.2.1 नवीन संस्करण डी०डी०सी०-22

डी०डी०सी० का नवीनतम 22वाँ संस्करण सितम्बर 2003 में निम्नलिखित चार ग्रंथ खण्डों में प्रकाशित हुआ।

खण्ड-1 परिचय, सारणियाँ (Tables)

खण्ड-2 तथा 3 अनुसूचियाँ (Schedules)

खण्ड-4 सापेक्ष अनुक्रमणिका तथा डी०डी०सी०-22 के प्रयोगार्थ नियमावली।

इस संस्करण का संपादन कम्प्यूटर संचालित संपादन सहायता प्रणाली (Editorial Support System) (ई०एस०एस०) के द्वारा किया गया है। इस प्रणाली को 1984 में डी०डी०सी० के संपादकीय कार्यालय, लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस, वाशिंगटन डी०सी० (यू०एस०ए०) में स्थापित किया गया था। इसका सर्वप्रथम प्रयोग डी०डी०सी० में 20वें संस्करण के संपादन में किया गया, इस कम्प्यूटर संचालित ई०एस०एस० प्रणाली की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें सूचना को हर मिनट अपडेट किया जा सकता है तथा इसकी मदद से संस्करण के निर्माण के समय को दो वर्ष से घटाकर 6 माह किया जा सकता है। वार्षिक इलेक्ट्रॉनिक संस्करण उत्पादन लागत तथा स्वरूप पर इसका महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

4.2.2 डी०डी०सी०-22 के प्रमुख परिवर्तन

डी०डी०सी०-22 में परिवर्तन की धारा अत्यन्त सन्तुलित रही है तथा किसी भी क्षेत्र में कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया गया है। केवल कुछ विषयों की अनुसूचियों को विस्तारित किया गया है तथा कुछ संरचनात्मक परिवर्तन किये गये हैं। इस संस्करण के मुख्य परिवर्तन निम्न प्रकार हैं—

004-006 कम्प्यूटर विज्ञान

200 धर्म मुख्य वर्ग में इसाई धर्म के प्रति झुकाव कुछ कम करने की कोशिश की गई है क्योंकि अब धर्म के विशिष्ट पक्ष (तुलनात्मक) 291 से हटाकर 201-209 में स्थानान्तरित कर दिये गये हैं। 340 विधि में सुधार किया गया है।

अनुभाग 518 जो 1950 से खाली पड़ा था, उसमें संख्यात्मक विश्लेषण विषय को स्थापित किया गया है। विश्लेषणात्मक रसायन विज्ञान के विभिन्न पक्ष जो पूर्व प्रकाशित संस्करणों में बिखरे हुए थे, उन्हें 543.1-.8 में एकसाथ रखा गया है।

610 प्रभाग का नया शीर्षक है "चिकित्सा एवं स्वास्थ्य।" इसमें नवीन शब्दावली का प्रयोग करके इसको आधुनिक स्वरूप दिया गया है।

930-990 के ऐतिहासिक काल खण्डों को भी नवीन स्वरूप दिया गया है।

सारणी-1 तथा 6 में नवीन परिवर्तन किये गये हैं।

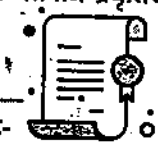

नोट-

सारणी-5 तथा 6 में भी अमेरिकी मूल निवासियों (इण्डियन) तथा भाषाओं के विस्तारित स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है।

सारणी-7 को समाप्त करके इसके प्रावधानों को अन्य अनुसूचियों में ही समाहित कर लिया गया है। इस प्रावधान से व्यक्तियों से सम्बन्धित किसी भी वर्ग संख्या में कोई परिवर्तन नहीं होगा। इस संस्करण के संपादक मण्डल का यह दावा है कि पूर्व प्रकाशित संस्करणों के मुकाबले डी०डी०सी०-22 द्वारा कहीं अधिक सुस्पष्ट वर्गीकरण किया जा सकता है।

4.2.3 वेब ड्यूई

डी०सी०सी०-21 का सीडी-रोम संस्करण, ड्यूई फॉर विन्डोज (DFW) अब डी०डी०सी०-22 के साथ उपलब्ध नहीं है। इसके स्थान पर नया इलेक्ट्रॉनिक संस्करण वेब ड्यूई के नाम से इन्टरनेट पर केवल सशुल्क सदस्यता लाइसेन्स पर उपलब्ध है। वेब आधारित संस्करण होने के कारण इसमें डी०डी०सी०-22 के डेटाबेस में अनेक अभिगम बिन्दु (Access Points) तथा प्रस्तुतीकरण के विकल्प दिये गये हैं।

4.2.4 डी०डी०सी० की समस्याएँ तथा लोकप्रियता

डी०डी०सी० की मुख्य आलोचना उसके शुद्ध तथा सीमित क्षमता वाले अंकन के लिए की जाती रहा है जिसमें नये विषयों को उनके उचित स्थान पर वर्गीकृत करने व लम्बी वर्ग संख्या की समस्याओं का कोई समुचित हल नहीं है। इसके अलावा इसका पश्चिम की ओर झुकाव भी आलोचना का एक प्रमुख कारण रहा है। किन्तु इन समस्याओं तथा आलोचनाओं के बावजूद डी०डी०सी० विश्व के 135 देशों के 2 लाख से भी अधिक पुस्तकालयों में प्रयुक्त सबसे लोकप्रिय सामान्य वर्गीकरण प्रणाली है। संयुक्त राज्य अमेरिका के 95 प्रतिशत स्कूल पुस्तकालय, 25 प्रतिशत अन्य शैक्षणिक पुस्तकालय तथा 20 प्रतिशत विशिष्ट पुस्तकालय इसका प्रयोग करते हैं। यह हिन्दी, अरबी, चीनी, फ्रांसीसी, जर्मन, ग्रीक, हीब्रु इतालवी, कोरियाई, स्पेनी तथा वियतनामी सहित लगभग 30 भाषाओं में अनुवादित हो चुकी है। डी०डी०सी० का प्रयोग 62 राष्ट्रीय तथा अनेक व्यापारिक वाङ्मय सूचियों में किया गया है। एशियाई देशों में सर्वाधिक भारतीय पुस्तकालयों में डी०डी०सी० का प्रयोग किया जाता है। डी०डी०सी० की वर्ग संख्या मार्क (MARC) टेपों तथा सी०आई०पी० डेटा में भी दी जाती है। नव स्थापित पुस्तकालय मुख्यत: डी०डी०सी० का ही प्रयोग करते हैं। डी०डी०सी० में होने वाले निरन्तर संशोधन तथा ओ०सी०एल०सी० व लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस का मजबूत सहारा इस प्रणाली को अपनाने के लिए सहज ही कारण बन जाते हैं। इसका 23वाँ संस्करण 2010 में प्रस्तावित है।

4.3 यूनीवर्सल डेसीमल क्लासीफिकेशन

Universal Decimal Classification

यू०डी०सी० का निर्माण, इन्टरनेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ बिब्लियोग्राफी (आई०आई०बी०) के संस्थापक दो बेल्जियम वासियों पॉल ऑटलेट (1868-1944) तथा हेनरी ली फॉन्टेन (1854-1943) द्वारा 1895 में डी०डी०सी० को रूपान्तरित करके किया गया था। आई०आई०बी० बाद में इन्टरनेशनल फेडरेशन फॉर इन्फॉर्मेशन एण्ड डॉक्यूमेन्टेशन (एफ०आई०डी०) के नाम से प्रसिद्ध हुआ, किन्तु अब यह संस्थान बंद हो चुका है।

आरम्भिक वर्षों में यू०डी०सी० का मुख्य उद्देश्य आई०आई०बी० द्वारा पत्रक रूप में बनाई जा रही सार्वभौम वाङ्मय सूची के लिए विश्व की समस्त भाषाओं में उपलब्ध मुख्यत: सूक्ष्म प्रलेखों का

खण्ड-4
पुस्तकालय वर्गीकरण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ

वर्गीकरण करना था। इस उद्देश्य हेतु यू०डी०सी० में डी०डी०सी० के मुख्य आधार पर सहायक सारणियों के रूप में एक सशक्त संश्लेषणात्मक व्यवस्था को जोड़ा गया है। कुछ विशेषज्ञों का तो यह भी मत है कि यू०डी०सी० ही प्रथम पक्षात्मक वर्गीकरण प्रणाली है जिसके कारण रंगनाथन को अपनी पक्षात्मक वर्गीकरण विधि के विकास के आरम्भिक सूत्र मिले थे। यू०डी०सी० को अनेक अन्य नामों जैसे अन्तर्राष्ट्रीय दशमलव वर्गीकरण, यूरोपीय डी०डी०सी० या ब्रूसेल्स वर्गीकरण से भी जाना जाता है। यह प्रणाली तीन विभिन्न स्तरों पर उपलब्ध है—पूर्ण संस्करण (चतुर्थ अंग्रेजी संस्करण) में 2,10,000 अवधारणाएँ तालिकाबद्ध हैं। मीडियम मानक संस्करण (1993) में 30 प्रतिशत अर्थात् लगभग 60,000 अवधारणाएँ संगृहीत हैं जबकि संक्षिप्त संस्करण (तृतीय अंग्रेजी संस्करण 1961) में 10 प्रतिशत अर्थात् लगभग 20,000 अवधारणाएँ दी गई हैं। हाल ही में यू०डी०सी० का अंग्रेजी में पॉकेट संस्करण भी ब्रिटिश स्टैण्डर्ड्स इन्स्टीट्यूशन द्वारा प्रकाशित किया गया है। चतुर्थ अंग्रेजी संस्करण जिसकी शुरुआत 1930 के दशक में की गई थी, 1980 के दशक के अन्त में जाकर पूर्ण हुआ और अब यह बी०एस० 1000 के रूप में केवल लघु पुस्तिकाओं में उपलब्ध है।

4.3.1 यू०डी०सी० मीडियम संस्करण

यू०डी०सी० मीडियम संस्करण एवं यू०डी०सी० पॉकेट संस्करण पर और अधिक जानकारी के लिए इकाई 2 का अवलोकन करें।

यू०डी०सी० का मीडियम संस्करण तीनों आधिकारिक भाषाओं अंग्रेजी, फ्रांसीसी तथा जर्मन में उपलब्ध है। इसके मानवक अंग्रेजी संस्करण का वर्णन निम्न प्रकार है—

यूनीवर्सल डेसीमल क्लासीफिकेशन मीडियम संस्करण अंग्रेजी पाठ बी०एस०-1000 एम० लन्दन : ब्रिटिश स्टैण्डर्ड्स इन्स्टीट्यूशन 1993, दो भाग, भाग-1 सुनियोजित अनुसूचियाँ (xxiv, Page 916); भाग-2 वर्णानुक्रमिक विषय अनुक्रमणिका (iii, Page 532)

बी०एस० 1000 एम०, यू०डी०सी० द्वारा 1992 में बनायी गयी मास्टर रेफरेन्स फाइल (एम०आर०एफ०) नाम की अन्तर्राष्ट्रीय यू०डी०सी० डेटाबेस से बनाया गया है। यह डेटाबेस प्रति वर्ष अपडेट की जाती है जैसा कि उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है। यह संस्करण दो भागों में है—भाग-1 : वर्ग अनुसूचियाँ तथा भाग-2 प्रथम भाग की विषय अनुक्रमणिका। प्रथम भाग में लगभग 66,000 अवधारणाओं की अनुसूचियाँ 0/9 मुख्य वर्गों के व्यवस्थित क्रम में प्रस्तुत की गई हैं। इस भाग में अनुसूचियों से पहले भूमिका, प्रस्तावना (प्रक्रिया नियमावली) तथा सामान्य सहायक सारणियाँ दी गई हैं। भाग-1 के प्रथम अनुभाग (पृष्ठ 1-54) में 1 (a) से 1(k) तक सामान्य सहायक सारणियाँ दी गई हैं। यह सामान्य सहायक सारणियाँ यू०डी०सी० के शक्तिशाली संश्लेषण तंत्र का मुख्य भाग है तथा इनको अनुसूची की किसी भी वर्ग संख्या के साथ जोड़ा जा सकता है। यह सारणियाँ सूक्ष्म विचारों को वर्गीकृत करने की सबसे उपयुक्त तकनीक प्रदान करती हैं।

4.3.2 यू०डी०सी० मीडियम संस्करण के मुख्य परिवर्तन

इस संस्करण में सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है—मुख्य वर्ग "4 भाषाएँ" का मुख्य वर्ग "8 भाषाएँ, भाषा विज्ञान तथा साहित्य" के साथ विलय, जिससे वर्गांक 4 किसी अन्य विषय को वर्गीकृत करने के लिए उपलब्ध हो जाता है। कम्प्यूटर की अनुसूची को 681.3 "डेटा प्रोसेसिंग इक्विपमेन्ट" के अन्तर्गत विस्तारित किया गया है। वर्गांक 38 वाणिज्य (389 को छोड़कर) का 33 अर्थशास्त्र में विलय कर दिया गया है। समाजशास्त्र की समस्त अवधारणाओं को एवं वर्गांक 34 को अत्यधिक विस्तारित किया गया है। मुख्य वर्गों 5 विज्ञान तथा 6 प्रौद्योगिकी की अनुसूचियों को भी विस्तारित किया गया है।

नोट-

अन्तरिक्ष विज्ञान की विस्तृत अनुसूची को 629.7 के अन्तर्गत समाहित किया गया है। विविध वर्ग में भी अनेक परिवर्तन किये गये हैं।

दशा सम्बन्ध तथा योजक चिह्नों के अन्तर्गत दो नये चिह्नों को शामिल किया गया है। दोहरे कोलन (: :) का प्रयोग यद्यपि सम्बन्धों को दर्शाने के लिए ही किया जाता है किन्तु इससे दोनों पक्षों का क्रम अपरिवर्तनीय (Irreversible) हो जाता है। इसी प्रकार लघु कोष्ठक का प्रयोग बीजीय उपवर्ग बनाने के लिए किया गया है।

उदाहरणार्थ—(71 + 72) (05) योजना तथा वास्तुकला की पत्रिका। पूर्व प्रकाशित संस्करणों में इस प्रकार के उप-समूह बनाना संभव नहीं था जिसके कारण कई बार अस्पष्ट वर्गांक बन जाते थे। इस संस्करण में प्रयुक्त दो नवीन सामान्य सहायक हैं—

-03 (हाइफन शून्य तीन पदार्थ)

-05 (हाइफन शून्य पाँच व्यक्ति)

व्यक्तियों से सम्बन्धित सामान्य सहायक (-05), यू०डी०सी० संक्षिप्त संस्करण में सामाजिक विज्ञान के साथ प्रयुक्त-05 विशिष्ट सहायक से विकसित किया गया है। यू०डी०सी० प्रणाली से बाहर की संख्याओं को किसी भी यू०डी०सी० वर्ग संख्या के पश्चात् तारक चिह्न (*) लगाकर जोड़ा जा सकता है।

उदाहरणार्थ—

625.711 (4)*E5 यूरोपीय राजपथ संख्या E5

वर्णानुक्रमिक सहायक का भी काफी उपयोग किया गया है।

7 Tagore	टैगोर की कलाकृतियाँ
820 Shak	शैक्सपीयर की साहित्यिक कृतियाँ

इस संस्करण में एपोस्ट्रॉफी '1/' 9 विशिष्ट सहायकों का भी विस्तृत प्रयोग किया गया है।

उदाहरणार्थ—

546.33	सोडियम (Na)
546.131	क्लोराइड (Cl)
546.33 '131	सोडियम क्लोराइड

पूर्व में प्रयुक्त सामान्य तथा विशिष्ट सहायकों को भी काफी विस्तारित किया गया है।

मूलपाठ की रूपरेखा में अन्य वर्ग संख्या के प्रति निर्देशों को तीर (→) के चिह्न द्वारा दर्शाया गया है।

उदाहरणार्थ—

347.176.1	नागरिकता, नागरिक विधि
→342.71	

इस उदाहरण में 342.71 का अर्थ "नागरिकों के संवैधानिक मूल अधिकार" है। इसी प्रकार पूर्व संस्करणों में संश्लेषण के लिए प्रयुक्त 'AS' निर्देश को बदलकर ≃ चिह्न का प्रयोग शुरू किया गया है। इस संस्करण के द्वितीय भाग में कम्प्यूटर द्वारा तैयार 1,20,000 प्रविष्टियों की अनुक्रमणिका को शब्दशः व्यवस्थित किया गया है।

4.3.3 यू०डी०सी० पॉकेट संस्करण

यू०डी०सी० का पॉकेट संस्करण 1999 में प्रकाशित हुआ। यूनीवर्सल डेसीमल क्लासीफिकेशन, पॉकेट संस्करण लन्दन : ब्रिटिश स्टैण्डर्ड्स इन्स्टीट्यूट, 1999 (PD1999 : 1999)-www.bsi.uk/disc

यह संस्करण मास्टर रेफरेन्स फाइल से लगभग 4000 प्रविष्टियाँ लेकर यू०डी०सी० प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं तथा विद्यार्थियों के अलावा लघु संग्रहों के वर्गीकरण तथा इलेक्ट्रॉनिक फाइलों को व्यवस्थित करने के लिए अत्यन्त उपयोगी है। अब इसे अल्प संशोधनों के साथ संक्षिप्त संस्करण के रूप में पुनः प्रकाशित कर दिया गया है अर्थात् यह संस्करण अब पॉकेट संस्करण नहीं बल्कि संक्षिप्त संस्करण के रूप में प्रयुक्त होता है।

4.3.4 प्रबन्धन, संशोधन तथा प्रयोग

पिछले 20 वर्षों में यू०डी०सी० के प्रबन्धन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। 1985 में यू०डी०सी० के लिए गठित एफ०आई०डी०/सी०सी० नामक कमेटी को यू०डी०सी० प्रबन्धन बोर्ड से बदल दिया गया। इस बोर्ड ने 1989 में आधुनिकीकरण के लिए यू०डी०सी० प्रणाली विकास कार्यबल का गठन किया। तत्पश्चात् जनवरी 1992 से बोर्ड का स्थान एक बहुराष्ट्रीय लाभनिरपेक्ष यू०डी०सी० सहायता संघ (UDC-Consortium) ने ले लिया जिसमें एफ०आई०डी० एक सदस्य के रूप में उपस्थित थी। इसके अन्य सदस्य स्पेन, ब्रिटेन, नीदरलैण्ड, बेल्जियम तथा जापान से हैं। अपनी विकास यात्रा में पहली बार यू०डी०सी० प्रणाली के लिए आई०सी० मैकिल्वेन को 1993 में पूर्णकालिक संपादक का प्रभार सौंपा गया है। सन् 2006 से मानिया आईनेस कोर्डेरियो इसकी मुख्य सम्पादिका है।

यू०डी०सी० में संशोधन की प्रक्रिया सतत् किन्तु धीमी गति से चलती है। इसके प्रस्तावित परिवर्तनों को संघ द्वारा पी-नोट्स (P-Notes) के रूप में व्यापक रूप से प्रचारित किया जाता है। अन्तिम रूप से स्वीकृत संशोधनों को इसके वार्षिक प्रकाशन "एक्सटेंशंस एण्ड करैक्शंस टू द यू०डी०सी०" में शामिल किया जाता है।

यू०डी०सी० यूरोप तथा लेटिन अमेरिका के विशिष्ट पुस्तकालयों तथा सूचना केन्द्रों में अत्यन्त लोकप्रिय है। किन्तु भारत में अभी इसकी लोकप्रियता समुचित स्तर पर नहीं पहुँची है। यह विश्व की 23 से अधिक भाषाओं में पूर्ण या आंशिक रूप से प्रकाशित हो चुकी है। इन्टरनेट स्थित ऑनलाइन प्रसूचियों तथा वेबसाइट में प्रयोग हेतु यू०डी०सी० एक बेहतर विकल्प के रूप में उभर रही है। यह प्रणाली उत्तरोत्तर अधिकाधिक पक्षात्मक, आधुनिक तथा सही अर्थों में विश्वव्यापी होती जा रही है। अतः इसका भविष्य अत्यन्त आशाजनक है।

4.4 लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस क्लासीफिकेशन

Library of Congress Classification

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस क्लासीफिकेशन (एल०सी०सी०) का स्रोत सी०ए० कटर निर्मित "एक्सपेन्सिव क्लासीफिकेशन" (1893) को माना जा सकता है। इस प्रणाली में 29 भागों में विभाजित 21 वर्ग हैं जो कि 48 खण्डों के लगभग 11,000 पृष्ठों में वर्णित है। यह प्रणाली समन्वित अनुसूचियों की एक शृंखला बनाती है। प्रत्येक मुख्य वर्ग अपनी अलग आकृति, भौगोलिक प्रभागों व अनुक्रमणिका के साथ लगभग स्वतंत्र है। यह एक शुद्ध परिगणनात्मक वर्गीकरण है अर्थात् सम्पूर्ण वर्गांक प्रयोगार्थ उपलब्ध हैं तथा संश्लेषण के लिए बहुत कम प्रावधान है। इसकी अन्य प्रमुख विशेषता इसका लिटरेरी वारंट के सिद्धांत पर आधारित होना है। सभी वर्ग लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस में उपलब्ध साहित्य पर आधारित तथा

नोट-

उसी के लिए विकसित किये गये हैं। इसमें ज्ञान जगत के संघटन की कोई सैद्धान्तिक व्यवस्था नहीं है। यह प्रणाली "क्लासीफिकेशन प्लस" शीर्षक से सी०डी० रोम संस्करण में भी उपलब्ध हैं। इस संस्करण में अनुसूचियों के साथ लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस के विषय शीर्षक (एल०सी०एस०एच०) भी अनेकों अतिरिक्त प्रवेश अभिगमों के साथ दिये गये हैं। इसका प्रयोग करना तथा अपडेट करना अत्यन्त सरल है। इस प्रणाली के नवीनतम प्रकाशित संस्करण की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस, सब्जेक्ट कैटेलॉगिंग डिविजन प्रोसेसिंग सर्विसेज एल०सी० क्लासीफिकेशन आउटलाइन, 6वाँ संस्करण, वाशिंगटन डी०सी० एल०सी०, 1990 आई०एस०बी०एन० 0-8444-0884-8

इसके मुख्य वर्ग निम्नलिखित हैं—

A	विविध
B	दर्शनशास्त्र
C/F/G	इतिहास एवं भूगोल
H/L	सामाजिक विज्ञान
M/P	मानविकी : P भाषा तथा साहित्य
Q/T	विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा चिकित्साशास्त्र
U/V	सैन्य विज्ञान
Z	पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान

I, O, W, X तथा Y अक्षर अभी खाली हैं। प्रत्येक मुख्य वर्ग को वर्णानुक्रम में पुन: विभाजित किया गया है। उदाहरणार्थ—

QA	गणित QD रसायन विज्ञान
QB	खगोल विज्ञान QE भू-विज्ञान
QC	भौतिक विज्ञान QH जीव विज्ञान

हर वर्ग को पुन: अंकगणितीय संरचनाओं में विभाजित किया गया है। उदाहरणार्थ—

QA	1-937	गणित
	9-10.3	गणितीय तर्कशास्त्र
	75.5-76.95	कम्प्यूटर विज्ञान
	101-141.8	प्रारम्भिक गणित
	150-272	बीज गणित

दशमलव विस्तार का प्रयोग हाल ही में नये विषयों को समायोजित करने के लिए शुरू किया गया है। एल०सी० वर्ग संख्या का अन्तिम स्वरूप अति मिश्रित अंकन के प्रयोग के कारण काफी जटिल हो गया है। एक एल०सी० वर्ग संख्या को विषय वर्गीकरण के पश्चात् कटर की लेखक संख्या तथा प्रकाशन वर्ष से और आगे बढ़ाया जा सकता है जिससे वर्ग संख्या काफी लम्बी हो जाती है। उदाहरणार्थ—

HV	1481.S82 G34	स्वीडन में वृद्धावस्था पेंशन, लेखक पी० गाहर्टन
PS	1331. H4 1974	मार्क ट्वेन, लेखक ए० हेन्डरसन (1974)

नोट-

PR 3629, 216 द रेप ऑफ द लॉक, सम्पादक लॉगी तथा मैकहेनरी

QC 16.E5 अल्बर्ट आइन्स्टीन-एक भौतिक शास्त्री

4.4.1 प्रयोग, संशोधन एवं भविष्य

यद्यपि मूल स्वरूप तथा अन्य युक्तियों के दृष्टिकोण से यह प्रणाली वैज्ञानिक नहीं कही जा सकती तथापि पुस्तकालय क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय तीन प्रणालियों में इसकी गिनती की जाती है। यह प्रणाली पूर्णत: परिगणनात्मक है, यह तक कि इसमें रूप तथा स्थान सहायकों को भी विस्तारित किया गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह प्रणाली अत्यन्त लोकप्रिय है। दूसरे महाद्वीपों में भी कुछ पुस्तकालय इसका प्रयोग करते हैं। एक अनुमान के अनुसार, अमेरिका के 60 प्रतिशत शोध पुस्तकालय एल०सी०सी० का प्रयोग करते हैं। इसकी वर्ग संख्याएँ मार्क रिकॉर्ड तथा सी०आई०पी० डेटा के अलावा कुछ सहकारी तथा व्यवसायिक वाङ्मय सूचियों में भी दी जाती हैं।

यह प्रणाली निरंतर संशोधित की जाती है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस प्रणाली को बनाना तथा इसका मुख्य प्रयोग एक ही पुस्तकालय में किया जाता है। एल०सी०सी० में किये जाने वाले परिवर्तनों को इसकी त्रैमासिक पत्रिका 'एल०सी० क्लासीफिकेशन : एडीशन्स एण्ड चेन्जेज' में प्रकाशित किया जाता है। इस प्रणाली के सीडी रोम संस्करण का शीर्षक "क्लासीफिकेशन प्लस" है जो वार्षिक शुल्क पर उपलब्ध है तथा इसमें एल०सी० विषय शीर्षकों को भी सम्मिलित किया जाता है। सीडी संस्करण अत्यन्त आसान तथा उपयोगी है क्योंकि इसमें मुख्य शब्द (Key word), वर्ग संख्या, सन्निकट विकल्प (Proximity options) तथा बूलीयन ऑपरेटर की मदद से अपने विशिष्ट विषय की खोज की जा सकती है। किन्तु एल०सी०सी० की सम्पूर्ण प्रणाली अभी भी सीडी संस्करण के स्वरूप में नहीं लायी जा सकी है। तथापि यह कहा जा सकता है कि लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस के समर्थन के कारण इस प्रणाली का भविष्य अत्यन्त उज्जवल है।

4.5 कोलन क्लासीफिकेशन Colon Classification

वर्गीकरण के क्षेत्र में विशिष्ट भारतीय योगदान—कोलन क्लासीफिकेशन (सी०सी०) के विचार की उत्पत्ति तथा विकास 1924 से 1932 के मध्य हुआ तथा इस प्रणाली का प्रथम संस्करण मद्रास पुस्तकालय संघ द्वारा 1933 में प्रकाशित किया गया। डी०एस०आर० रंगनाथन (1892-1972) द्वारा निर्मित इस प्रणाली के अब तक 7 संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं।

इसका नवीनतम सप्तम संस्करण 1987 में प्रो० एम०ए० गोपीनाथ, जो कि उस समय डी०आर०टी०सी० बंगलुरु के प्रमुख तथा शारदा रंगनाथन एन्डाउमेन्ट फॉर लाइब्रेरी साइन्स के सचिव थे, के द्वारा संशोधित तथा सम्पादित किया गया था। इस संस्करण की प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं—

रंगनाथन, एस०आर० कोलन क्लासीफिकेशन, 7वाँ संस्करण संशोधन एवं संपादन एम०ए० गोपीनाथ, बंगलुरु शारदा रंगनाथन एन्डाउमेन्ट फॉर लाइब्रेरी साइन्स, 1987, भाग-1 xiv, 332 पृष्ठ

अभी हाल तक सप्तम संस्करण का केवल प्रथम भाग जिसमें अनुसूचियाँ तथा सामान्य एकल दिये हैं, प्रकाशित हुआ था तथा अनुक्रमणिका भाग केवल सीडी रोम संस्करण में उपलब्ध था। इस नये संस्करण में 10 प्रकार के मूल विषयों (Basic Subject) की पहचान की गई है—

1	प्रमुख मूल विषय (Main Basic Subject)	2	अप्रमुख मूल विषय (Non-Main Basic Subject)
1.1	पारंपरिक (Traditional)	2.1	प्रमाणिक वर्ग (Canonical Classes)
1.2	नव उत्पन्न (Newly Emerging)	2.2	प्रणाली संघटक
1.3	विलयित (Fused)	2.3	विशिष्ट संघटक
1.4	आसवित (Distilled)	2.4	पर्यावरण संघटक
1.5	विषय समूह (Subject Bundles)		
1.6	संकुलित (Agglometes)		

नवीन संस्करण में मूल विषयों की संख्या बढ़कर लगभग 750 हो गई है किन्तु पारंपरिक मूल विषयों की संख्या पिछले संस्करण के समान ही है।

1/9	नव-उत्पन्न प्रमुख विषय
A/M	विज्ञान
Δ	रहस्यवाद तथा आध्यात्मिक अनुभव
N/S	मानविकी
T/Z	सामाजिक विज्ञान

कुछ नये मूल विषय निम्न प्रकार हैं—

I	विषय जगत	4	जन संचार
BT	सांख्यिकी कैलकुलस	LT	शारीरिक व्यायाम तथा खेल
M4	लोहारगिरी (Smithy)	PW6	टंकण

इस संस्करण में कुछ गौण विषयों को भी मूल विषय के स्तर तक ले जाया गया है। सप्तम संस्करण में सामान्य एकलों के प्रकार तथा उनकी संख्या दोनों में महत्त्वपूर्ण बदलाव किये गये हैं। मुख्यत: पश्च-स्थापक सामान्य एकलों (PLIs) की नवीन अनुसूचियाँ निम्न प्रकार हैं—

सामान्य पदार्थ गुण एकल (अध्याय डी०एल०, पृ० 95-104)

सामान्य ऊर्जा एकल (अध्याय डी०के०, पृ० 93-95)

'पूर्व-स्थापक सामान्य एकल अब दोहरे उद्धरण चिह्न (") के साथ प्रयुक्त होते हैं। उदाहरणार्थ—

गणित की पत्रिका	B"m
रसायन विज्ञान का विश्वकोष	E"k

किन्तु इन नवीन प्रावधानों में सबसे महत्त्वपूर्ण है पर्यावरण उप-विभाजन (ई०डी०) (अध्याय डी०डी०, पृष्ठ 54-56) का वर्णन, जिन्हें किसी भी विषय के साथ '-9' 'हाइफन नौ' योजक चिह्न की सहायता से जोड़ा जा सकता है। उदाहरणार्थ—

Un4	अति उच्चता (High Altitude)
अति उच्चता अभियांत्रिकी	D-8Un4

इसी प्रकार,

Y3 11	ग्रामीण
ग्राम्य अर्थशास्त्र	X-9Y311

इस संस्करण में जोड़े गये अन्य महत्त्वपूर्ण प्रावधान निम्नांकित हैं—

प्रथम तथा द्वितीय प्रकार के स्पेसियेटर जिनको क्रमशः '–' हाइफन तथा '=' समानता योजक चिह्न के साथ विषय के आगे जोड़ा जा सकता है। उदाहरणार्थ—

आंशिक सम्प्रभू राज्य- W, 1-12

अंग्रेजी भाषा की बोलियाँ P, 111 = d

वर्ण युक्त साधन का काफी प्रयोग किया गया है तथा बहुपदी शब्दों (Multinomial Terms) को जोड़ने के लिए '+' योजक चिह्न का प्रयोग किया गया है। उदाहरणार्थ—

शैक्सपीयर रचित किंग लियर 0, 111, 2 J64, K+L

दशा सम्बन्धों हेतु प्रयुक्त शून्य (0) अंक के स्थान पर ऐंपरसेंड (&) का प्रयोग शुरू किया गया है तथा एक नए दशा सम्बन्ध 'उपकरण दशा सम्बन्ध' की भी पहचान की गई है। उदाहरणार्थ—

इंजीनियरों के लिए गणित B&bD

विज्ञान के अध्ययन की गणितीय विधियाँ A&e B

इस नवीन संस्करण में मुख्य वर्ग तथा व्यक्तित्व श्रेणी के प्रथम स्तर (1P1) के मध्य अल्पविराम (,) चिह्न लगाना आवश्यक हो गया है। उदाहरणार्थ—

बाल मनोविज्ञान S, 1

संस्कृत भाषा P, 15

इस संस्करण का एक अन्य महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि पदार्थ की मूलभूत श्रेणी के तीन विभिन्न प्रकारों की खोज की गई है। जैसे—

पदार्थ-गुण (Matter-Property) [MP]

पदार्थ-विधि (Matter-Method) [MM]

पदार्थ-सामग्री (Matter-Material) [MMt]

छठे संस्करण में ऊर्जा श्रेणी में वर्णित अधिकतम एकलों को इस संस्करण में पदार्थ-गुण श्रेणी के अन्तर्गत रूपान्तरित कर दिया गया है। उदाहरणार्थ—

	सी०सी०-6	सी०सी०-7
पुस्तकालय वर्गीकरण	2 : 51	2 : 51
मानव शरीर विज्ञान	L : 3	L : 3
संवैधानिक इतिहास	V : 2	V : 2
भारत का संवैधानिक इतिहास	V44 : 2	V,44 : 2

4.5.1 सप्तम संस्करण में प्रयुक्त अंकन

इस संस्करण में पिछले छठे संशोधित संस्करण से पांच अधिक अंकों का प्रयोग किया गया है—

+ = " * तथा &

इस प्रकार सातवें संस्करण के अंकन में 74 अंकों (60 सार्थक तथा 14 संकेतक अंक) का प्रयोग किया गया है। इन्हें निम्नलिखित प्रजातियों में विभक्त किया जा सकता है—

1. A/Z रोमन दीर्घ अक्षर

नोट-

2.	Δ	ग्रीक अक्षर डेल्टा	01
3.	0/9	इन्डो-अरेबिक संख्यांक	10
4.	a/z	रोमन लघु अक्षर (i, l, o को छोड़कर)	23
5.	* + " ←	संकेतक अंक (पूर्व स्थापन मान के साथ)	04
6.	() & ' . : ; , - = →		10

सी०सी० का अंकन आधार किसी भी वर्गीकरण प्रणाली से विस्तृत है। इसी कारण अनेक बार निर्मित वर्ग संख्याएँ अत्यन्त जटिल हो जाती हैं तथा उनका स्वरूप बीजगणितीय समीकरणों की तरह लगने लगता है। डी० रंगनाथन ने छोटे तथा आसान वर्गांकों की कीमत पर ग्राह्यता (Hospitality) तथा सहविस्तारितता (Co-extensiveness) को प्रमुखता दी है।

इस नये संस्करण में अनेक आन्तरिक विसंगतियों के साथ-साथ अत्यधिक मुद्रण दोष भी हैं। तथापि, अनेकों नवीन प्रावधानों के कारण वर्गीकरण के क्षेत्र में इसकी उपयोगिता बनी रहेगी। सी०सी० वर्ग संख्याओं के स्व-संश्लेषण (Automatic Synthesis) के लिए डी०आर०टी०सी० बैंगलुरु में विशिष्ट प्रणालियों का विकास किया जा रहा है।

4.5.2 सी०सी०-7 की अनुक्रमणिका

सी०सी०-7 की यंत्र पठनीय अनुक्रमणिका सिन्डेक्स (CINDEX) नाम से 2002 में प्रकाशित हुई थी। इसकी परिकल्पना तथा विकास यूनेस्को के विनाइसिस (WINISIS) (1.4 पैकेज में) शारदा रंगनाथन एन्डाउमेन्ट फॉर लाइब्रेरी साइन्स द्वारा किया गया है।

4.5.3 संशोधन, प्रयोग तथा वर्तमान स्थिति

भारत की राष्ट्रीय वर्गीकरण प्रणाली के रूप में प्रायोजित किये जाने के बावजूद देश में लगभग 24 प्रतिशत पुस्तकालयों में ही इसका प्रयोग किया जाता है। सी०सी० की वर्ग संख्याएँ भारत की राष्ट्रीय वाङ्मय सूची में भी दी जाती हैं। फिर भी भारत में डी०डी०सी० ही अधिक लोकप्रिय है। सी०सी० केवल एक व्यक्ति द्वारा रचित वर्गीकरण प्रणाली तक ही सिमट कर रह गई है। इसके विकास के लिए कोई राष्ट्रीय सलाहकार समिति नहीं है जो इसके संशोधनों तथा उनके प्रकाशन का कार्य कर सके।

साथ ही, इसके आठवें संस्करण के लिए भी कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। अत: कहा जा सकता है कि इस प्रणाली का भविष्य किसी संगठित प्रयास के अभाव में अधिक उज्जवल नहीं है।

4.6 बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन Bibliographic Classification

बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन (बी०सी०) की परिकल्पना 1910 में हेनरी एवलिन ब्लिस (1870-1955) द्वारा की गई थी किन्तु इसकी रूपरेखा 1935 में 'ए सिस्टम ऑफ बिब्लियोग्राफिक क्लासीफिकेशन' शीर्षक से प्रकाशित हुई। इसका प्रथम संस्करण चार खण्डों में 1940, 1947, 1952 तथा 1953 में प्रकाशित हुआ।

1967 में जे० मिल्स के नेतृत्व में यू०के० में ब्लिस क्लासीफिकेशन एसोसिएशन (बी०सी०ए०) बनाई गई। इसका प्रमुख उद्देश्य इस प्रणाली में समयानुकूल परिवर्तन करना तथा इसके प्रयोग को बढ़ावा देना था। इस संघ ने जे० मिल्स के सम्पादन में बी०सी० के द्वितीय संस्करण की दिशा में कार्य आरम्भ किया।

मिल्स, जे० एवं अन्य : ब्लिस बिब्लियोग्रॉफिक क्लासीफिकेशन, द्वितीय संस्करण लन्दन बाउकर सॉर, 1977 + (पूर्व प्रकाशित खण्ड बटरवर्थ, लन्दन से प्रकाशित हुए थे)

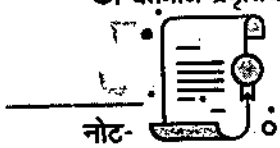

नोट-

बी०सी०-2, 22 भागों में विभाजित है, जिसके अनेक भाग प्रकाशित हो चुके हैं। आर्थिक तथा मानव संसाधनों की कमी के कारण प्रकाशन कार्य काफी धीमी गति से चल रहा है। तथापि बी०सी०-2 की अपनी कुछ नवीन विशेषताएँ तथा फायदे हैं जिनके कारण यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस संस्करण के लिए किये गये मिल्स के अथक व समर्पित प्रयासों के कारण इसे मिल्स का बी०सी०-2 भी कहते हैं। क्लासीफिकेशन रिसर्च ग्रुप (सी०आर०जी०) लन्दन इस प्रणाली के संशोधन में सक्रीय व महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

4.6.1 बी०सी० की प्रमुख विशेषता

बी०सी० की कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार हैं—

(i) ब्लिस के अनुसार इसमें मुख्य वर्गों का क्रम शैक्षणिक एवं वैज्ञानिक सर्वसम्मति (Educational and Scientific Consensus) पर आधारित है। उनका तो यहाँ तक मानना था कि उन्होंने ज्ञान-जगत में विषयों के स्थायी क्रम को खोज लिया था। स्थायी क्रम की खोज के इस दावे को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। क्योंकि ज्ञान-जगत में ऐसा कोई स्थायी क्रम हो ही नहीं सकता। यह क्रम समाज आधारित है तथा समय के साथ-साथ एक सामाजिक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था में जाने पर इसमें परिवर्तन होते रहते हैं। तथापि, बी०सी० में प्रयुक्त मुख्य वर्ग क्रम अत्यन्त प्रशंसनीय हैं।

(ii) ब्लिस ने विषय क्रम में भी विकल्पों का प्रावधान रखा है। जैसे—आर्थिक इतिहास को सामान्य इतिहास अथवा अर्थशास्त्र दोनों में से किसी के भी साथ रखा जा सकता है। इसी प्रकार धर्म को मुख्य वर्ग 9 या 2 किसी में भी रखा जा सकता है।

(iii) ब्लिस को आसान तथा लघु अंकन (Short Notation) में अधिक विश्वास था। अत: बी०सी० में उन्होंने रोमन दीर्घ अक्षरों तथा इन्डो-अरेबिक संख्याओं का ही प्रयोग किया है। किन्तु अंकन के अत्यधिक आग्रह के कारण इसमें प्राय: पदानुक्रम के सिद्धांत की अवहेलना हुई है।

उदाहरणार्थ—

U	प्रौद्योगिकी
UE	अभियांत्रिकी (Engineering)
UHC	निर्माण (Construction)
UJ	वास्तुकला (Architecture)

(iv) इस प्रणाली में पूर्वव्यापी अंकन (Retroactive Notation) प्रयुक्त हुए हैं जिनको उल्टा जोड़ा जा सकता है। उदाहरणार्थ—

2 HL	रंगीन सामग्री (Coloured Material)
2 P	टेलीविजन
2 PHL	रंगीन टेलीविजन

(v) यह नवीनतम सामान्य वर्गीकरण प्रणाली है जो रंगनाथन के पक्ष विश्लेषण तथा सहायक अनुक्रम के आधुनिक सिद्धान्तों पर आधारित है। इसके बावजूद इसमें रंगनाथन की अनेकों जटिलताओं तथा कमियों से परहेज किया गया है। अत: कहा जा सकता है कि इसमें अन्य प्रणालियों की अच्छाइयों को ग्रहण करने के कारण अनेक अद्वितीय एवं प्रशंसनीय लक्षण विद्यमान हैं। इस प्रणाली ने

वर्गीकरण के सिद्धान्त तथा व्यवहार के बीच के अन्तर को मिटा दिया है।

4.6.2 संरचना, सहायक सारणियाँ तथा प्रयोग

बी०सी०-2 में वर्णित मुख्य वर्ग निम्नलिखित हैं—

A	दर्शनशास्त्र	K	सामाजिक विज्ञान
AL	तर्कशास्त्र	KA	समाजशास्त्र
AM	गणित	L/O	इतिहास
B	भौतिक विज्ञान	P	धर्म (वैकल्पिक Z)
C	रसायन विज्ञान	Q	समाज कल्याण
D	खगोल विज्ञान	R	राजनीति विज्ञान
E	जीव विज्ञान	S	विधि (Law)
F	वनस्पति विज्ञान	T	अर्थशास्त्र
G	जन्तु विज्ञान	U	प्रौद्योगिकी
H	मानव, मानव विज्ञान	V	ललित कला
I	मनोरंजन	W	भाषा एवं साहित्य
J	शिक्षाशास्त्र	Z	धर्म (वैकल्पिक P)

इसके अतिरिक्त बी०सी०-2 में 6 सहायक सारणियाँ हैं—

1. सामान्य उप-विभाग
2. व्यक्ति
3. स्थान
4. भाषाएँ
5. जातीय समूह
6. कालावधि (Period of time)

इस प्रणाली के दो मुख्य वर्ग J शिक्षाशास्त्र तथा Q समाज कल्याण, अत्यन्त विस्तृत एवं सशक्त हैं। मुख्य वर्ग J का द्वितीय संस्करण प्रकाशित हो चुका है। इसने अन्य वर्गीकरण प्रणालियों विशेषकर, डी०डी०सी० 20 में 370 शिक्षाशास्त्र की अनुसूची को काफी प्रभावित किया है। इसी कारण इस प्रणाली को शिक्षा महाविद्यालयों तथा कल्याण विभाग के विशिष्ट पुस्तकालयों में वरीयता दी जाती है। इसको यूरोप, ऑस्ट्रेलिया तथा अफ्रीका के लगभग 90 पुस्तकालयों में प्रयोग में लाया जाता है। यह पक्षात्मक वर्गीकरण प्रणाली के शिक्षण हेतु एक मॉडल तथा थिसॉरस बनाने के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

प्रत्येक खण्ड की शृंखला अनुक्रमणीकरण पद्धति द्वारा निर्मित अलग अनुक्रमणिका है। सम्पूर्ण प्रणाली के पूरा हो जाने के पश्चात् समुच्चयात्मक अनुक्रमणिका (Cumulative Index) प्रकाशित की जायेगी। बी०सी०-2 को जे० मिल्स द्वारा सी०आर०जी० के सदस्यों की मदद से निरन्तर संशोधित किया जा रहा है। यह एक अत्यन्त प्रतिभाशाली प्रणाली है तथा भविष्य में इसको इसका समुचित स्थान मिलने की पूर्ण संभावना है।

4.7 बॉर्ड सिस्टम ऑफ ऑर्डरिंग Board System of Ordering

यू०डी०सी० के अलावा बॉर्ड सिस्टम ऑफ ऑर्डरिंग (बी०एस०ओ०) ही ऐसी प्रणाली है जिसे शुरू से ही एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन द्वारा प्रायोजित किया गया। बी०एस०ओ० को यूनेस्को द्वारा एफ०आई०डी०/ बी०एस०ओ० पैनल के तकनीकी सहयोग से 1971 में अपने यूनीसिस्ट प्रोग्राम के लिए एक स्विचिंग भाषा के रूप में विकसित किया गया। स्विचिंग भाषा से तात्पर्य एक ऐसी माध्यमिक भाषा से है जो एक अनुक्रमणीकरण भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरण का कार्य करती है। इसलिए यह

सामान्य अर्थों में एक वर्गीकरण प्रणाली नहीं अपितु सूचना पुनर्प्राप्ति प्रणालियों या वर्गीकरण प्रणालियों के मध्य सूचना के आदान-प्रदान के एक उपकरण के रूप में कार्य करती है।

4.7.1 संरचना

बी०एस०ओ० पैनल ने मुख्य रूप से एरिक जे० कोट्स तथा जी०ए० लॉयड के अधीन काम करते हुए 1975 में इसका प्रथम प्रारूप पूरा किया। अब इसका निम्नलिखित संस्करण उपलब्ध है—

कोट्स एरिक जे० एवं अन्य, बॉर्ड सिस्टेम ऑफ ऑर्डरिंग (बी०एस०ओ०) : तीन 3.5 इन्च डिस्क एक०एस० डॉस फॉर्मेट में : हॉर्ट, यू०के०, बी०एस०ओ० पैनल।

बी०एस०ओ० के मुख्य विषय क्षेत्र निम्न प्रकार हैं—

100	ज्ञान, सामान्य रूप में	500	मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान
200	विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी (एकीकृत रूप में)	600/890	प्रौद्योगिकी
300	प्राणी विज्ञान	910	भाषा एवं साहित्य
460	शिक्षाशास्त्र	940	कला
480	खेल एवं क्रीड़ा	970	धर्म

इस प्रणाली में कुल मिलाकर लगभग 6800 व्यापक उपवर्गों के अलावा दो सामान्य पक्षों—स्थान व समय की अनुसूचियाँ भी दी गई हैं। यह सहस्त्रांश (1000 से विभक्त) तथा शतांश (100 से विभक्त) संख्यांकों के शुद्ध अंकन को 3, 2, 3 के पैटर्न में प्रयुक्त करती है। इसमें केवल दो योजक चिह्न हाइफन (-) तथा अल्प विराम (,) प्रयुक्त होते हैं। यह पक्ष विश्लेषण के आधुनिक सिद्धान्तों पर आधारित एक पक्षात्मक प्रणाली है जिसमें संश्लेषण का समुचित प्रावधान है। इसमें लिटरेरी वारंट के स्थान पर संस्थागत वारंट (Institutional Warrant) का प्रयोग किया गया है। यह पारंपरिक तथा बहुविषयी (Multidisciplinary) क्षेत्रों के साथ-साथ मिशन आधारित विषयों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

उदाहरणार्थ—

कृषि जीव विज्ञान (Agriculture Biology)	360,20
पर्यावरण प्रदूषण	395,60
रासायनिक प्रदूषण (जहाँ रसायन-230)	395, 60-230
कृषि अर्थशास्त्र	360-580

इस प्रकार हाइफन (-) दंशा सम्बन्ध के चिह्न की तरह प्रयुक्त होता है। साथ ही यह A/Z अंकन के अन्य स्थानों पर प्रयोग को भी सुनिश्चित करता है।

4.7.2 प्रयोग

यह प्रणाली केवल 3 × 5" की फ्लॉपी में ही उपलब्ध है तथा इससे भी बड़ी विडम्बना यह है कि यह आज एक स्विचिंग भाषा के रूप में प्रयुक्त नहीं हो रही है जिस उद्देश्य के लिए यह बनाई गई थी। फिर भी कुछ पुस्तकालयों में इसे पुस्तकों को सेल्फ पर व्यवस्थित करने के लिए प्रयुक्त किया जा रहा है। इस पर अब और कोई शोध नहीं किया जा रहा है। तथापि मुख्य वर्गों को व्यवस्थित करने के क्रम तथा विषय संश्लेषण व आसान अंकन के कारण इस प्रणाली की उपयोगिता बनी रहेगी।

नोट-

4.8 सामान्य वर्गीकरण प्रणालियों में शोध की प्रवृत्तियाँ
(Research Trends in General Classification Systems)

सन् 1980 के दशक की शुरुआत में जब सूचना कार्य के लिए कम्प्यूटर के अधिकाधिक प्रयोग के नये रास्ते खोजे जा रहे थे, तब वर्गीकरण सम्बन्धी अध्ययनों में कुछ धीमापन प्रतीत होने लगा। कम्प्यूटर डेटाबेसों में सूचना पुनर्प्राप्ति के इतने अधिक अभिगम बिन्दु उपलब्ध थे कि प्रयोक्ताओं को लगने लगा कि इनमें सूचना उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार ही व्यवस्थित की गई है। मुख्य शब्द (Key words) खोज के तरीके को सुविधाजनक तथा उपयुक्त माना जाने लगा। इसलिए किसी वर्गीकरण प्रणाली के उपयोग की आवश्यकता ही प्रतीत नहीं हो रही थी। कुछ अति उत्साही कम्प्यूटर विशेषज्ञ तो पुस्तकालय विज्ञान के पाठ्यक्रम से वर्गीकरण संबंधी विषयों को हटाने की बात करने लगे। किन्तु 1980 के दशक के अन्त तक आते-आते ऑनलाइन प्रसूची में वर्गीकरण की उपयोगिता का महत्त्व स्पष्ट होने लगा तथा कम्प्यूटर आधारित सूचना पुनर्प्राप्ति में परिशुद्धता तथा पुनर्स्मरण अनुपात बढ़ाने में वर्गीकरण का महत्त्व सिद्ध होने लगा। इसके परिणामस्वरूप, आज वर्गीकरण सम्बन्धी अध्ययनों में सबसे महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति ऑनलाइन सार्वजनिक अभिगम प्रसूची (ऑपेक) में वर्गीकरण का प्रयोग है। डी०डी०सी०, यू०डी०सी०, एल०सी०सी० तथा बी०बी०के० प्रणालियों के ऑनलाइन प्रसूची में प्रयोग की प्रभावशीलता को जाँचने के लिए अनेकों परीक्षण किये गये। आज अधिकतर सामान्य वर्गीकरण प्रणालियाँ विशेषकर डी०डी०सी०, यू०डी०सी० तथा बी०एस०ओ० इलेक्ट्रॉनिक माध्यम में भी उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त लगभग सभी प्रणालियों के संशोधन का कार्य अब कम्प्यूटर की मदद से ही किया जा रहा है। सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि सभी इन्टरनेट सर्च इन्जनों में वेब से सूचना पुनर्प्राप्ति के लिए प्राथमिक स्तर पर ही सही, वर्गीकरण का प्रयोग किया जा रहा है। वर्गीकरण प्रणालियों में शोध की अन्य महत्त्वपूर्ण प्रवृत्तियाँ निम्न प्रकार हैं—

1. वर्गीकरण प्रणालियों को विषय विकास की नवीन विधियों पर आधारित करना।
2. मानक तथा आधुनिक शब्दावली का प्रयोग करना।
3. सामान्य वर्गीकरण प्रणालियों को इस प्रकार विकसित करना जिससे वह एकसाथ सामान्य तथा विशिष्ट प्रणालियों की तरह कार्य कर सकें। अधिकतर सामान्य वर्गीकरण प्रणालियाँ अलग-अलग विस्तार के विभिन्न संस्करणों में उपलब्ध हैं।
4. वर्गीकरण प्रणाली को राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक बन्धनों से मुक्त करना जिससे उसे अन्य देशों तथा संस्कृतियों में भी अपनाया जा सके।
5. सहायक उप-विभाजनों (Auxiliary Sub-divisions) की और अधिक किस्मों/प्रजातियों की खोज करना।
6. अंकन को और अधिक बहुमुखी (Versatile) तथा सहज बनाना।
7. वर्गीकरण तथा उसके सिद्धान्तों की शब्दावली नियंत्रण के लिए अनुक्रमणीकरण भाषाओं तथा उनके उपकरण निर्माण हेतु प्रयोग करना।
8. कम्प्यूटर द्वारा वर्ग संख्याओं के स्वत: संश्लेषण के लिए विशेषज्ञ प्रणालियाँ (Expert system) का निर्माण करना।
9. शब्द आवृत्ति गणना (World Frequency Court) तथा विषय अनुक्रमणीकरण के क्षेत्र में नये प्रयोग करना।

नोट-

इस क्षेत्र में एक स्वस्थ प्रवृत्ति यह है कि एक-दूसरे के साथ प्रतिद्वन्द्विता तथा प्रतियोगिता के स्थान पर विभिन्न वर्गीकरण प्रणालियाँ तथा उनके सहयोगी संगठन सहयोग की भावना से कार्य करते हैं। यू०डी०सी० को वैज्ञानिक दृष्टि से अधिक पक्षात्मक बनाने के लिए यू०डी०सी० तथा बी०सी०-2 साथ-साथ कार्य कर रहे हैं। इन दोनों के मध्य सक्रिय सहयोग के परिणामस्वरूप यू०डी०सी० में 61 चिकित्साशास्त्र मुख्य वर्ग को बी०सी०-2 की तरह संघटित किया गया है। इसी तरह, यू०डी०सी० तथा डी०डी०सी० मिलकर संयुक्त रूप से स्थान सारणी बना रहे हैं। विभिन्न वर्गीकरण प्रणालियों के सम्पादकों को प्रतियोगी प्रणालियों के सम्पादक मण्डल में लिया जा रहा है।

यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि उपरोक्त सभी प्रवृत्तियाँ पक्षात्मक वर्गीकरण प्रणालियों के संदर्भ में परिलक्षित हो रही हैं। पिछले काफी समय से पुस्तकालय व्यवसायियों के बीच ज्ञान की नवीनतम अवधारणाओं को अभिव्यक्त करने वाली एक नयी पक्षात्मक वर्गीकरण प्रणाली की आवश्यकता महसूस की जा रही है। अनेक विद्वानों का यह मानना है कि ऐसे एक अवसर को 1960 के दशक में खो दिया गया जब ब्रिटेन में अनेक नये विश्वविद्यालय खोले गये थे। दूसरा ऐसा अवसर तब आया जब ब्रिटिश तथा फ्रेंच राष्ट्रीय पुस्तकालयों ने कुछ समय पूर्व अपने नये भवनों में पदार्पण किया।

अगस्त 1990 में जर्मनी में हुई इन्टरनेशनल सोसाइटी फॉर नॉलेज ऑर्गनाइजेशन (इस्को) की प्रथम कॉन्फ्रेन्स में एरिक डी० ग्रोलियर ने एक एकीकृत वर्गीकरण प्रणाली तथा उसके सामान्य सिद्धान्तों पर जोर दिया। अपने विशाल परिमाण तथा अत्यधिक आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता के कारण यह कार्य अत्यन्त कठिन है। एक नयी वर्गीकरण प्रणाली के विकास का कार्य इसलिये भी नहीं हो पाता क्योंकि पुस्तकालयाध्यक्ष प्राय: अनेक कारणों से पुरानी तथा अपर्याप्त वर्गीकरण प्रणाली ही जारी रखना चाहते हैं। यदि किसी पुस्तकालय में कोई वर्गीकरण प्रणाली प्रयुक्त हो रही है तो उसे बदलना आसान कार्य नहीं, चाहे दूसरी प्रणाली कितनी भी कार्यकुशल एवं वैज्ञानिक क्यों न हो। इसलिए अब कोई भी नयी सामान्य वर्गीकरण प्रणाली नहीं बनाई जा रही है जबकि अनेकों विशिष्ट प्रणालियाँ जब-तब बनती रहती हैं।

4.9 पारंपरिक वर्गीकरण प्रणाली का इंटरनेट आधारित सूचना खोज में अनुप्रयोग (Application of Traditional Classification System in Internet Based Information Search)

वर्ल्ड वाइड वेब (www) में सूचना खोजने के लिए पारंपरिक वर्गीकरण प्रणालियाँ; जैसे डी०डी०सी०, यू०डी०सी० तथा एल०सी०सी० का प्रयोग काफी उपयोगी हो सकता है। अब अधिकतर प्रणालियाँ इलेक्ट्रॉनिक संस्करणों में भी उपलब्ध हैं जिनमें प्रिन्टेड संस्करणों की तुलना में अनेक अतिरिक्त विशेषताएँ होती हैं। आजकल जिन सेवाओं में इन प्रणालियों का उपयोग किया जा रहा है, उनमें से ज्यादातर अवाणिज्यिक (Non-commercial) तथा सीमित विस्तार की सेवाएँ हैं। कुछ ऐसी सेवाओं के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

डी०डी०सी०	वेब्रेरी (webrary) तथा यू०के० वेब लाइब्रेरी
एल०सी०सी०	साइबर स्टैक्स (cyber stacks)
एल०सी०एस०एच०	स्काउट रिपोर्ट आर्काइव्ज (Scout Report Archives)
यू०डी०सी०	एन०आई०एस०एस०

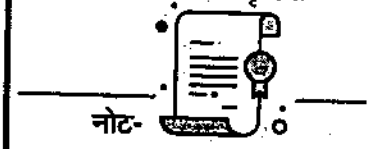

वेब्रेरी अमेरिका में मार्टन ग्रोव सार्वजनिक पुस्तकालय द्वारा प्रदान सेवा है। वेब्रेरी लिंक्स मेनू डी०डी०सी० द्वारा व्यवस्थित वर्ग संख्याओं के अन्तर्गत सर्वाधिक उपयोगी संदर्भ तथा सूचना वेबसाइट तक ले जाता है। इसके अन्तर्गत डी०डी०सी० के दस में से किसी एक मुख्य वर्ग का चुनाव करने पर—

000-099 कम्प्यूटर विज्ञान, पुरस्कार, पुस्तकालय विज्ञान, पत्रकारिता, संग्रहालय

100-199 मनोविज्ञान, नीतिशास्त्र

200-299 धर्म

प्रत्येक मुख वर्ग को उत्तरोत्तर विभक्त करते जाते हैं। उदाहरणार्थ—

000- 010- 202- आदि

कम्प्यूटर वाङ्मयसूची पुस्तकालय विज्ञान

वर्ग संख्या 020 निर्धारित करने पर सबसे पहले निम्नलिखित दो साइट्स मिलती हैं—

अमेरिकन लाइब्रेरी एसोसिएशन (www.ala.org)

तथा लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस इन्फॉर्मेशन सिस्टम (www.loc.gov)

द यू०के० वेब लाइब्रेरी की सेवा स्कूल ऑफ कम्प्यूटिंग एण्ड इन्फॉर्मेशन टेक्नॉलाजी, यूनिवर्सिटी ऑफ वोलवेरहेम्पटन (University of wolverhampton) द्वारा प्रदान की जाती है। इसमें खोजकर्ता को मात्र अपने विषय की वर्ग संख्या देनी होती है। उदाहरण 378 (उच्च शिक्षा हेतु डी०डी०सी० वर्ग संख्या) के अन्तर्गत 408 प्रविष्टियाँ दी गई हैं। इसके उपविभाजनों को देखने पर 378.42753 वर्ग संख्या के अन्तर्गत अनेकों साइट्स दी गई हैं; जैसे लिवरपूल जॉन मूर्स विश्वविद्यालय। इस सेवा की एक कमी यह है कि इसमें डी०डी०सी० वर्ग संख्याओं की कोई ऑनलाइन अनुक्रमणिका नहीं बनाई गई है।

साइबर स्टैक्स (एस०एस०) (www.public.iastae.edu/~cyberstacks/homepage.html) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के कुछ निश्चित क्षेत्रों में वर्ल्ड वाइड वेब तथा दूसरे इन्टरनेट संसाधनों का महत्त्वपूर्ण संकलन है। यह संकलन एल०सी०सी० प्रणाली द्वारा वर्गीकृत है। वेब्रेरी की ही तरह इसमें भी विभिन्न स्रोतों को पहले मुख्य वर्गों में विभक्त किया गया है। उदाहरणार्थ—

G	भूगोल, मानवशास्त्र तथा मनोरंजन
H	सामाजिक विज्ञान
J	राजनीति विज्ञान
Q	विज्ञान

इसके पश्चात् उप-विषयों में और अन्त में विशिष्ट विषय श्रेणी में वर्गीकरण किया गया है। उदाहरणार्थ—T प्रौद्योगिकी मुख्य वर्ग के अन्तर्गत TL787-4050 अन्तरिक्ष-यानिकी विशिष्ट विषय श्रेणी दी गई है जिसके अन्तर्गत नासा (NASA) अन्तरिक्ष यात्रियों की जीवनियाँ दी गई हैं। साइबर स्टैक्स (एस०एस०) में प्रत्येक स्रोत के साथ एक संक्षिप्त वर्णन तथा यदि आवश्यक हो तो उस स्रोत के प्रयोग से सम्बन्धित दिशा-निर्देश भी दिये गये हैं।

एन०आई०एस०एस० (नेशनल इन्फॉर्मेशन सर्विसेज एण्ड सिस्टम्स) (www.niss.ac.uk) शिक्षाशास्त्र पर सूचना प्रदान करने वाली सेवा है जो 'डायरेक्टरी ऑफ नेटवर्क्ड रिसोर्सेज' को संघटित करने के लिए यू०डी०सी० का प्रयोग करती है। कोई भी खोजकर्ता वर्ग संख्यानुसार पदानुक्रम में नीचे की ओर विशिष्ट विषय की खोज कर सकता है। अन्यथा एक वैकल्पिक अभिगम के रूप में यू०डी०सी० वर्ग

संख्यानुसार 'पुस्तकालय शेल्फ' का अवलोकन कर सकता है। उदाहरणार्थ—

मुख्य वर्ग 3 सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत

34	विधि	355	सैन्य विज्ञान, युद्ध
343	आपराधिक कानून	36	समाज कल्याण
35	सरकार	37	शिक्षाशास्त्र
352	स्थानीय सरकारें		

एक विशिष्ट वर्ग संख्या के अन्तर्गत उससे सम्बन्धित संसाधनों की सूची मिल जाती है। इन सेवाओं से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि वेब्रेरी, द यू०के० वेब लाइब्रेरी, एन०आई०एस०एस० तथा दूसरी अन्य सेवाएँ वर्ग संख्या खोज के अलावा अन्य सुविधाएँ जैसे मुख्य शब्द खोज भी प्रदान करती हैं। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है ये सेवाएँ याहू या अल्टा-विस्टा जैसे वाणिज्यिक सर्च इन्जनों की तुलना में बहुत कम संसाधनों को प्रदर्शित करती हैं। इनको सर्च इन्जन के बजाय खोज निर्देशिकाएँ या प्रसूचियाँ कहना अधिक उचित होगा। वाणिज्यिक सर्च इन्जन जहाँ खोज मापदण्डों को पूरा करने वाले अधिक-से-अधिक वेब पेजों को प्रदर्शित करते हैं, वहीं यह सेवाएँ विशिष्ट डेटाबेस या निर्देशिकाओं तक सीमित चयनित संसाधनों को ही प्रदर्शित करती हैं। इनके अन्तर्गत वेबसाइट्स सामान्यत: श्रेणीबद्ध होती हैं और इस प्रकार की निदेशिकाएँ पदानुक्रम में व्यवस्थित तथा प्रतिनिर्देशात्मक स्वरूप को अधिक प्रयोग में आती हैं। इन सेवाओं के विस्तार क्षेत्र के अन्तर को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। 'उच्च शिक्षा' विषय में खोज करने पर 'द यू०के० लाइब्रेरी' में 408 हिट हुए जबकि इसी विषय पर याहू द्वारा प्रदर्शित संसाधनों की संख्या 17,643 थी।

एस०ओ०एस०आई०जी० (सोशल साइन्स इन्फॉर्मेशन गेटवे) द्वारा उपलब्ध कराई जा रही खोज की वैकल्पिक विधियों में एक महत्त्वपूर्ण विधि ऑनलाइन थिसॉरस है। यह सेवा खोजकर्त्ता को खोज के लिए वैकल्पिक विषयों की सूची प्रदान करती है। यदि खोज के प्रथम प्रयास से बहुत कम या अप्रासांगिक परिणाम मिलते हैं तो इसकी मदद से अधिक संख्या में या अधिक प्रासांगिक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। इस थिसॉरस में एस०ओ०एस०आई०जी० की इन्टरनेट प्रसूची में प्रयुक्त शब्दों की पदानुक्रम में सूची दी गई है। उदाहरण के लिए "Offences" की प्रविष्टि के अन्तर्गत निम्नलिखित शब्द दिए गए हैं—

Offences

Broader Terms	Narrower Terms	Related Terms
Crime	Addiction Burglary	Criminals
	Burglary	Delinquency
	Child Abuse	Punishment
	Theft	
	Violence	
	War Crimes	

नोट-

4.10 विशिष्ट वर्गीकरण प्रणालियों का प्रयोग

Use of Special Classification System

कुछ विषय क्षेत्रों में, सामान्य की तुलना में विशिष्ट वर्गीकरण प्रणालियाँ तथा विषय-शीर्षक सूचियाँ अधिक प्रयुक्त होती हैं। उदाहरणार्थ एरिऑड्ने (Ariadne) जो कि वेब पर कम्प्यूटर विज्ञान के संसाधनों की एक उपयोग गाइड है, 'ए०सी०एम०' 'कम्प्यूटरिंग क्लासीफिकेशन सिस्टम' का प्रयोग करती हैं। ऑम्नी (ऑर्गेनाइज्ड मेडीकल नेटवर्क इन्फॉर्मेशन) जो कि स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शास्त्र विषयों से सम्बन्धित इन्टरनेट वेबसाइट की प्रसूची है, संसाधनों के अवलोकन के लिए एन०एल०एम० (नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन) वर्गीकरण प्रणाली एन०एल०एम० विषय शीर्षक तथा मेडीकल सब्जेक्ट हडिंग्स (MeSH) प्रयोग की सुविधा प्रदान करती है।

एडिनबर्ग इन्जीनियरिंग वर्चुअल लाइब्रेरी (ई०ई०वी०एल०) (www.eevl.ac.uk/paper1.html/) इन्जीनियरिंग इन्फॉर्मेशन इंकॉ द्वारा विकसित विशिष्ट वर्गीकरण प्रणाली प्रयोग में लाती है।

4.11 इंटरनेट संसाधनों के वर्गीकरण की समस्या तथा सम्भावनाएँ

Problem and Possibilities of Internet Resources in Classification

इलेक्ट्रॉनिक तथा इंटरनेट आधारित संसाधनों को व्यवस्थित करना एक वास्तविक समस्या है। वर्गीकरण के पारम्परिक उपकरण निश्चय ही एक सम्भावित निदान हो सकते हैं किन्तु अब तक के उनके प्रयोग मात्र प्रारम्भिक अवस्था में ही माने जा सकते हैं। इस दिशा में गम्भीर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। साथ ही इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों की विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर इन पारम्परिक प्रणालियों में ऐसी विशेषताएँ लायी जाएँ जिनसे यह सही अर्थों में वर्चुअल पुस्तकालयों से सूचना पुनर्प्राप्ति हेतु ज्ञान व्यवस्थापन के महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी उपकरण बन सकें।

हाइपर टेक्स्ट प्रलेख को पारम्परिक वर्गीकरण के स्थैतिक पदानुक्रम द्वारा समुचित रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। इंटरनेट के लचीलेपन तथा उसके प्रलेखों के प्रसंस्करण को अभिव्यक्त करने के लिए विषय पदानुक्रम में संयोजन के अतिरिक्त प्रावधान होने चाहिए। यहाँ तक कि मिश्रित वर्गीकरण (Cross Classification) जिसे परम्परागत वर्गीकरण में एक दोष माना जाता है, इसके लिए एक उपयोगी तकनीक बन सकती है। रॉबर्ट न्यूटन का मानना है कि 'रंगनाथन का सुस्पष्ट (Distinctive) तथा मूलभूत चिन्तन (Redical Thinking) जो उनकी अनेकों पुस्तकों व लेखों में निहित है तथा वर्गीकरण के सिद्धान्तों में निर्देशनात्मक परिवर्तन (Paradigm Shift) जिसकी उन्होंने शुरुआत की थी, की पूर्ण क्षमता का अब तक दोहन नहीं हो सका है। "रंगनाथन के अनुसार विश्लेषण के सिद्धान्त की पुनर्प्राप्ति सूचना की परिशुद्धता बढ़ाने के लिए प्रश्न को सूत्रबद्ध (Query) करने में अत्यन्त सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

इसमें कोई शक नहीं कि पुस्तकालय व्यवसायियों द्वारा सहकारी पुस्तकालय नेटवर्क के संसाधनों में वर्गीकरण का समुचित उपयोग किया जा रहा है। किन्तु सूचना के विस्तृत परिप्रेक्ष्य में अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

4.12 सरल ज्ञान संगठन प्रणाली

Simple Knowledge Organisation System (SKOS)

SKOS एक डेटा साझाकरण मानक है, जो ज्ञान प्रौद्योगिकी एवं अभ्यास के कुछ अलग-अलग क्षेत्रों को

जोड़ता है। SKOS का उद्देश्य बिखरे हुए समुदायों एवं सिमेंटिक वेब के बीच सेतु प्रदान करना है; जिसे ज्ञान संगठन के मौजूदा मॉडलों का सिमेंटिक वेब प्रौद्योगिकी संदर्भ में स्थानान्तरित करके बनाया जाता है। भविष्य को देखते हुए, SKOS, असंरचित सूचना के शोषण और विश्लेषण के बीच एक स्थान रखता है। सूचना का अनौपचारिक और सामाजिक रूप से मध्यस्थ संगठन, बड़े पैमाने पर अनौपचारिक एवं सामाजिक रूप से मध्यस्थ सूचना संगठन से सम्बन्धित होता है एवं ज्ञान का औपचारिक प्रतिनिधित्व करता है। यह आशा की जाती है कि पुस्तकालय में संचित अनुभव और संगठन ज्ञान को सुलभ सूचना विज्ञान और हस्तांतरणीय तकनीकी के भीतर लागू सिमेंटिक वेब के संदर्भ, एक तरह से मौजूदा सिमेंटिक वेब प्रौद्योगिकी का पूरक है। SKOS कई नए और मूल्यवान अनुप्रयोगों को सक्षम करेगा एवं प्रौद्योगिकी और अभ्यास दोनों में अनुसंधान और विकास की नई एकीकृत लाइनों के लिए नेतृत्व भी करेगा।

SKOS डेटा मॉडल ज्ञान संगठन प्रणाली को एक अवधारणा योजना के रूप में देखता है, जिसमें अवधारणाओं का एक सेट शामिल है। ये SKOS अवधारणा योजनाएँ और SKOS अवधारणाएँ यू०आर०आई० द्वारा पहचानी गयीं जो किसी को भी किसी-न-किसी संदर्भ में स्पष्ट रूप से संदर्भित करने में सक्षम बनाता है, व उन्हें वर्ल्ड वेब का हिस्सा बनाता है।

SKOS अवधारणाओं को किसी भी संख्या में लेक्सिकल (UNICODE) स्ट्रिंग्स के साथ लेबल किया जा सकता है; जैसे—"रोमांटिक प्रेम" के रूप में, किसी भी प्राकृतिक भाषा में अथवा अंग्रेजी या जापानी (यहाँ हिरागाना में लिखा गया है) के साथ किसी भी भाषा में इनमें से एक लेबल उस भाषा के लिए "पसंदीदा" लेबल के रूप में इंगित किया जा सकता है, एवं अन्य को "वैकल्पिक" लेबल के रूप में दर्शाया जा सकता है।

लेबल "छिपे हुए" भी हो सकते हैं, जो उपयोगी हैं। उदाहरण के लिए यहाँ एक ज्ञान संगठन सिस्टम की टेक्स्ट इंडेक्स के माध्यम से पूछताछ की जा रही है। लेक्सिकल, अधिक SKOS लेक्सिकल लेबलिंग गुण के लिए लेबलिंग करते हैं।

SKOS अवधारणाओं को एक या एक से अधिक अंकन (notations) सौंपी जा सकती हैं, जो कि लेक्सिकल कोड होते हैं।

ये कोड दी गई अवधारणा योजना के दायरे में अवधारणा को विशिष्ट रूप से पहचानने के लिए उपयोग किए जाते हैं जबकि, कम्प्यूटर सिस्टम के भीतर SKOS अवधारणाओं की पहचान करने के लिए URI पसंदीदा साधन हैं।

नोटेशन पहले से प्रयोग किए जा रहे अन्य पहचान प्रणालियों (जैसे—पुस्तकालय कैटलॉग में उपयोग किए जाने वाले वर्गीकरण कोड) के लिए एक सेतु का कार्य करते हैं।

4.13 स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण

Automatic Book Classification

स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण, अर्थात् कम्प्यूटर द्वारा कॉल नम्बर का निर्माण, पुस्तकालय पेशेवरों के सपनों में से एक रहा है। कम्प्यूटरों के उद्भव के बाद और विशेष रूप से, कृत्रिम बुद्धि के विकास के बाद, स्वचालित वर्गीकरण में सफलता की उम्मीदें चरम पर पहुँच गई हैं। पुस्तकालय के कार्यरत सदस्यों को उम्मीद है कि कम्प्यूटर और सम्बन्धित प्रौद्योगिकी-आधारित उपकरण और तकनीक दस्तावेज को विषय एवं उप-विषयों की पहचान करने में, उपयुक्त आइसोलेट्स और नोटेशन की खोज

करने में जो तथा इन नोटेशनों को एक व्यापक कॉल नंबर में संश्लेषित करने में सक्षम हों। प्रारम्भ में वर्गीकरण के लिए कम्प्यूटरों की क्षमता के बारे में संदेह था। उदाहरण के लिए, 1999 में जायसवाल ने तर्क दिया कि एक कम्प्यूटर विषय सामग्री को पुस्तकालयाध्यक्षों की भाँति निर्धारित नहीं कर सकता है। इसलिए, कम्प्यूटरीकरण द्वारा उत्पादित स्वचालित अनुक्रमणिका को केवल शीर्षक अनुक्रमणिका या कीवर्ड-ट्रंकेशन और स्टेमिंग सम्भावित समाधान हो सकते हैं; हालाँकि, एक मजबूत समाधान के लिए आगे की जाँच आवश्यक है। तकनीकी विकास के कारण, स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण के विकास की दिशा में कार्यवाही और प्रयास के साथ एक नया सकारात्मक दृष्टिकोण उभरा है, जो इस खण्ड में समीक्षा किए गए साहित्य के माध्यम से परिलक्षित होता है।

शोधकर्ताओं ने एक शक्तिशाली स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण प्रणाली को डिजाइन करने के अनेक प्रयास किए, लेकिन वे कोई भी स्वीकार्य परिणाम नहीं ला सके। मुख्य समस्या दस्तावेजों के शीर्षकों का सफल स्वचालित विश्लेषण और विषय प्रस्तावों का पता लगाना था। विशुद्ध रूप से मानसिक प्रक्रिया होने के कारण, वर्गीकरण के लिए दस्तावेज शीर्षक का विश्लेषण करने के लिए मानव बुद्धि की आवश्यकता होती है, जो प्राकृतिक भाषा में है। इसके मूल विषय और अन्य पहलुओं, यदि कोई हों, का पता लगाने के लिए इसकी श्रेणी के साथ और सिद्धांतों के अनुसार उन पहलुओं का संश्लेषित करने के लिए एवं एक वर्ग संख्या का निर्माण करने के लिए अभिधारणाओं और सिद्धांत के अनुसार उन पहलुओं को संश्लेषित किया जाता है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (ए०आइ०) का उद्भव इस समस्या का समाधान हो सकता है। प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (एन०एल०पी०) तकनीकों के उपयोग से शीर्षकों के स्वचालित विश्लेषण में मदद मिलेगी और विशेषज्ञ प्रणाली ठीक उसी तरह काम करेगी जैसे वर्गीकरणकर्ता वर्ग का नंबर बनाने के लिए करता है, जो अधिक नियम, सिद्धांतों और अभिधारणाओं द्वारा निर्देशित होता है। बस, पाणिग्रही और प्रसाद (2003) ने एक शब्दावली प्रतिनिधित्व मॉडल के निर्माण की एक पद्धति का सुझाव दिया। एक स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण को विकसित करने के प्रयासों को जारी रखते हुए, पाणिग्रही और प्रसाद (2007) ने दस्तावेज के शीर्षक से पहलुओं की पहचान करने के लिए एक विधि का सुझाव दिया और पाँच मौलिक श्रेणियों, उनके सम्बन्धित नोटेशन, कनेक्टिंग प्रतीकों के सम्बन्ध में पहलू अनुक्रम को ठीक करने की तकनीकी आदि का प्रदर्शन किया। अभिधारणाओं एवं सिद्धांतों के आधार पर सामान्य रूप से पहलू सूत्र का पालन करने के लिए उनके सम्बन्धित श्रेणी के नाम का चयन करने की तकनीक व पहलू सूत्र को परिभाषित करने की विधि को भी समझाया गया है। दस्तावेज के शीर्षक का विश्लेषण करना (अर्थात् प्राकृतिक भाषा वाक्य के रूप में), संज्ञा वाक्यांशों को खोजना, अलग-अलग संख्याओं को चुनना, प्रतीक, ज्ञान के आधार से मूल विषय अंकन आदि स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण (पाणिग्रही, 2007a) के पद हैं। लेखक ने सुझाव दिया कि एक स्वचालित पुस्तक वर्गीकरण प्रणाली विकसित करने में विशेषज्ञ प्रणालियों और प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण घटकों का एकीकरण उपयोगी है।

एक अन्य प्रयास में, पाणिग्रही (2000a), एवं पाणिग्रही (2000b) ने चिकित्सा विज्ञान के विशेष संदर्भ के साथ कोलन वर्गीकरण के लिए एनालिटिको सिंथेटिक वर्गीकरण का एक ज्ञान प्रतिनिधित्व मॉडल विकसित किया और प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण तकनीकों का उपयोग करके स्वचालित वर्गीकरण के लिए एक विशेषज्ञ प्रणाली विकसित की। इसी तरह, किम और ली (2002) ने पुस्तकालय विज्ञान क्षेत्र के लिए एक स्वचालित वर्गीकरण प्रणाली विकसित की। इस प्रणाली में सीसी के पहलू वर्गीकरण सिद्धांतों का उपयोग किया गया। वर्गीकरण प्रणाली ने शीर्षक में प्रमुख शब्दों के आधार पर दस्तावेज के विषय की पहचान की और स्वचालित रूप से वर्ग संख्याएँ बनाईं।

नोट-

वांग (2009) ने देखा कि पुस्तकालय वर्गीकरण प्रणाली; जैसे—डी०डी०सी०, बड़े पदानुक्रम, डेटा विरलता और विषम वितरण सहित अत्याधुनिक पाठ का वर्गीकरण तकनीकों पर बड़ी बाधाएँ डालती हैं।

वास्तविक दुनिया के अनुप्रयोगों के लिए स्वीकार्य स्तर तक वर्गीकरण प्रभावशीलता में सुधार करने के लिए, लेखक ने एक इंटरेक्टिव वर्गीकरण मॉडल का प्रस्ताव दिया जो सीमित संख्या में उपयोगकर्ता इंटरेक्शन के लिए किसी भी गहराई के वर्ग की भविष्यवाणी करने में सक्षम था इसके अतिरिक्त लेखक ने कांग्रेस पुस्तकालय द्वारा 10 वर्षों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी डोमेन के भीतर बनाए गए बड़े ग्रंथ सूची संग्रह पर प्रयोग किए। अत: उन्होंने डी०डी०सी० संरचना को संतुलित श्रेणी वितरण एवं समतल पदानुक्रम द्वारा एक संतुलित आभासी ट्री (Tree) में बदलने के लिए एक पर्यवेक्षित मशीन-लर्निंग दृष्टिकोण के साथ ग्रंथ सूची डेटा की ओर अग्रसर डी०डी०सी० वर्ग संख्याओं के सवचालित असाइनमेंट के साथ प्रयोग किया।

4.14 टैक्सोनॉमी Taxonomy

'वर्गीकरण' एक पदानुक्रमित वर्गीकरण को संदर्भित करता है जिसमें अपेक्षाकृत अच्छी तरह से परिभाषित वर्ग व्यापक श्रेणियों के अंतर्गत निहित होते हैं। एक टैक्सोनॉमी विभिन्न टैगों के बीच अभिभावक बाल सम्बन्धों की एक पदानुक्रमित संरचना को निर्धारित या आवश्यक रूप से प्राप्त किए बिना श्रेणियाँ (प्रतयेयक टैग एक श्रेणी है) स्थापित करता है। टैग के समूहों से कम-से-कम ढीले पदानुक्रम प्राप्त करने के लिए तकनीकों पर काम किया गया है।)

टैक्सोनॉमी लोक के समर्थकों का दावा है कि वे अक्सर टैक्सोनॉमी के लिए बेहतर होते हैं; क्योंकि सूचनाओं को व्यवस्थित करने के तरीके को लोकतांत्रिक बनाती हैं। वे उपयोगकर्ताओं के लिए अधिक उपयोगी होती हैं क्योंकि वे डोमेन के बारे में सोचने के वर्तमान तरीकों को दर्शाती हैं, एवं डोमेन के बारे में अधिक जानकारी व्यक्त करती हैं। आलोचकों का दावा है कि लोकोनॉमी संदेहास्पद हैं और इसलिए उनका उपयोग करना कठिन है और वे क्षणिक प्रवृत्तियों को प्रतिबंधित कर सकते हैं जो किसी क्षेत्र के बारे में ज्ञात चीजों को गलत तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं।

2007 में प्रकाशित टैगिंग सिस्टम की जटिल गतिशीलता के एक अनुभवजन्य विश्लेषण से पता चला है कि स्थिर वितरण और साझा शब्दावली के आस-पास आम सहमति एक केन्द्रीय नियंत्रित शब्दावली के अभाव में भी उभरती है। सामग्री खोजने योग्य होने के लिए, इसे वर्गीकृत और समूहीकृत किया जाना चाहिए। हालाँकि यह माना जाता था कि टैग का वर्णन करने वाली सामग्री के सेट पर आम सहमति की आवश्यकता होती है (काफी हद तक एक जर्नल लेख के कीवर्ड की तरह), कुछ शोधों में पाया गया है कि बड़े टैक्सोनॉमी में सामान्य संरचनाएँ भी वर्गीकरण के स्तर पर उभरती हैं। तदनुसार, सहयोगात्मक टैगिंग के गणितीय मॉडल तैयार करना सम्भव है जो अधिकांश उपयोगकर्ताओं द्वारा साझा की गई शब्दावली में व्यक्तिगत टैग शब्दावली (व्यक्तित्व) से अनुवाद की अनुमति देता है।

टैक्सोनॉमी लोक वर्गीकरण से असम्बन्धित है, एक सांस्कृतिक प्रथा जिसे व्यापक रूप से मानवशास्त्रीय और लोककथाओं के कार्यों में प्रलेखित किया गया है। टैक्सोनॉमी की सांस्कृतिक रूप से आपूर्ति की जाती है, पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचरित होती है और अपेक्षाकृत स्थिर वर्गीकरण प्रणाली है जिसका उपयोग किसी संस्कृति में लोग अपने आस-पास की पूरी दुनिया (सिर्फ इंटरनेट नहीं) को समझने के लिए करते हैं।

टैक्सोनॉमी की संरचना या वर्गीकरण के अध्ययन को लोकसांख्यिकी कहा जाता है। ऑन्कोलॉजी की यह शाखा अत्यधिक संरचित टैक्सोनोमी या पदानुक्रम और शिथिल संरचित लोकोनॉमी के बीच

नोट-

प्रतिच्छेदन से सम्बन्धित है। यह पूछते हुए कि वर्गीकरण की एक प्रणाली के लिए दोनों के द्वारा कौन-सी सर्वोत्तम विशेषताएँ ली जा सकती हैं। फ्लैट-टैगिंग योजनाओं की ताकत एक वस्तु को दूसरे से सम्बन्धित करने की उनकी क्षमता है। लोकोनॉमी उपयोगकर्ताओं के बड़े असमान समूहों को बड़े पैमाने पर गतिशील सूचना प्रणालियों को सहयोगात्मक रूप से लेबल करने की अनुमति देता है। टैक्सोनॉमी की ताकत उनकी ब्राउजिंग क्षमता है—उपयोगकर्ता आसानी से अधिक सामान्यीकृत ज्ञान से शुरू कर सकते हैं और अपने प्रश्नों को अधिक विशिष्ट और विस्तृत ज्ञान की ओर लक्षित कर सकते हैं। टैक्सोनॉमी टैग को वर्गीकृत करता है और इस प्रकार जानकारी के लिए ब्राउज करने योग्य स्थान बनाता है जिसे बनाए रखना और विस्तार करना आसान होता है।

4.15 फोल्क्सोनॉमी या लोकोनॉमी Folxonomy and Loconomy

फोल्क्सोनॉमी या लोकोनॉमी एक वर्गीकरण प्रणाली है जिसमें अंतिम उपयोगकर्ता ऑनलाइन वस्तुओं पर सार्वजनिक टैग लागू करते हैं, आमतौर पर उन वस्तुओं को स्वयं या दूसरों के लिए बाद में ढूँढ़ना आसान बनाने के लिए। समय के साथ, यह उन टैगों और उन्हें कितनी बार लागू किया जाता है या खोजा जाता है के आधार पर एक वर्गीकरण प्रणाली को उत्पन्न कर सकता है, टैक्सोनॉमी वर्गीकरण के विपरीत जो सामग्री के मालिकों द्वारा डिजाइन किया जाता है और प्रकाशित होने पर निर्दिष्ट किया जाता है। इस प्रथा को सहयोगी टैगिंग, सामाजिक वर्गीकरण, सामाजिक अनुक्रमण और सामाजिक टैगिंग के रूप में भी जाना जाता है। फोल्क्सोनॉमी मूल रूप से किसी की अपनी पुनर्प्राप्ति के लिए जानकारी की व्यक्तिगत मुक्त टैगिंग का परिणाम है, लेकिन ऑनलाइन साझाकरण और बातचीत ने इसे सहयोगी रूपों में विस्तारित किया। सहयोगी टैगिंग एक खुले ऑनलाइन वातावरण में टैग का अनुप्रयोग है जहाँ अन्य उपयोगकर्ताओं के टैग दूसरों के लिए उपलब्ध हैं। सहयोगी टैगिंग (समूह टैगिंग के रूप में भी जाना जाता है) उपयोगकर्ताओं के एक समूह द्वारा की जाने वाली टैगिंग है। इस प्रकार की लोकोनॉमी आमतौर पर सहकारी और सहयोगी परियोजनाओं; जैसे—अनुसंधान, सामग्री भंडार और सामाजिक बुकमार्किंग में उपयोग की जाती है।

शब्द थॉमस वान्डर वाल द्वारा 2004 में लोक और वर्गीकरण के एक बंदरगाह के रूप में पहचाना गया था। सामाजिक सॉफ्टवेयर अनुप्रयोगों, जैसे सामाजिक बुकमार्किंग और फोटोग्राफ एनोटेशन के रूप में फोल्क्सोनोमी लोकप्रिय हो गए, जो उपयोगकर्ताओं को सामूहिक रूप से वर्गीकृत करने वाले साझा टैग के माध्यम से जानकारी खोजने में सक्षम बनता है। कुछ वेबसाइटों में टैग क्लाउड को लोकोनॉमी में टैग की कल्पना करने के तरीके के रूप में शामिल किया जाता है।

2 शिक्षा, व्यवसाय और उच्च शिक्षा के लिए लोकोनॉमी का उपयोग किया जा सकता है। अधिक ष रूप से, सामाजिक बुकमार्किंग, शिक्षक संसाधन बंडल, ई-लर्निंग सिस्टम, सहयोगी शिक्षा, योगी अनुसंधान, पेशेवर विकास और शिक्षण के लिए लोनॉमी को लागू किया जा सकता है। कपीडिया भी लोकोनॉमी का एक प्रमुख उदाहरण है।

अभ्यास प्रश्न

तिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. डी०डी०डी० (DDD) के 22वें संस्करण के नाम लिखिए।
2. यू०डी०एस० (UDS) के मीडिया संस्करण या परिवर्तन हुए हैं?

नोट-

3. वर्गीकरण प्रणालियों में शोध की महत्त्वपूर्ण प्रवृत्तियाँ बताइए।
4. इंटरनेट संसाधनों के वर्गीकरण की प्रमुख समस्याएँ क्या है?
5. डी०डी०सी० (DDC) की प्रमुख समस्याएँ लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. विशिष्ट वर्गीकरण प्रणाली का प्रयोग बताइए।
2. कोलन क्लासीफिकेशन (CC) के सप्तम संस्करण में प्रयुक्त अंकन बताइए।
3. डी०डी०सी०-22 की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. सी०सी०-7 (CC-7) के अंकन का वर्णन कीजिए।
5. स्विचिंग भाषा क्या होती है? बी०एस०ओ० का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
6. SKOS को संक्षेप में समझाइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. यू०डी०सी० के अंग्रेजी में प्रकाशित तीनों नवीन संस्करणों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
2. यू०डी०सी० के मीडियम संस्करण की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. एल०सी०सी० की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. कोलन वर्गीकरण प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. बी०सी०-5 (BC-5) की संरचना तथा प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
6. इंटरनेट आधारित सूचना के व्यवस्थापन में वर्गीकरण प्रणालियों के उपयोग का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
7. टैक्सोनॉमी पर संक्षिप्त नोट लिखिए।